आसीस

सेवाभावी मुनि श्री चम्पालाल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रस्तुत ग्रन्थ के संपादक-संकलक हैं श्रमण सागर। आप प्रस्तुत कृति के कवयिता के साथ छाया की भांति तीस वर्ष तक रहे और मुनिश्री की पूर्ण चर्या के नियामक, संयोजक और संरक्षक थे। आप स्वयं कवि, इतिहासकार और संस्मरण लेखक हैं। इतिहास की जब आप बातें सुनाते हैं तब सुनने वाले को प्रतीत होने लगता है कि श्रमणजी संभवतः उस समय वहीं थे और घटना को देख रहे थे। पर यह केवल एक आभास ही है। आप जिस भाव-भाषा में सुनाते हैं, वह स्वयं विशिष्ट होती है और श्रोता को घटना से एकात्म कर देती है। प्रखर बुद्धि के धनी श्रमण सागर राजस्थानी और हिन्दी में गीत भी लिखते हैं, जिनका गुंजारव दीर्घकाल तक होता रहता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आसौस

संजय के विवाह के उपलक्ष मे
सह प्रेम भेंट
दिनांक २५-११-१९८८

-शा मांगीलाल शांतीलाल एण्ड कं
शांती भवन, ६४, ए. एम. लेन
चिकपेट, बेंगलोर-५३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदर्श साहित्य संघ प्रकाशन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आसीस

सेवाभावी मुनिश्री चम्पालालजी
'भाईजी महाराज'

संकलक : सम्पादक
श्रमण सागर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

© आदर्श साहित्य संघ, चूरू (राजस्थान)

स्व० मातुश्री पानीबाई एवं स्व० पूज्य पिताश्री भंवरलालजी सकलेचा, राणावास (मारवाड़) की पुण्य स्मृति में उनके सुपुत्र बी० गौतमचन्द, बी० निर्मलकुमार सकलेचा, ७३ सेकेण्ड मेन रोड, बैंगलोर के अर्थ-सौजन्य से प्रकाशित।

प्रकाशक : कमलेश चतुर्वेदी, प्रबंधक—आदर्श साहित्य संघ, चूरू (राजस्थान)/
मूल्य : पचीस रुपये / प्रथम संस्करण, १९८८ / मुद्रक : पवन प्रिंटर्स, दिल्ली-११००३२

AASIS Poetry by Muni Sri Champalalji Rs. 25.00

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओलखाण

कीं अनोखी विशेषतावां रा धणी, सरल सभावी, मोटापुरुष श्री भाईजी महाराज रो जलम, वि० सं० १६६४ मिगसर वद दस्स्यूं नै जोधपुर रियासत रै बड़ै हाथी-वंध ठिकाणै, ख्यात नामै लाडणूं नगर मै हुयो। बांरो असल नांव हो मुनिश्री चम्पालालजी स्वामी। बै आचार्यश्री तुलसी रा संसार लेखै मोटाभाई हा, इं वास्ते सगलाइ जणां बांनै भाईजी महाराज कह्या करता।

बां रो टाबरपण रईसी मै रजवाडी ढंग स्यूं बीत्यो। दादा राजरूपजी खटेड़ रा बै लाडला पोता हा। थोडीक बाणिका-महाजनी हिसाब-किताब पढ़'र बै १४ वर्षा की ओसथा मै बंगाल बेपार सीखण गया। बांरा पिताजी रो नांव झूमरमलजी तथा माजी रो नांव बदनकुंवरदे हो। आप छव भायां मैं, चोथा भाई हा। बांरै तीन बेहनां ही।

दादाजी री हपड़-हपड़ जलती चिता, राणावजी रै कुअै पर भरथै कोठा मै डूबणै री घटणा है'र चेनरूपजी कोठारी री कलकंते में गुंडा-बदमाशा स्यूं हुई मुटभेड़, बांरै वैराग रो कारण बण्यो।

बै १६८१ भादवै लागती तेरस नै तेरापंथ धर्मसंघ रा आठवां आचारज पूजी महाराज श्री कालूगणी हस्ते दीख्या लेर जैन मुनि बण्या। एक वरस पछै आपरै सागी छोटै भाई तुलसी नै संन्यास लेणै री परेरणा करी। बारी संसार लेखै बड़ी बहन साध्वीप्रमुखा लाडांजी तुलसी मुनि रै सागै संसार छोड़'र साधु मारग लियो।

इग्यारह वरसां तांई रात-दिन एक कर'र सावचेती स्यूं तुलसी मुनि री सार संभाल राखी। भाई रै खातर भाई कियां खप्यां करै है श्री भाईजी महाराज एक नजीर धरी। बांरो कठोर आंकस'र आचार-विचार री सावधानी शासण मै नांव कर्‍यो। तुलसी मुनि रै आचारज बण्यां पछै माजी नै दीक्ष्या दिरा'र बै मांरै करजै स्यूं उरण हुया।

गेऊ वरणो रंग, तपूं तपूं करतो लिलाड, मोटी-मोटी लाल डोरैदार आंख्यां, हाथी को सो पैंसो सरीर, हसतो-मुलकतो चेहरो है'र दड़ूकती आवाज देखणियां नै आज भी याद आवै है। जद बै चालता, बांरै हाथ मै सर्प-मुखी गेडियो इसो ओपतो थांनै के बताऊं? बै आपरी लय रा न्यारा ही ओलिया पुरुष हा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिल रा दरियाव, पकड़ रा पक्का, खेचीज्यां पछै खैर रा खूंटा, परायी भीड मैं पड़णिया, सीधा-सादा-सरल, गरीबां रा बेली, करुणा रा अवतार-सा, पूरा प्रभावी पर मिलनसार, कठोर अनुशासक फेर भी दयालू, स्वाभिमानी सागै-सागै विनम्र, पुरातनी लेकिन बगत रा पारखी, अडोल प्राण-प्रणी परन्तु परगतीशील, समरथ होकर भी उदार, मनमोजी-मस्त, आण-बाण-शान और प्रमाण रै साथै ५० वर्षा तांई साधपणो पाल'र वि० सं० २०३२ मिगसर सुद तेरस नै 'धां' गांव मैं (सालासर साहरे) शरीर छोड्यो। बांरो अगनी-संस्कार जैन विश्व भारती लाड़णू मैं १८-१२-१९७५ रै दिन बीस हजार लोगां री साख स्यूं हुयो।

आपरी रीत-नीत'र मर्यादा मैं रै'र बै सैकडां साध-सत्यां री सेवा-चाकरी'र सारणा-वारणा करी। बांरी बच्छलता स्यूं बंध्योड़ा हजारां-हजारां लोग अपणायत जोड़ी। तेरापंथ द्विशताब्दी समारोह पर आचार्यश्री तुलसी आपरै मुखारबिन्द स्यूं बांनै सेवाभावी रो खिताब इनायत कियो।

श्री भाईजी महाराज काव्य रा रसिया, साहित्य रा प्रेमी, विद्या रा उपासी, है'र कला रा सोखीन हा। आप रै खन्है रेवणियां किताइ ऊगता नखतरां (साधुवां) नै मांज्या, साझ्या-संवार्‌या'र उजाल्या। बां मायलो एक नमूनो है युवाचार्य महाप्रज्ञजी।

बै मातृ-भाषा राजस्थानी रा सारां सिरे सपूत हा। बांरी रंगीली, रजमेदार रंगरली बांरा आपरा लिख्योड़ा दूहा-सोरठा मुंडे बोल-बोल'र केहवै है।

जद-जद भी बै परसन चित्त या फेर लेहर मैं होता, जणां दूहा-सोरठा बणाया-लिखाया करता। न्यारी-न्यारी टेमां, न्यारा-न्यारा लिखायोड़ा बां छुट-पुट पदां नै मैं म्हांरी मन-मरजी प्रमाणै छांट-छांट'र न्यारा-न्यारा नावां स्यूं अठै भेलाकर'र मेल्या है। तेरापंथ संघ रा ओपता, दीपता, दीखता'र रलता मिलता जोगीराज श्री भाईजी महाराज री विचारां स्यूं ओलखाण अै पद करासी। जकां मैं अनुभवां रो परिपाक, अलंकारां री झिणकार'र अनुप्रासा री भरमार है। तुकां री जोड़तोड़, बेण सगायां री बोहलता है'र किताक मैं है आदि-अन्त एक ही अक्खर। बांरो शबद भंडार'र रचना सिणगार, कव्यां रो आकर्षण केन्द्र बणसी।

श्री भाईजी महाराज, भाईजी महाराज हा, थांका'र म्हांका, बस आही है स्वर्गीय सेवाभावी मुनिश्री चम्पालालजी स्वामी री ओलखाण।

मैं ३० वर्षा तांई बांरै सागै रह्यो। घणां उतारां-चढ़ावां मैं बांनै उतरतां-चढ़तां देख्या। पण बां जिसी इकतारी, साहस, उदारता, विशालता, भाईचारो'र संघीत भावना विरला मैं ही होसी। बीं जोडी रो दूजो कोइ सन्त ओर हुवै तो मनैइ बतायीज्यो। निमस्कार बीं अनोखै अलवेलै सन्त नै।

वि० सं २०४४, दिवाली, रायपुर मध्यप्रदेश —श्रमण सागर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शरुआद

श्री भाईजी महाराज रै सुरगवास नै हाल पूरा तीन महिनां ही को हुया है नीं। बीं दिन १७ दिसम्बर हो, अर आज कै दिन १५ मार्च है। अबार-अबार गुरुदेव रै दरसणां नै राजस्थान रा वित्तमंत्री चन्दनमलजी बैद आवण वाला है। मैं सुजानगढ़ रामपुरिया-भवन रै पोल परलै अगूणै कमरै मैं बैठ्यो हूं। म्हारै सामैं घणासारा कागज-पतर, ओलिया-परच्या, चींपा-चिमठिया, काप्यां-चोपनियां बिखर्‌या पड़्या है। इत्तै मैं आया सुमेर मुनि 'सुदरसण', बै अवतांइ बोल्या—ओ के अरारो बिखेर राख्यो है आज ? मैं बोल्यो—भाई ! भाईजी महाराज रा दूहा-सोरठा, ढूंढ़-छांट'र एक जग्यां भेला करण री सोच रह्यो हूं।

सुदरसणजी बोल्या—भाईजी म्हाराज के म्हारै स्यूं छाना हा ? बै कदेइ पद्य बणाताइ कोनी हा।

म्हे बातां कर ही रह्या हा। इत्तै मैं लाडणूं स्यूं संतोष बहन—श्रीमती राणमलजी जीरावला—पारमार्थिक शिक्षण संस्था री बैरागण्यां बायां सागै कमरै मैं आ'र बन्दणा करी। मैं जीकारो दियो—'जे राणीजी ! बै बारै गया'र बायां पूछ्यो—आज म्हाराज राणीजी कियांन फरमायो ? बांही पगां बै पाछा कमरै मैं आ'र बोल्या—है ओ ! सागरमलजी स्वामी ! आपनै ठाह है नीं, भाईजी म्हाराज म्हारो नांव राणीजी एक दूहो फरमा'र दियो हो ?

मै कह्यो—हां, सदाई भाईजी म्हाराज राणीजी रै नांव स्यूं ही जीकारो दिरायां करता, पण बो दूहो किस्यो ?

राणीजी केवण लाग्या—म्हाराज ! याद करो, हैदराबाद यात्रा मैं एक दिन मैं आचार्यश्रीजी नै गोचरी पधारणै री अर्ज करी, विमला बाई सागै हा। गुरुदेव नको फरमा दियो। म्हारो मन कोनी मान्यो। आख्यां भरीजगी। मैं भाईजी महाराज ने अरज करी। बै दयालू पुरुष हा। फरमायो, बेराजी क्यूं हुवो। पाछा पधारवाद्यो। भाईजी महाराज थोड़ा सा'क पेहली पधार'र पग थाम्या। जद आचार्यश्री को पधरावणो हुयो तौ मोटापुरुष एक दूहो फरमा'र अर्ज करी। बो दूहो मनै हाल बीयां को बीयां याद है—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रांणा-रांणी रंग स्यूं, साझै सद्‌गुरु सेव।
साथै बिमला सेठिया, महर करो गुरुदेव ।।

सुणतां-सुणतां बींइ टेम गुरुदेव गोचरी पधारग्या। बींपछै सदाई मोटा पुरुष मनै राणीजी ! राणीजी ! ही फरमाता रह्या।

मै सगलां रै सामैइ सुदरसण मुनि नै कह्यो—ओल्योजी ! एक जींवतो जागतो मुंडैमूंड प्रमाण। अबै बालो ! भाईजी म्हाराज दूहा वणावता हा'क कोनी ? संस्था री बायां खड़ी खड़ी म्हारै मुंहडै कानी देखण लाग्गी।

राणीजी रै कह्योड़ै बीं दूहै नै मै बींटेमई लिख्यो'र बोल्यो—सुदरसणजी ! एक कै, इयाकला के ठा किताइ दूहा मिलसी, जद ओ संग्रह त्यार होसी। आज रै इं प्रसंग स्यूं ही बींरी शरुआद करणै रा म्हारा भाव है।

सुदरसण मुनि मानग्या। हाथोहाथ बोल्या—पण म्हांस्यूं आ बात छांनी कियां रही ?

मै दूहा-सोरठा भेला कर्‌यां जा रह्यो हो। राजलदेसर वाला सोहनलालजी चंडालिया आया। बात चाली। बै बोल्या—एक कोपी भाईजी महाराज रै दूहारी म्हारै कन्हैइ धार्‌योड़ी पड़ी है। वि० सं० २०१५, २०१६, २०१७ मै जद जद मनै सेवा रो मोको मिल्यो, मै दूहा धार्‌या हा। कोपी आई। देखी तो दो सौ दूहा-सोरठा मिल्या। बै प्राय प्राय संत वसन्त रा संकलित हा। मै बींमांयलो **'श्रावक-शतक'** हो ज्यूं को ज्यूं सोरठा मै ही राख्यो। दूसरै 'सागर-शतक' रा दूहा 'पंचक बत्तीसी' मै आयग्या।

पंचक बत्तीसी—वि० सं० २००५ स्यूं १४ तांई को संग्रह है। टेम टेम पर मनै (श्रमण सागर) फरमायोडी 'सीख'आशीष बत्तीसी बणगी।

मुनि गुलाबचन्दजी भाईजी महाराज रा अपणा वंशज है। छोटै भाई रो बेटो, बेटोइ हुवै है। **गुलाब गुणचालीसी** वि० सं० २०२२ की है। इं मै कुल परम्परागत उदारता, विशालता, विवेक, बडप्पण है'र ठीमरता बढ़ाणै रै सागै-सागै अकड़-पकड़ छाती रो ठड्डो'र बादाबादी छोड़ण री बावै-बेटै बिचै सलासूत हुई सी लागै।

खुदरा निजी अनुभव, चेतना री चोकसी, साधना री सुगन्ध, भीतरलै नै भेदण री अटकल, ककारादि ककारान्त दूहा मै—**परमारथ पावड्यां** पढ़तां जी सोरो हुवै।

जद दूजो कोई नहीं लाधतो, जणां मै ही धक्कै चढ़तो। गलती करतो कोई, झाड़ो लागतो म्हारै। **'श्रमण बावनी'** रो पात्र मै हूं। बस इंरोइ नांव किरपा है।

सरड़का सोहली मै मुनि मणिलालजी रो विश्वास'र परतीत बोलै है। आ सोहली वि० सं० २०२८ सरदारशहर मै एक खास मोकै पर लिखीजी।

शान्ति सिखावणी वि० सं० २०२६ सुजानगढ़ मै सरू हुई शान्ति मुनि रै मिष

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ नया साधा नैं हिदायत ही।

'साधक शतक' हिसार'र दिली प्रवास विचै पच्चीसवीं महावीर निर्वाण शताब्दी री देण है। वर्णमाला रै हर अक्खर पर तीन-तीन सोरठा, मांय-मांय योग-साधना रा निजी अनुभव बोलै है।

शिक्षा सुमरणी आतमारी उवाज है। वि० सं० २०३२ जैपुर में पूरी करी। न्यारी न्यारी वगत, टेम-टेम रा भाव, उतारां-चढ़ावां री धूप-छियां में नीसेड़ी लुकती-छिपती बातां, पढ़्यां-सुण्यां ठा पड़ै।

बाकी रह्योड़ा सगला दूहा **'फुटकर फूल'** बण'र खिलग्या। **'यादगारां'** कुछ संता-श्रावकां रै जाणै पर बणी।

'पद्यात्मक पत्र' आता-जाता साध-सत्यां सागै कागद लिखण रो मोको तो पड़तोइ पड़तो। कोई कागद दूहा सोरठा मैं लिखाया। बां मैं मैं भेलो बैठ्यो।

संस्मरण पदावली मनै सांस्यूं रुचती, चोखी, चरपरी, फुरकती-फडकती रंगदार'र रसीली लागी। इं वास्ते मै म्हांरी जाणकारी मुताबिक, कीं बीत्योड़ी, कीं आंख्या देख्योड़ी, बाकी की सुण्योड़ी बातां हिन्दी मैं लिख'र पोथी रै लारै दे दी है।

असल बात स्यूं आ पोथी शुरू हुवै है। श्री भाईजी महाराज आपरै मन री बात कव्या सामै मेली है। आ तो मै मान'र चालूं, भाईजी महाराज कवि कोनी हा (बांरा सबदा मै) पण काव्य रसिक हा, कविता रा पारखी हा। सैकड़ां दूहा-सोरठा-छन्द-कवित्त बां रै कंठां हा। बै कव्या नै चाहता हा। कविराजा नै मान देता हा। मन री आह कदेइ-कदेई बांरै दूहा-सोरठां में बारै आती ही।

बीं मन री आह, चाह'र मान-तान सागै, आ पोथी (आसीस) कवि-कुल-किरीट महामना आचार्यश्री तुलसी (भाईजी महाराज रा अनुज) रै चरणां मै, तथा गणपति स्वरूप जोगीराज युवाचार्य महाप्रज्ञजी महाराज—जका १५ वर्षा तांई लगोलग भाईजी महाराज रै संरक्षण मै रह्या, बेठ्या। आपरै जीवन रो दूसरो पड़ाव सागै-सागै पार कर्यो—बांरै लम्बा हाथां मै निजर करूं।

एकर भाईजी महाराज दुकड्यां, तिकड्यां और चोकड़ियां लिखणै रो मन भी कर्यो हो। थोडाक अधूरा पद्य हाल भी म्हारै कनै लिख्योड़ा पड्या है।

कुल मिलार इं 'आसीस' मै गहरा अर्थ स्यूं भर्योड़ा, अनुप्रासां स्यूं सद्ध्योड़ा, भावां स्यूं भींज्योड़ा, लक्ष्यभेदी तीरिया सा (११७०) अंदाज दूहा-सोरठा-छन्द है।

खाटै मीठै, खारै'र चरपरै इ संग्रह मैं मुनि मणिलालजी रो बचन अगोचर सहारो सरायां बिनां मन कोनी मानै। मुनि मोहनलालजी 'आमेट' बार-बार ताना मार-मार'र प्रेरणा करता रह्या। मुनि दुलहराजजी रो कै आभार मानूं। बै तो भाईजी महाराज रा अनन्य विश्वासपात्र हा। बै ईं पोथी मैं आपरा श्रम-बिन्दु जोड'र आपरो फरज निभायो है। मोडो बेगो कियांलइ मानो, आ पोथी हाजर है। दोष

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सगलो म्हारै पल्लै'र, चोखी लागै जकी चीज आपरी।

शुरुआद समेटतां समेटतां बां सां भाई बन्धुवा स्यूं एक बार खमत-खामणा। जकां वास्तै इं पोथी मैं करडो काठो, कहण-सुणण, लिखण-बांचण मैं आसी। सवा हाथ रो काल जो कर'र बै सन्त महातमा इं नैं विनोद, मन री टीस या हितकारी सीख मान'र खमसी। इं आस मैं

'श्रमण सागर'
२०४४ दीवाली
रायपुर, मध्य प्रदेश

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दो बोल

भाईजी महाराज आपरी एड़ी स्यूं चोटी तांईं हीयो ही हीयो हा। बां री हृत्-तंत्री रा तार इत्ता कस्योड़ा हा कै जरा-सो हिलको लागतां ही झणझणाण लाग जाता। बै कोई री आंख्यां मैं आंसू कोनी देखणै सगता। जे देखता तो बां रो हाथ बां आंसवां नै पूंछण सारू उठ्यां बिना को रैवंतो नीं। इंयालकै मोम जियांलकै मुलायम चित्त रो मिनख कवी नई होवै तो फेर कै बै। बेदरदी ढ़ांढ़ा कवी होसी जकां रै कालजै मैं विधाता दिल री जग्यां एक मोटो सो भाटो रख दिया करै। बै तेरापंथ रै युगप्रधान आचार्य तुलसी रा बड़भाई हा। ईं कारण लोग बान्नै 'भाईजी महाराज' कैंवता। पण आ पदवी बान्नै कोई बगसीस मैं को मिली ही नी। लोग आपरी मनमरजी स्यूं ही बान्नै पूजता अर बां रै चरणां मैं आपरो सिर नंवाता। जको आदमी जित्तो दुखी अर दबेड़ो होवंतो बो बां रै बित्तो ही नेड़ो हो जांवतो। बां री अणमाप अपणायत रै कारण लोग बां रै आगै आपरी निजू स्यूं निजू बात कहणै मैं भी संकोच को करता नीं। बां रै हाथ मैं कोई भामाशाह री थैली को ही नी' जकी रो मूंडो खोल-खोल बै गरजी री गरज सार देवंता। बां खनै कोई हाकमी भी को ही नी जकै रै जोर स्यूं आगलै रो वारो-न्यारो कर देवंता। पण, बां रो हीयो इत्तो हमदरदी स्यूं भरेड़ो हो कै बीं मैं हरेक नै आप आप रै दरद री दवा मिल जांवती।

लोग भाईजी महाराज रै खनै हार्‌या-थक्या आंवता पण बांरी बच्छलता रै वड़लै री ठण्डी छायां मैं बैठतां ही बां रै अंग-अंग मैं उमंग री नूंवी तरंग दौड़ण लाग जांवती। बै घणा लूंठा विद्वान को हा नी, बड़ा भारी तपस्वी भी कोनी हा, बां स्यूं बड़ा ग्यानी-ध्यानी भी बहोत देखणै मैं आवै, पण आ कह्यां बिना को रह सकां नी कै बां जियालकां तो बै ही हा। आपरी आखी उमर बै कोई नै तोड़णै री नईं, जोड़नै री ही चेष्टा करी। बै सदा सुई री जियां सीणै रो ई काम कर्‌यो, कतरणी री जियां काटणै-छांटणै री कोशीश को करी नी। बै लोगां रै बीच आएड़ै आंतरै नै पाटणै री खातर पुल ही बणाया, कदे ई कोई खाई को खोदी नी। बां रो तो ओ एक ही मन्तर हो :

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गिरतोड़ै नै थाम'र चम्पा, चेप टूटतोड़ै नै,
फूंक दूखतै फोड़ै रै दे, सींच सूखतोड़ै नै ।।

आप रै आखरी सांस ताईं बै रोवतां नै हंसाया, टूटेडा नै सांध्या, आथड़ेड्या नै हाथ रो स्हारो देय देय ऊभा कर्‌या अर बिछड़ेड़ा नैं पाछा मिलाया। मिनख पणै री ऊंचाई, दिल री गैराई अर हिवड़ै री कंवलाई रो ई दूसरो नांव हो—'भाईजी महाराज'।

भाईजी महाराज खाली कंवला ही कंवला को हा नी। आपरो नेम-धरम निभाणै मैं बै घणा। करड़ा भी हा। बै आप रै गण अर गणी री सदा जागरूकता स्यूं आराधना करी। 'गलै सुदी गण मैं गड्यो रह 'चम्पक' पग रोप'—ओ बांको करार हो। पूज्य कालूगणी रो आप पर इत्तो पतियारो हो कै बै आपरै मनचींत्या युवराज री सारणा-वारणा रो काम आपनै ही सूंप्यो। मुनि तुलसी रै ग्यारै बरसां रै खिण खिण रा आप पैरेदार रह्या। जद संसार लेखे छोटो भाई गुरु री गिद्दी पर बैठ ग्यो तो आप पूरी भगती स्यूं बांरी आराधना करी। बां रै पोढ़ायां पैली आपरी आंख्यां मैं कदेई नींद कोनी घुलण दी, बान्नै आहार करायां बिना आप रै मूं मैं अन्न रो दाणों को घाल्यो नी। बै ईं बात री पूरी ख्यांत राखी कै कोई श्रावक आचार्य तुलसी रै चरणां मै आय नै आपरै रूं रूं स्यूं राजी होयां बिना नईं जावै। संघ में कोई साध रै असाता हो जांवती तो आप बीं रै तन-मन री सेवा साधणै मै कीं उठा'र को राखता नीं। बै ग्लान साधवां री चित्तसमाधि रै खातर बांटा भाई, बैद'र सेवक—सो कीं बण जांवता। 'सेवाभावी' विरद नै सारथक करणियो इयांलको पर उपकारी मिनख धरती पर कोई बिरलो ही आवै।

'आसीस' मैं भाईजी महाराज रा घणा मरजीदान सन्त 'सागर-श्रमण' बांरा कह्योड़ा दूवां, सोरठां अर कवितावां रो संग्रै कर्‌यो है। भाईजी महाराज आपनै कवी कोनी मानता, बै कविता लिखणं सारू कविता लिखी भी कोनी। मन में कोई लैर आंवती तो बा शब्दां रै सांचै मैं ढ़ल-ढ़ल कविता रो रूप ले लेंवती। कविता लिखणो कोई कवयां रो काम ही कोनी—

घुड़दौड़ मैं तो
सगलाइ घोड़ा दोड़ै
दौड़े जकां मै, कै सगलाइ ओड़ै-जोड़ै
कोई बछेड़ियो सारै कर सरपट नीसरे
जद
बूढ़े को भी मन बढ़ जावै
जोस चढ़ जावै ।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो भाई जी महाराज देख्यो कै एक नूं ओ पंखेरू पंख फड़-फड़ा'र उडणो चावै पण उड-उड'र पाछो पड़ जावै । पण, बो के निरास हो'र उडणो छोड़ देवै । तो फेर—

मैं भी गुणमणाऊं
उडणो चावूं
अक्खर भेला करूं
उकलत तो आप आप री है
थां जिसी कविता कठैऊं ल्यावूं

जद कदेई हीये री हूंस स्यूं भाईजी महाराज रै मन रो मोरियो नाचतो तो बै कविता बणावता या कविता आपेई बण जांवती ।

कवि कोनी, पण कवियां रै बिच मैं ऊठूं-बैठूं,
कविता रा खरड़ा'र खलीता, खोलूं और लपेटूं ।।

आ तो बांरी नरमाई है कै बै आ केवै कै मैं कवयां रै सागै ऊठूं-बैठूं ईं कारण कवी बणग्यो । साची बात तो आ है कै बांरै खन्नै उठण-बैठण रै जोग स्यूं ही केई कवयां री स्रेणी मैं आपरो नांव लिखा लियो । आं दो ओल्यां मैं भाईजी महाराज आपरै कवी नईं होणै री दुहाई दी है, पण कुण कै सकै है कै आ कविता कोनी ?

छन्द न जाणूं, बन्ध न जाणूं, सन्ध न जाणूं भाई ।
तिणखो-तिणखो जोड़ मसां सी, एक छानड़ी छाई ।।

आ बात सही है कै बै कवयां री पांत मैं नांव लिखाणै री खातर कविता को लिखी नी, बै एक-एक सबद नै अंगूठी मैं नग री जियां आपरी कविता में जड्यो कोनी, अर मात्रा गिण-गिण'र छंद रै बंध नै पूरो को कर्‌यो नी । फर भी बै कवी हा । क्यूं कै :

कवि कोई भाटो थोड़ोई है जको घड़'र बिठाद्यो,
कविता बणाई कोनी जावै बा तो आपेई बणै है ।

'आसीस' री कवितावां भाईजी महाराज रै दिल रो दरपण है । आ कवितावां मैं एक साधक री गैरी अन्तरदिष्टी अर तत्व री ऊंडी ओलखाण है पण ग्यान री गूढ़ बातां भी अन्तर रस री मीठी चासणी मैं पगेड़ी है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्म-भोग समभाव स्यूं, आली कर मत आंख।
चम्पा ! बांध्या चीकणा, रोवै क्यूं बण रांक ।।

जैन धरम मैं संयम री साधना, वीरभाव री साधना है, ईं करण ही 'वर्द्धमान' रो नांव 'महावीर' पड्यो। संवेदना रा धनी 'चंपक' मुनि रो हीयो दुखी'र दरदी रै खातर फूल जियांलको कंवलो हो तो आपरै करम रूपी वैरी स्यूं लड़ण नै बजर जिसो कठोर भी हो।

तप तीखी तरवार करम कटक स्यूं जुध करण।
मरण सुकृत भण्डार, सगती साहमो श्रावकां !

बां रै खातर कविता आपरै चित्त नै चेतावणै'र निरन्तर जागतो राखणै रो एक हथियार हो। अर बै आपरी संयम साधना मैं ईं रो घणो सांतरो उपयोग कर्‌यो है—

औरां को ऐश्वर्य सुख, झांक रांक मत रींक,
करणी करता क्यूं तनै, आवै 'चम्पा' छींक ?
कै ठा कुण सै जलम रा, शेष भोगणा भोग ?
'चम्पा' चुकै उधार, क्यूं बिलखो देख विजोग ?

राजस्थानी साहित्य मैं सम्बोधन काव्य री एक लम्बी परंपरा रैई है। कवी जो बात कैणी चावै, बा आपरै कोई मर्जीदान रो नांव लेय नै कहवै। जका दोहा-सोरठा आपां राजिया रा कहेड़ा समझा हां, बै असल मैं कृपाराम बारहठ रा राजिया रो नांव लें'र कहेड़ा है। चकरिया, नाथिया, मोतिया रै दूहा-सोरठां रो भी ओ ई हाल है। भाईजी महाराज भी केई सन्तां रै सम्बोधन स्यूं दूहा-सोरठा कह्य नै राजस्थानी सम्बोधन काव्य री परंपरा नै आगै बढ़ाई है।

भाईजी महाराज री कवितावां मै भाव री ही प्रधानता है, पण भाषा रै निखार अर सबदां रै जड़ाव री निजर स्यूं देखां तो भी 'आसीस' री कवितावां आपरो घणो मोल राखै। मुक्त छन्द रो प्रयोग तो बै घणो सांतरो कर्‌यो है। चालू मुहावरां रो प्रयोग आप मोकले रूप में कर्‌यो है। कठै-कठेई तो मुहावरां रै माध्यम स्यूं जुग री असंग्त्यां रो जीतो-जागतो चितराम खैंच दियो है—

डोको फाड़ै डांग नै, तिल ले चाल्यो ताड़।
'चंपक' छिपग्यो छोकरां ! राई ओलै पहाड़ ।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'आसीस' री सगली कवितावां एक सारीखी कोनी। केई कवितावां मैं भावां री रमझोल है तो केयां मैं दवायां रा नुस्खा भी बताया गया है। केई कवितावां मैं घटनावां री साख भरी जी है तो केयां मै साधां'र श्रावकां रा गुण गाईज्या है। कवी आपरै जीवण री घटनावां रो लेखो-जोखो भी आं कवितावां रै जरियै पेश कर्‌यो है। केई कवितावां रो स्तर घणो ऊंचो है तो केई मामूली दरजै री भी है। न्यारी-न्यारी बानगी री न्यारी-न्यारी कवितावां है। आं नै बांच'र आ लागै कै आपां भाईजी महाराज रै चरणां मै बैठ'र बां री वाणी री परसादी पा रैया हां।

ई पोथी रै अंत मै जो 'संस्मरण पदावली' है, बीं में आयोडा सारा संस्मरण हिन्दी भाषा में लारै दीयोडा है। बैं सारा भाईजी महाराज रै जीवण स्यूं जुडियोडा है। बांनै पढतां-पढ़तां सारी घटरावां साख्यात रजरां रे सामने नाचणनै लाग ज्यावै। आ है यां री विशेषता।

'श्रमण-सागर' पर भाईजी महाराज री घणी मरजी ही। बै आपरै मन री बात आन्नै कैंबता। बै 'आसीस' रै रूप मै भाईजी महाराज री वाणी रो संग्रै कर बीं ठाई थरपणा करणै रो जस लियो है। मै बां रो उपकार मानूं कै बै मन्नै भी बीं पुण्य-पुरुष री याद मै दो सबद लिखणै रो मौको दियो।

—डॉ० मूलचन्द सेठिया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुरो वाक्

युवाचार्य महाप्रज्ञजी ने एक बार लिखा था—'संकलन के लिए सब नहीं लिखा जाता, पर जो लिखा जाता है उसका संकलन हो जाता है। मनुष्य चिरकाल से संग्रह का प्रेमी है। वह बिखरे को बटोर लेता है और फूलों की माला बना देता है।'

'मालाकार की अंगुलियों में कला है। वह धागों में फूलों को गूंथ कलाकार बन जाता है। कला तरु में नहीं होती, उसके पास कोरे फूल होते हैं। कलाकार होता है माली। तरु संग्रह करना नहीं जानता। उसे स्वार्थी लोग भलां कलाकार कैसे मानें ? मालाकार संग्रह करने में पटु होता है और वह सहज ही कलाकार बन जाता है।'

चम्पक वृक्ष वसन्त में पुष्पित होता है और सुगंधित फूल देता है। उसकी सुवास से सारा वन-निकुंज सुरभित हो जाता है। वन-निकुंज में सारे वृक्ष पुष्पदायी नहीं होते। जो पुष्पदायी होते हैं, उन सबके पुष्प सुवास देने वाले नहीं होते। सुरभि बिखेरने वाले कुछेक पुष्प ही होते हैं। उन पुष्पों की सुरभि से वह सब कुछ महक उठता है, जो अल्प सुरभिमय या असुरभिमय भी क्यों न हो। सौरभ वही बिखेर सकता है जो स्वयं सुरभित हो। असुरभित कभी सौरभ नहीं बिखेर सकता।

एक संस्कृत कवि ने कहा है—

'निसर्गादारामे तरुकुलसमारोपसुकृती।
कृती मालाकारो बकुलमपि कुत्रापि निदधे।।
इदं को जानीते यदिदमिह कोणान्तरगतो।
जगज्जालं कर्त्ता सुरभिभरसौरभ्रभरितम्।।

एक कुशल माली वन-निकुंज के निर्माण में लगा था। वह यत्र-तत्र भिन्न-भिन्न प्रकार के वृक्ष लगा रहा था। उसकी पौध-श्रेणी में बकुल वृक्ष का पौधा भी था। उसने उसकी उपेक्षा कर उसे एक कोने में डाल दिया। वन-निकुंज पुष्पित वृक्षों से शोभित हुआ। सुवास फैलने लगी। सारा वन-निकुंज बकुल की सुगंध से महक उठा। खोज की। कोने में पड़ा बकुल अपनी स्वयं की पहचान दे रहा था। उसकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सौरभ के समक्ष सारे सौरभ फीके थे।

मुनि चम्पक इसी बकुल वृक्ष की भांति थे। उनमें स्वपुरुषार्थ से अर्जित और संचित वह सुरभि थी, जो सारे वातावरण को सुरभिमय बना देती थी। उस सुरभि का एक घटक था—सहयोग, उपकृति। उनका पुरुषार्थ दूसरे के सहयोग में सदा प्रज्वलित रहता था। वे सहयोग देते, पर जताते नहीं। सहयोग देना उनका सहकर्म था। वे इसे कर्त्तव्य की श्रेणी का कर्म मानते थे और जो भी सहयोग की आकांक्षा करता, वह उसे मिल जाता और यदा-कदा अनाकांक्षित व्यक्ति को भी इनका सहयोग उबार लेता।

वे संवेदनशील थे। जिसका मन संवेदना से जितना भरा होता है अनुभूति उतनी ही तीव्र होती है। जब व्यक्ति इन अनुभूतियों को शब्दों में उतारता है तब वह काव्य बन जाता है और व्यक्ति कवि बन जाता है। जिसमें अनुभूति की तीव्रता नहीं होती, वह अच्छा कवि नहीं होता। कांच जितना स्वच्छ होता है, उतना ही स्वच्छ होता है प्रतिबिम्ब। यही प्रतिबिम्ब बिम्ब की अनुभूति कराता है और व्यक्ति को उससे एकात्म बना देता है। भाईजी महाराज संवेदनशील थे। उनकी इस संवेदना ने उनको मृदु, सरस और उन्मुक्त बनाया। वे बालकों में बालक, तरुणों में तरुण और बूढ़ों में बूढ़े बन जाते। हृदय निश्छल और पारदर्शी था। प्रत्येक व्यक्ति उसमें अपना प्रतिबिम्ब देखकर अपनत्व की कारा का बंदी बन जाता था। फिर 'मैं' और 'वह' की दूरी समाप्त हो जाती और तादात्म्य की अनुस्यूति गाढ़ बन जाती।

आदमी बाह्य जगत् में विहरण करता है। अनेक परिस्थितियों और घटनाओं के बीच से वह गुजरता है। उनमें से जो घटनाएं हृदय को खींच लेती हैं, व्यक्ति उनसे तादात्म्य स्थापित कर अपनी अनुभूतियों को शब्दों का परिधान देता है और वे काव्य के माध्यम से बाह्य जगत् में फैल जाती हैं। जब अन्यान्य व्यक्ति उन अनुभूतियों को शब्दों के परिधान में देखता है, तब उसे अपनी जैसी ही अनुभूतियों का परिवेश स्मृति-पटल पर अंकित-सा नजर आता है और तब वह उनसे अभिभूत हो जाता है। एक की अनुभूति लाखों-करोड़ों की अनुभूतियों को ताजा कर जाती है। यही है काव्य और यही है काव्य की सार्थकता।

चम्पक मुनि ने जीवन में अनेक आरोह-अवरोह देखे हैं। इस उतार-चढ़ाव में जो-जो अनुभूतियां हुईं, उनको यदा-कदा उन्होंने शब्द-बद्ध किया और जब उनको गुनगुनाया, वे लिपि की कारा में आबद्ध हो गईं।

मैं नहीं मानता कि मुनिश्री जन्मजात कवि थे। कविता उनका कर्म नहीं था। पर वे काव्य-रसिक अवश्य थे। आचार्यश्री तुलसी के पट्टोत्सव पर, आचार्य भिक्षु के चरमोत्सव तथा माघ महोत्सव आदि विशेष उत्सवों पर आपकी गीतिकाएं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रस्तुत होतीं। आप स्वयं उनका संगान करते। अन्यान्य मुनिगण आपके स्वरों का साथ देते और तब सारा वातावरण संगानमय हो गाता। उसकी प्रतिध्वनि लंबे समय तक गूंजती रहती और उस प्रतिध्वनि की प्रतिध्वनियां अन्यत्र-सर्वत्र शब्दायित रहतीं। यह सब उन गीतिकाओं की सरसता, सहज-सरल शब्द-परिधान, लय की सुगमता आदि तत्त्व ही मुख्य कारण बनते थे। संगान को जानने वाला या नहीं जानने वाला, पढ़ा-लिखा या अनपढ़—सभी उसको गुनगुनाते हुए देखे जाते। यही उनकी सार्वजनिकता थी।

कवि ने स्वयं लिखा है—

'मैं कवि कोनी, पण कवियां रै बिच ऊठूं बैठूं।
कविता रा खरडा'रु खलीता खोलूं और लपेटूं।।
भावां री छोलां मैं फिर-फिर लिखूं समेटूं गेटूं।
शब्दां री तलपेटी-ढेर, उधेड़-उधेड़ पलेटूं।।'

'छन्द न जाणूं बन्ध न जाणूं सन्ध न जाणूं भाई।
तिणखो तिणखो जोड़, मंसा-सी एक छानड़ी छाई।।
'चम्पक' नूआं जूनां भवियां-कवियां हिये हार-सी।
आतम दरसण करण बणैला आ 'आसीस' आरसी।।'

जब अनुभूति का सोता फूटता है, तब एक हृदय की अनुभूति अगणित हृदयों की अनुभूति बन जाती है। यह कोई विस्मय की बात नहीं है। व्यक्ति-व्यक्ति का जीवन पृथक्-पृथक् होते हुए भी, जीवन की कुछेक भूमिकाएं समान होती हैं। उनमें अनुभूति की समानता स्वाभाविक है। समान अनुभूति में एक व्यक्ति दूसरे से जुड़ जाता है।

प्रस्तुत कृति 'आसीस' ऐसी ही अनुभूतियों का खजाना है। देश, काल और वातावरण के व्यवधान के साथ-साथ उनमें अभिव्यक्ति की भिन्नता अवश्य आ जाती है, पर उनकी चुभन वैसी की वैसी बनी रहती है। वह चुभन ही इस कृति की विशेषता है। प्राचीन कवि ने कहा—वह क्या बाण का प्रहार जिसके लगने पर योद्धा सिर न धुने और वह क्या काव्य जिसके शब्द-श्रवण से सिर न हिले। आपने लिखा—

'रतन रती'रू रबाब, ठीमरता स्यूं ठहरसी।
खेमो करै खराब, रिकटोल्यां में मूलजी।।
मिनख मतै मोती मिणै, नैण निवाणां-नीर।
रुलपट री के दूलजी, चम्पक लैण लकीर।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'कवि बण, पण…' शीर्षक के अन्तर्गत मुनिश्री ने कवियों को सावधान करते हुए एक रहस्य को उद्घाटित किया है। राजस्थान में यह तथ्य प्रचलित है कि कवि को अक्षर-विन्यास करते समय पूरी सावधानी बरतनी चाहिए। यदि कहीं 'दग्धाक्षर' का प्रयोग हो जाए तो कवि का सर्वनाश हो जाता है। इसलिए कवयिता निरंतर इससे बचने का प्रयत्न करता है। पर सारे कवि इस तथ्य को नहीं जानते कि कौन-कौन से अक्षर दग्धाक्षर होते हैं। एक सेवक था नागौर में। वह तुकबंदी करता था। एक बार उसने कविता लिखी और अन्त में उसने अपना नाम लिखकर 'नागो रमे' इस प्रकार अपने गांव का नाम लिखा। वास्तव में उसको लिखना चाहिए था—'नागोर में' पर प्रमाद के कारण लिख डाला—'नागो रमे'। कुछ ही वर्ष बीते। वह पागल हो गया और गांव में 'नागा' (नग्न) घूमने लगा। 'नागो रमे' का अर्थ यही होता है—नग्न घूमना। उसकी वही हालत हो गई। 'आसीस' के कवि इस तथ्य से परिचित हैं और वे सभी कवियों को सावधान करते हुए कविता को कौन-कौन से अक्षरों से प्रारंभ नहीं करना चाहिए, उसका अवबोध देते हैं। उन्होंने लिखा है—

राख आदि में 'झ भ ह र ष' शुरू न करणो छंद।
सुण सागर! 'अ ज म न क' पर, मत कर लेखण बंद।।

'आसीस' के कवि कवि की करामात से पूर्ण परिचित हैं। वे जानते हैं कि कवि सर्वत्र आनन्द की अनुभूति करने में दक्ष होता है। वह निराशा और आशा मान और अपमान, सुख और दुःख—सर्वत्र आनंद खोज निकालता है, प्रकाश पा लेता है।

कवि और दार्शनिक—दोनों दो भूमिकाओं पर कार्य करते हैं। दोनों का उद्देश्य एक है—सत्य की खोज। पर दोनों की अनुभूति में रात-दिन का अन्तर है इसी को समझाने के लिए महाप्रज्ञ का कवि-हृदय कह उठता है—

'आनन्दस्तव रोदनेऽपि सुकवे! मे नास्ति तद् व्याकृतौ,
दृष्टिर्दार्शनिकस्य संप्रवदतो जाता समस्यामयी।
किं सत्यं त्विवितिचिन्तया हृतमते! क्वानन्दवार्ता तव,
तत् सत्यं मम यत्र नन्दति मनो नैका हि भूरावयोः।।'

दार्शनिक कहता है—कवि! तेरे रुदन में भी आनंद है। मैं आनंद की अभिव्यक्ति देता हूं, पर आनंद को भोगता नहीं। ज्यों-ज्यों मैं आनंद की अवस्थाओं के वर्णन में डूबता-उतरता हूं तब-तब मैं और अधिक उलझ जाता हूं। उलझन में कैसा आनंद! कवि कह उठता है—अरे दार्शनिक! तू निरंतर इसी रटन में रहता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है कि सत्य क्या है ? सत्य क्या है ? यह भी सत्य नहीं है। वह भी सत्य नहीं है। पर मैं उस सत्य की खोज में उलझता नहीं। उसे ही सत्य मानता हूं जहां मेरा मन लग जाता है, प्रफुल्लित और मुदित हो जाता है। यही तेरे और मेरे में अन्तर है।

आसीस के कवि की अभिव्यंजना है—

करामात कवि री किती, कहूं कल्पनातीत।
सागर झलकै, गिरि गलै, जद कवि गावै गीत।।

कवि री छवि-सी कल्पना, रवि-सो कवि उद्योत।
नवि पवि सागर! अनुभवी, कवि झगमगती जोत।।

कवि जन्मना भी होता है और अभ्यास से भी बनता है। अभ्यास में श्रम, अध्यवसाय, एकनिष्ठा और सातत्य आवश्यक होता है। सब ऐसा करना नहीं चाहते। वे अलस व्यक्ति कवि बनने के लिए नहीं, कवि कहलाने के लिए दूसरों की कविताओं को इधर-उधर कर अपनी नामांकित कविता बना डालते हैं। वे होते हैं 'कवि-चोर'। आसीस में कितने सहज-सरल ढंग से इसकी अभिव्यक्ति हुई है—

'कविता तोड़ मरोड़कर, करै ओर की ओर।
नांव आपरो चेपदै, 'चंपक'! वो कवि-चोर।।'

कवि की अनुभूति वेधक होती है जब वह अपने परिवेश के प्रतिबिम्ब को आत्मसात् कर आगे बढ़ता है। कवि कहता है—उषा भी फूलती है और सन्ध्या भी फूलती है, किन्तु दोनों के फूलने में अन्तर है। दोनों की निष्पत्ति भिन्न है। उसमें आकाश-पाताल का अन्तर है। उषा दिन लाती है और सन्ध्या रात। एक उजाला लाती है और एक अंधेरा।

सन्ध्या और प्रभात, फूलण फूलण में फरक।
ल्यावै दिन इक रात, 'चंपक' चिन्हे चिन्ह श्रमण !।।

शासन और अनुशासन—ये दो शब्द हैं। शासन एक परंपरा का बोध देता है। वह साधना से उपजता है, तब उसमें से अनुशासन निकलता है। व्यक्ति बड़ा नहीं होता। शासन बड़ा होता है, परंपरा बड़ी होती है। शासन वसुन्धरा है। सारे रत्न उसी में से निकलते हैं। तेरापंथ एक धर्म-शासन है। उसके विकास में साधना और तपस्या का तेज काम करता रहा है। जो शासन के प्रति समर्पित रहता है, वह सत्य और अहिंसा के प्रति समर्पित है, त्रिरत्न की साधना के प्रति समर्पित है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शासन की व्याख्या कर कवि ने अपने शासन-प्रेम को अभिव्यक्ति दी है—

शासण सुरतरु सुखकरु, सिद्धिसौध सोपान।
'चंपक' शासण ध्यानणो, आन-मान-सम्मान ।।

शासण शीतल छांवली, अणाधार आचार।
'चंपक' शासण चेतना, हरण पाप हरिद्वार ।।

शासण दुर्लभ देवरो, शासण पूजा-पाठ।
शासण रै परताप ही, 'चंपक' सगला ठाठ ।।

मानसरोवर मलयगिरि, मख-मयूख-मोहार।
मंगलमय शासण मुदित, 'चंपक' चरण पखार ।।

शासन को अपना सर्वस्व मानने वाला व्यक्ति कभी भटकता नहीं। यह उसके लिए रक्षा-कवच और देवालय है जहां अपना प्रभु विराजमान है। शासन की पूजा अपने इष्टदेव की पूजा है और शासन की चेतना कवि की चेतना है, प्रत्येक साधक का चैतन्य है। कवि का शासन-प्रेम इन पद्यों में स्पष्ट रूप से अनुभूत होता है।

अनुप्रास कविता का आभरण है। सभी कवि इसमें निष्णात नहीं होते। कुछेक कवियों की शब्द-संपदा इतनी होती है कि अनुप्रास उनकी कृतियों में सहज-सरल रूप से व्यवहृत होता है। प्रस्तुत कृति के कवि अनुप्रास प्रेमी थे और वे यदा-कदा बातचीत में भी 'अनुप्रास' का प्रयोग सुगमता से कर लेते थे। उनके कुछेक पद्य हैं—

धैर्य बिना कद धर्म, टिकै धिकै थिरकै सिकै।
धर्म बिना कद कर्म, सिरकै छिटकै साधकां ! ।।

ढिगला-ढिगला ढाक, अणगिणती-सा आकड़ा।
श्वेत ढाक अरु आक, साधक बिरला साधकां ! ।।

टक्कर देवै टाल, टूटी जोड़ै टेम पर।
टीस रीस पै ढाल, स्याणो बो ही साधकां ! ।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चटकै जावै चेंट, चींट्या चीणी नै चुंटण।
खारो खरो रु खेंट, सूंघै कोई न साधकां ! ।।

मन स्वभावतः चंचल नहीं है, पर वह बना हुआ है चंचल। उस चंचलता के घटक अनेक हैं। उन्हीं के आधार पर वह नाना-रूप धारण करता है, एक विदूषक-सा बन जाता है। वह कभी राम का अभिनय करता है तो कभी रावण बन जाता है। एक रूप वह रह नहीं सकता, क्योंकि बेचारा दूसरों से संचालित है। उसके बहुरूपियेपन को कवि ने इस प्रकार अभिव्यक्ति दी है—

मन गलतो मन गोमती, मन ही तीरथ-घाट।
मन मन्दिर मन देवता, मन ही पूजा-पाठ ।।

मन गंगा मन गंदगी, मन रावण मन राम।
सुरक-नरक पुन-पाप मन, मन उजाड़ मन ग्राम ।।

मन सीता मन सुर्पणा, मन हि कृष्ण मन कंस।
'चंपक' मन योगी-यवन, मन कौओ मन हंस ।।

प्रस्तुत कवित्त में मन को सरल रूपकों से समझाया गया है। उसकी विविधता को समझने में ये प्रतीक बहुत कार्यकर हैं, क्योंकि व्यक्ति-व्यक्ति इनसे परिचित है।

प्रस्तुत कृति के कवि 'सेवाभावी' शब्द से संबोधित होते थे। सेवा उनका परम धर्म था। रुग्ण की सेवा-सुश्रूषा करने में वे सदा तत्पर रहते थे। वे रुग्ण व्यक्ति के नाम-रूप के आधार पर सेवा नहीं, उसकी रुग्णता और वेदना के आधार पर सेवा में संलग्न हो जाते थे। वहां स्व-पर की सारी सीमाएं समाप्त हो जाती थीं। शेष रहता था केवल अनन्त आकाश। रुग्ण व्यक्ति का छोटे से छोटा कार्य करना वे अपना कर्त्तव्य समझते थे। इस सेवा-धर्म ने उनको एक सफल चिकित्सक के रूप में भी प्रतिष्ठित कर दिया था। वे औषधियों के ज्ञान से संपन्न थे। पथ्य की व्यवस्था वे कर लेते थे। उसी औषधि-ज्ञान को वे कितनी सरलता से प्रस्तुत करते हैं।

जब जी मचलता हो तब—

जीवदोरो होवै जरां, दोय लूंग लै चाब।
'चंपक' अन्तर आग आ, रुई मै मत दाब।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इमरत-धारा अधिकतर, सुलभ मिलै सब ठोड़ ।
च्यार बूंद लै क्यूं करै, 'चम्पा' भागा-दौड़ ।।

दांत के दर्द में वे कहते हैं—

दांत दरद ज्यादा करै (तो) हलदी मसलो भाई ।
दाबो कपूर कांकरी (या) हींग सु-सरल दवाई ।।

तीन लूंग नींबू रै रस मैं, पीस दांत पर मसलो ।
दर्द मिटै 'चंपक' हो ज्यावै, झट हल मसलो सगलो ।।

खांसी रोग के लिए—

च्यार पांच कालीमिरच, डली लूंण की न्हांक ।
चाबो पाणी मत पिओ, खांसी जाय चटाक ।।

काव्यात्मक पत्र-लेखन की पद्धति बहुत प्राचीन है । कवि अपना अभिप्रेत काव्य के माध्यम से इष्टजन तक पहुंचाता है । जो पैनापन गद्य में नहीं आता वह पद्य में सहज रूप में आ जाता है । प्रस्तुत संकलन में स्वलिखित अनेक पत्र संकलित हैं, जिनमें अभिव्यक्ति का वैशिष्ट्य स्वतः दृग्गोचर होता है ।

आचार्यश्री तुलसी के साथ मुनि चंपक दक्षिण यात्रा पर थे, उनकी साध्वी बहन साध्वीप्रमुखा लाडांजी बीदासर में स्थित थीं। वे बीमार हुईं और पञ्चत्व को प्राप्त हो गईं । उनकी स्मृति में कवि कहता है—

खरी कुशल खेमंकरी, खटी न खामी खेह ।
लाडां 'दीपां' दूसरी, हथणी की-सी देह ।।

कला-कुशल कोमल कमल, पद की रंच न पीक ।
'चंपक' राखण चोकसी, लाडां तजी न लीक ।।

बिज्जल बंकी बेनड़ी, निर्मल शासण-नैण ।
'चंपक' आज चली गई, मैं समरुं दिन-रैण ।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसी प्रकार मां साध्वी वदनांजी के लिए कवि के उद्‌गार हैं—

म्हैं तो चिकमंगलोर मै, थे बीदासर ठीक।
दूरी चंपक देह पर, अन्तर अति नजदीक ।।

मन में आवै उड मिलूं, पगां हुवै जो पांख।
के है ? क्यूं ? क्यूं नहिं मिटै, झट ल्यूं 'चंपक' झांक ।।

इस प्रकार यह कृति विविधताओं का सुन्दर संगम-स्थल है। इसमें ११७० दोहा, सोरठा और छंद हैं। प्रत्येक पद्य अपने आपमें एक सहेतुक निदर्शन है। भाईजी महाराज—यह नाम जब अधरों पर आता है तब सर्पफनी गेडियाधारी मुनि चंपक की राठौड़ी आकृति आंखों के सामने नाचने लग जाती है। मैंने उनकी सेवा-आराधना नहीं की, पर उनका पूरा वात्सल्य और स्नेह पाया। यह अकारण ही मेरे पर होने वाली कृपा-वृष्टि थी। मैं लघु, वे गुरु। अपनी गुरुता में मिलाकर उन्होंने इस लघु को भारी बनाने का सफल प्रयत्न किया। मैं स्पष्टवादी था या नहीं, पर वे मुझे सदा सत्यसेवी मानते रहे। उनकी चंपक पुष्प की-सी मुस्कान सदा मुझे नहलाती रही और तब 'मैं-वे' का नैकट्य सध गया। कहां वे और कहां मैं ! पर मुझे वे सदा आत्मसात् करते गए और स्वररहित पर सार्थक छंद में बांधते गए। उनकी करुणा अपार थी, प्रतिबद्धताओं से रहित थी, पवित्र और गहरी थी। यही एकमात्र कारण था कि वे व्यष्टि नहीं समष्टि बन गए थे, व्यक्ति नहीं विश्व बन गए थे। जीवन-काल में वे हजारों की स्मृति में जीवन्त रहे, निरन्तर योगक्षेम के संवाहक के रूप में अवस्थित रहे और मरकर भी सबके स्मृतिपटल पर अचल बन गए। वे जीये औरों के लिए। 'पर-दुःख-कातरता' यह उनका जीवनमंत्र था, जो लाखों-लाखों को उनके चरणों में उपस्थित कर देता था। एक शब्द में कहूं तो 'स एव सः'—वे वे ही थे। कितने गुणों का संगम ! कितना पुरुषार्थ ! कितना श्रम ! कितनी सेवा ! आप थे आचार्य तुलसी के बड-बन्धव ! आप थे अनोखे सन्त !

प्रस्तुत ग्रंथ के संपादक-संकलक हैं श्रमण सागर। आप प्रस्तुत कृति के कवयिता के साथ छाया की भांति ३० वर्ष तक रहे और मुनिश्री की पूर्ण चर्या के नियामक, संयोजक और संरक्षक थे। आप स्वयं कवि, इतिहासकार और संस्मरण लेखक हैं। इतिहास की जब आप बातें सुनातें हैं, तब सुनने वाले को प्रतीत होने लगता है कि श्रमणजी संभवतः उस समय वहीं थे और घटना को देख रहे थे। पर यह केवल एक आभास ही है। आप जिस भाव-भाषा में सुनाते हैं, वह स्वयं विशिष्ट होती है और श्रोता को घटना से एकात्म कर देती है। प्रखर बुद्धि के धनी श्रमण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सागर राजस्थानी और हिन्दी में गीत भी लिखते हैं, जिनका गुंजारव दीर्घकाल तक होता रहता है।

यह एक मणि-कांचन योग है कि मुनिश्री चंपालालजी (भाईजी महाराज) के काव्य को प्रस्तुत करने वाले श्रमण सागर भी एक उच्चकोटि के कवि और साहित्यकार हैं। इनकी प्रस्तुति में स्वयं एक निखार है जो पाठक को बरबस अपनी ओर खींच लेता है तथा शब्द-सागर में गोता लगाने और अर्थ की ऊंचाई तक उड़ान भरने के लिए बाध्य कर देता है।

मुझे आज मुनिश्री के मूल-समाधि-स्थल के आसपास बैठे-बैठे इस भूमिका को पूरा करने में परम आनन्द का अनुभव हो रहा है। वे सब गए। सब जाएंगे। वे सुवास छोड़ गए। सभी सुवास नहीं दे पाएंगे। आज भी उनका समाधि-स्थल उनके तैजस परमाणुओं से अनुप्राणित है, ऐसा वहां अनुभव होता है।

उस परम पुनीत आत्मा के प्रति मैं अवनत हूं और उनके ऊर्ध्वारोहण की निरन्तर कामना करता हूं।

मुनि युगल (सागर-मणि) ने मुझे लिखने के लिए चुना, यह उनका वात्सल्य और विश्वास का द्योतक है। मैं भाईजी महाराज के सतत प्रवहमान स्नेहधारा का सिंचन पाकर कृतकृत्य हुआ हूं। अस्तु…

—मुनि दुलहराज

सेवाभावी समाधि-स्थल
जैन विश्व भारती
लाडनूं
५-२-८८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रम

१	असल बात	१
२	पञ्चक बत्तीसी	१३
३	श्रावक शतक	४७
४	संत चेतावणी	५६
५	गुलाब गुणचालीसी	६७
६	परमारथ पावड्यां	७५
७	श्रमण बावनी	८७
८	शान्ति सिखावणी	६५
६	सरड़का सोहली	१०१
१०	साधक शतक	१०५
११	शिक्षा सुमरणी	११६
१२	फुटकर फूल	१३१
१३	घासो-गोली	१४३
१४	यादगारां	१५३
१५	पद्यात्मक पत्र	१६७
१६	संस्मरण पदावली	१८३
१७	संस्मरण	१६३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असल बात

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निछरावल

मैं कवि कोनी, पण कवियां रै बिच मै ऊठूं-बैठूं
कविता रा खरड़ा'रु खलीता, खोलूं और लपेटूं
भावां री छोलां मै फिर-फिर लिखूं, समेटूं, मेटूं
शबदां रीं तलपेटी-ढेर, उधेड़-उधेड़ पलेटूं

छंद न जाणूं, बंध न जाणूं, सन्ध न जाणूं भाई !
तिणखो-तिणखो जोड़, मसां-सी एक छांनड़ी छाई
'चंपक' नूआं-जूनां भवियां-कवियां-हिये-हार-सी
आतम-दरसण करण बणैला, आ 'आसीस' आरसी ।

सेवाभावी 'चम्पक'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मन रो मोरियो

छतरी तांण'र
घूमर घाल'र
मोरियो
घणोइ फूटरो नाचै।
नाच नूच'र
पगां साहमो देखै जणां ?
उदास हू'र अपणै आप नै जाचै।
पण
नाचणूं को छोड़ैनीं।
ओही हाल म्हारो है...

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निजोरी बात

बै आंख्यांइ कोनी ?
बै पांख्यांइ कोनी ?
भाइ-बहन घणांइ हैं,
पण
बै राख्यांइ कोनी ?
पाषाण कीमती है,
घडणनै बैठ्यो हूं
पण के करूं
निजोरी बात है,
बै टांक्यांइ कोनी !
बै आंख्यांइ कोनी !
बै पांख्यांइ कोनी !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घुड़-दौड़

घुड़दौड़ मै तो,
सगलाइ घोड़ा दौड़ै।
दौड़ै जका मै, के सगलाइ ओड़ै-जोड़ै ?
कोइ बछेरियो, साहरै कर सरपट नीसरै,
जद,
बूढ़े को भी मन बढ़ ज्यावै,
जोस चढ़ ज्यावै,
भलाइ कोइ चाल देख'र हंसै,
ताना कसै,
मुंह मचकोड़ै,
पण भाई !
घुड़दौड़ मै तो सगलाइ घोड़ा दोड़ै।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हीये री हूंस

पंखेरू नूओ है'र,
अकास बोहलो बड्डो है।
पंखडा फड़फड़ा'र
उडणां चावै,
उड-उड'र पाछो पड़ ज्यावै।
पण
बो के निरास हुवै ?
उडणो छोड़ दै ?
मैं भी गुणमणाऊं'
उडणो चाऊं,
अक्खर भेला करूं।
उकलत वो आप आपरी है,
थां जिसी कविता कठैऊ ल्याऊं।
तोड़ केवणियां तो इयांनइ केसी
आतो, खाली छाती रो ठड्डो है।
पंखेरू नूओ है'र
अकास बोहलो बड्डो है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कवी'र कविता

अकास मैं इन्दरधनुष ताण्यो कोनी जावै, तणै है।
रोही मैं सिंह बाड्यो कोनी जावै सिंहणी जणै है।।
कवि कोइ भाटो थोडोइ है जको घड'र बिठाद्यो,
कविता बणाई कोनी जावै बा तो आपेइ बणै है।।

सूरज नै उगावै कुण है ? टेमोटेम अपणै आप ऊगै है,
पंखी नै चुगावै कुण है ? भूख लाग्या आपेइ चुगै है।
कवि तो तिलोकी को स्रष्टा-द्रष्टा हुयां करै है,
बीनै पुगावै कुण है ? बो तो कल्पानावांडं पूगै है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुण दोसी निर्दोसी

काच फूटग्यो, रोलो मचग्यो, दिल टूट्यो आवाज न आई,
ना कुछ-सो मन-भेद पड्यो बस दूर हुआ मां-जाया भाई।
गेहणो बांट्यो, जग्यां बांटली, भींत आंगणै मैं खिचवाई,
पेठ गमाई, जमीं जमाई, पीढ्यां री दूकान उठाई।
हाथी निकल्यो, अड़ी पूंछड़ी कलस्यै री रह गई लड़ाई,
खुदी दिराण्यां-जेठाण्यां मैं हिन्द महासागर-सी खाई।

सागै पल्या, रम्या सागै ही, सागै सीख्या, जीम्या सागै,
बातां करता लोग-लुगायां, 'जोड़ राम-लिछमण-सी लागै'।
आज हुयो के ? भाई नै भाई देख्यो भी नहीं सुहावै,
ओरां आगै एक दूसरै रा ओगण-गिणगत नित गावै।
'चम्पक' घर मैं बड़ी दुश्मणी, बणग्या जिगरी दोस्त पड़ोसी,
पड़ग्यो लोही पाणी स्यूं भी पतलो, कुण दोसी निर्दोसी ?
आंणै-टांणै, इं-घर बीं-घर, आंण-जांण री आंट अडाई।
ना कुछ-सो मन-भेद पड्यो बस दूर हुया मां-जाया भाई,
काच टूटग्यो, रोलो मचग्यो, दिल टूट्यो आवाज न आई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक कोल

संघ रै इकलास की शानी कठैइ है नहीं।
साख तेरापंथ री छानी कठैइ है नहीं।।
आदि म्हांरो संघ है अरु अन्त म्हारो संघ है।
संघ स्यूं बधकर नहीं कोई आथ इ संसार मैं ।।१।।

के करूं मैं भला बीं बैकूंट रो।
जठै सुख दुख रो कोई साथी नहीं।।
संघ है सोह क्यूं जलै घी रा दिया।
जीव स्यूं बत्ती दकी है संघ म्हारै वासतै ।।२।।

रंज मैं भी, खुशी मैं भी, गमी मैं अणगमी मैं।
संघ म्हांरो और मैं हूं संघ रो।।
कदे कुर्वाणी नहीं सौदो करै।
दियां जा बलिदान अपणै ढंग रो ।।३।।

संघ रै खातर निछावर कालजो।
मनै बदलै मैं नहीं कीं मांगणो ।।
आग स्यूं मुंह भुसलद्यो पण स्नेह देकर।
सदा थांनै दियो देसी च्यानणो ।।४।।

एक दूजै री उतरती जो करै, जलै ईर्ष्या द्वेष मच्छर आड मैं।
जठै छोटै-बड़े रो नहिं कायदो, खड्यो है बो संघ साव उजाड़ मैं ।।
हाथ खावै हाथ नै बो घर किस्यो ? आबरू के राखणी आसान है।
लोग ताल्यां बजावै, खिल-खिल हंसे, संघ बो किरकेट रो मैदान है ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बफादारी संघ री बै के निभासी।
दो मिनट भी बैठ सुख-दुख नहिं कहै जो नहिं सुणै ।।
संघ चादर नै भला बै के बधासी।
मियां धागा प्रेम का जो नहिं चुणै, जो नहिं बुणै ।।६।।

होड़ सागर री कदेइ चलू भर पाणी करै ?
बूंद-बूंद टपक-टपक चम्पक सदा अंजलि झरै ।।
बूंद-बूंद रली चली रसधार सागर बण गयो।
उछलकर बारै पड्यो अस्तित्व पाणी खो दियो ।।७।।

एकलो तो हुवै आखिर एकलो ही।
संघ अपरम्पार लहरातो समन्दर ।।
समन्दर मै बूंद रो भी मोल है।
कोल, आपां रवां एकामेक बण श्रीसंघ रा ।।८।।

मिल्या आपां एक ठामे संघ री सगती बणी।
प्रेम ज्योति बुझ्यां, मेहफिल मै रहै कद रोशणी ।।९।।

तूं कर्यां जा बेधड़क निष्काम सेवा।
समर्पण निरफल कदे नहिं जायला ।।
(भले) नहिं सुहावै नांव दीयै नै लियो।
पण पतंग्यो प्राण भेंट चढायला ।।
रात बीत्यां पछै सूरज ऊगसी।
राख ध्यावस, भूलज्या सत्कार नै ।।
जीवतां नै सदा गाल्यां ही पड़ै है।
मर्यां, धोक्यां करै जग जुंझार नै ।।१०।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पञ्चक बत्तीसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रमवार

१, सीख १५
२. भूल मत १६
३. पेली तोल, पछै बोल १७
४. समझदारी रो सार १८
५. भणणै सागै गुण १६
६. संगत री रंगत २०
७. आछां रो मेल २१
८. मान-मनवार २२
९. सुख रो संकेत २३
१०. कृतघ्न कुण ? २४
११. मित्र ढूंढ़ २५
१२. सरल बण २६
१३. साहस मत खो २७
१४. महानता रो गेलो २८
१५. सज्जनता रो रूप २६
१६. घुल-मिल'र देख ३०
१७. आयोड़ां रो आदर ३१
१८. जीणै री जुगत ३२
१९. आज रा अगुवा ३३
२०. आं बडोड़ाऊं दूर ३४
२१. सुधर'र सुधार ३५
२२. स्याणां री स्याणप ३६
२३. आत्म-निदरसण ३७
२४. स्नेह-राग-परिचय ३८
२५. तुकम-तासीर ३६
२६. पाणी परख ४०
२७. पौरस बढ़ा ४१
२८. आत्मालोचन ४२
२९. तूं साधक है ४३
३०. कवि बण, पण ४४
३१. सागर ! सावधान ४५
३२. आशीष ४६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९

सीख

सागर ! संयम सांतरो, सुखे पालजे शान्त ।
संघ, संघपति शरण मैं, रह निश्चिन्त नितान्त ।।१।।

शासन-सागर मैं सदा, कर सागर ! किल्लोल ।
रत्नागर रमणीक हद, हीये री हिल्लोल ।।२।।

शासन उमग-जला सुखद, खिणभर खटै न खोट ।
आचारी नैं है अठै, अक्षय सागर ! ओट ।।३।।

सागर ! भैक्षव-संघ रो, है ऊंचो आदर्श ।
अडिग राखजे आसता, हरदम चढ़तै हर्ष ।।४।।

सागर ! सुर-तरु संघ स्यूं, पूरण राखी प्रेम ।
विज्ञ ! विनय-व्यवहार-नत, निमल निभाजे नेम ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२

भूल मत

सागर ! सद्गुरु रो सदा, अकथनीय उपकार।
साम्प्रत माटी रो सुघड़, कुंभ करै कुंभार ।।१।।

शिव-दाता, त्राता सुगुरु, मात-तात, गुरु-भ्रात।
सद्गुरु रो सागर सतत, शरण राख दिन-रात ।।२।।

करै सारणा-वारणा, नहिं मारण दै मेख।
सद्गुरु सिख-समुदाय की, सागर ! राखै रेख ।।३।।

सुमन-सुरभि, गुरु-शिष्य रो, देह-प्राण सम्बन्ध।
सागर ! सद्गुरु नावड़ी, ओ संसार समन्द ।।४।।

आसंगो आछो नहीं, अटल राख गुरु-आश।
बंधै न सागर ! बाथ मै, ओ असीम आकाश ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३

पेली तोल, पछे बोल

सागर ! पेह्‌ली सोचकर, फेर बोलणो बोल ।
सारो जग सज्जन बणै, तीखो बधसी तोल ।।१।।

बोली-बोली मै खिलै महाभारत सो खेल ।
सागर ! बाणी स्यूं समझ, कितो तिलां मै तेल ।।२।।

कोई स्यूं करणी नहीं, बिना जरूरत बात ।
कांण-कायदो खास है, सागर ! अपणै हाथ ।।३।।

बात, बिना भाजन बिना, कह्‌तां हुवै कदर्थ ।
सागर ! पेह्‌ली सोचजे, विग्रह बधै न व्यर्थ ।।४।।

शब्द-शब्द सागर ! सदा, बोल तराजू तोल ।
जो चाबी तालो जड़ै, बा ही देवै खोल ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४

समझदारी रो सार

बोली बोलीजे इसी, पकड़न कोई पाय।
सागर ! समझू समझलै, लगै जग्यांसर जाय ॥१॥

सागर ! सीखी बोलणो, जाणै जाणणहार।
माखण विरला नै मिलै, छाछ पिवै संसार ॥२॥

समझू समझै स्वल्प मैं, सागर ! साची रेस।
मूरख मगजपची करै, पूरी पड़ै न पेस ॥३॥

अणसमझूआवेश मैं, बणज्यावै बाचाल।
सागर ! सुमधुर शान्ति रा, सुन्दर फल संभाल ॥४॥

सागर ! शोभै है सदा, बगत-बगत री बात।
बिना बगत लागै बुरो, शशि सूरज रै साथ ॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५

भणणै सागै गुण

कोरी विद्या स्यूं कदे, मिनख न बणै महान।
रोहीड़ै रै फूल रो, सागर! के सम्मान? ॥१॥

सागर! परखीजै सदा, विद्या सह व्यवहार।
ढोर किस्यो ढोवै नहीं, भारी पुस्तक भार ॥२॥

शिक्षा मै शोभै नहीं, अकड़ाई अविवेक।
सागर! स्वर्णिम-थाल मै, ज्यूं रीरी री रेख ॥३॥

सागर! सीख्यो सैकडां, अनुपम कला उदार।
जीवन री ज्योति जगै, तो सीख्येड़ो सार ॥४॥

सागर! इण संसार मै, पढ्यो-लिख्यो भी फूड़।
जो नहिं जाणै बोलणो (तो) सब सीख्येड़ो धूड़ ॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६

संगत री रंगत

ओछां रो आछो नहीं, सागर ! अति सम्पर्क ।
ज्यूं फूटी नावा करै, गहरै पाणी गर्क ॥१॥

ओछां री संगत अरे !, मारै मानव मोल ।
सागर ! साम्प्रत स्वर्ण नै, दै चिरम्यां स्यूं तोल ॥२॥

सागर ! संगत रो असर, परख देख प्रत्यक्ष ।
अमर-बेल आसंग स्यूं, बलै समूचो वृक्ष ॥३॥

अपछन्दा ओल्है करै, आमी-सामी बात ।
अवगुण रै आरंभ री, सागर ! आ शुरुआत ॥४॥

कायर संगत कायरी, जोशीलां संग जोश ।
सागर ! आवै संगत स्यूं, अटकल, अकल रु दोष ॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७

आछां रो मेल

सागर ! तूं सत्संग रो, आंक मोल आगूंच ।
मीठै री मनुहार मैं, पातल की भी पूछ ।।१।।

सागर ! समझू सुगण जन, पंडित स्यूं कर प्रीत ।
तिरै काठ संग लोह भी, आ उत्तम-जन रीत ।।२।।

बैठै तो तूं बैठ जे, पंडित-जन रै पास ।
सागर ! संगत स्यूं बढ़ै, बुद्धि, विनय, विश्वास ।।३।।

भिड़णो चावै तो भिड़ी, सागर ! पंडित सोज ।
विज्ञ-वैद्य रै हाथ स्यूं, मरणै मैं भी मोज ।।४।।

आछां नै आछो मिलै, आछोड़ा रो मेल ।
सागर ! सागर मैं रलै, बिना बुलायां बेल[1] ।।५।।

---

१. नदी का प्रवाह ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८

मान-मनवार

बिना मान-मनवार कै, रहणैं मैं कै सार ?।
सागर ! हाथ्यां पर लदै, जन इन्धन रो भार ॥१॥

भंवरा ! आदर-भाव बिन, डाल-डाल मत डोल ।
सागर ! थारो है सही, अपणो भी कुछ मोल ॥२॥

आदर री सागर ! अकथ, लगै राबड़ी स्वाद ।
बिना लूंण पकवान भी, बणज्यावै बे-स्वाद ॥३॥

सागर ! सूखो सोगरो, स्ववश रो सुखकार ।
ठोल्या खा पकवान भी, है जीमण मैं हार ॥४॥

आदर औरां नै दियां, मिलसी सागर ! मान ।
कदे मिनख भूल्यां करै ?, अवसर रो अहसान ॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९

सुख रो संकेत

सागर ! सुख संसार सब, थाक्यो सगलै ढूंढ़।
जो सुख चावै ढूंढ़णो, (तो) मन ढूंढ़ै मै ढूंढ़ ॥१॥

संकट मै संतोष यदि, राख सकै तो राख।
सागर ! सुख रो स्वाद तूं, चाख सकै तो चाख ॥२॥

सागर ! दुख अनुराग है, सुख है ममता-त्याग।
राग-त्याग, वैराग बिन, बुझै न जल री आग ॥३॥

धन मै सुख री धारणा, सागर ! धारै लोक।
पुद्‌गल सुख है पांवला, असली सुख संतोक ॥४॥

सुख मात्रा सापेक्ष है, अति मात्र अतिरेक।
सागर ! समता सीखलै, दुख मै तूं सुख देख ॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०

कृतघ्न कुण ?

सागर ! घृणित कृतघ्न सो, अधम पाप अभिमान ।
अपणा तूं अपणत्व स्यूं, गरड़ा, दर्दी, ग्लान ।।१।।

अमरबेल सो कृतघनी, सागर ! गुणनै भूल ।
पलै जकै ही पेड़ स्यूं, पड़ै अन्त प्रतिकूल ।।२।।

सागर ! जो गुण भूलकर, झालै झूठो झोड़ ।
तो उलंठ शठ ऊंठ नै, खलै ऊंठ री खोड़ ।।३।।

छिद्रान्वेषी छिबकली, मीठो मूंडै मित्र ।
सागर ! दीसै शान्त पर, आदत बड़ी विचित्र ।।४।।

सागर ! छिद्रान्वेषियो, मीठो फल किंपाक ।
रंग रूप रो फूटरो, तोडै कंठ तड़ाक ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११

मित्र ढूंढ़

सागर ! सम्पत मैं सुखद, हाजर मित्र हजार।
बोलण विग्रह-विपद मैं, साथी कुण है त्यार ।।१।।

सागर ! सुकृत साथ है, होसी जो कुछ होण।
सुख मैं साथी सैंकड़ां, दुख मैं साथी कोण ।।२।।

विद्या-विनय-विवेक है, थारा साथी तीन।
सागर ! करजे साधना, तूं होकर तल्लीन ।।३।।

अमर-बेल सागर ! अमर, साथी नै नहिं खैर।
पसरै जिणरी डाल पर, विण स्यूं पोखै वैर ।।४।।

सागर ! सांप्रत समझलै, मित्र-मित्र मैं फेर।
दुर्लभ हीरो दीखणो, कांकर ढेरमढेर ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२

सरल बण

सागर ! सीधै बांस पर, लहरावै ध्वज लोक ।
बांकी-चूंकी लकड़त्यां, चूल्हे मै दै झोंक ।।१।।

सागर ! बण शिशु-सो सरल, बांक बुराई छोड़ ।
जठै सरलता साधुता, सौ को एक निचोड़ ।।२।।

सागर ! श्रद्धा-सिद्धि रो, पकड़ पाधरो पन्थ ।
बिना सरलता सत नहीं, नहीं सत्य बिन सन्त ।।३।।

सागर ! जागृत-जोग बण, रच मत माया जाल ।
चेतो राखी चुगल की, 'चम्पक' समझण चाल ।।४।।

सागर ! कर गति-मति सरल, सरल सुरीली बीण ।
पाप प्रपंचां स्यूं परै, कोविद ! कला-प्रवीण ! ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३

साहस मत खो

सागर! दुख समचित सहै, हिम्मतवान हमेश।
सोग्यो-संताप्यो रहे, निर्भागियां रो शेष ॥१॥

सागर! तप-जप-विधि कठै, सम, श्रम, समझ समाधि।
रात दिवस लागी जठै, सोक, सोक-सी व्याधि ॥२॥

सोक नाश श्रुत रो करै, सोक शरीर बिगाड़।
सागर! धन, धीरज, धरम, देवै सोक उजाड़ ॥३॥

सागर! सूरज री हुवै, सदा अवस्था तीन।
तो क्यूं तूं दुमणो बणै, दुख मै दरदी-दीन ॥४॥

सागर! समचित सहन कर, करड़ी सीख पुनीत।
झाट झेरणै री सह्यां, निकलै झट नवनीत ॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४

महानता रो गेलो

कष्ट पड्यां सागर ! कदे, मत करजे मुख म्लान ।
चोटां खमणै स्यूं चतुर !, मानव बणै महान ।।१।।

बड़ो, बड़ो दोरो बणै, बड़ो बणण री पीक ।
तो गम खा, गंभीर बण, लोप न सागर ! लीक ।।२।।

तपणै री सागर ! तनै, करणी पड़सी पेल ।
सुध बणणो सो टंच रो, सोनो है के स्हेल ।।३।।

तणी न ऊंचो ताड़-सो, पंखी रहै न पास ।
फल नहिं आवै हाथ मै, सागर ! सोहरै सास ।।४।।

सागर ! सागर सारिसो, गहरो रही गंभीर ।
सीमा मै बरती सदा, नदियां रो ज्यूं नीर ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५

सज्जनता रो रूप

सागर ! सज्जन आपरो, देसी हित री सीख।
ऊपर स्यूं करड़ो मगर, भीतर मीठो ईख ॥१॥

नीको कड़वो नीमड़ो, सागर ! सन्त सुजाण।
खोट काढ़, व्रण नै भरै, जाणै कोइयक जाण ॥२॥

सागर ! कर यदि कर सकै, तूं चोखां री होड।
धोलां मीठा दूध-सा, पक्यां नरम बेजोड़ ॥३॥

त्यागै प्राण पतंगियो, पण नहीं तोड़ै प्रीत।
स्याणा सागर ! दै सलाह, मीत ! प्रीत री रीत ॥४॥

सागर ! सो चोटां सहै, सोनो, सज्जन, सूर।
अड़तांइ अरडाटो करै, कुत्तो, कांसो, क्रूर ॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६

घुल-मिल'र देख

दूध-खांड की ज्यूं दकी ! रहिजे एकामेक।
घुल-मिल सागर ! सैण स्यूं, चलै न हंस-विवेक ।।१।।

सागर ! सज्जन बण सदा, तरल दूध रै तुल्य ।
तुच्छ नीर नै भी तुरत, आपै अपणो मुल्य ।।२।।

बणै मित्र तो तूं बणी, सागर ! सलिल सुजाण ।
बलै जलै पेहली स्वयं, पय नै पड़ै न ताण ।।३।।

जल जलतां ही उछलकर, सागर ! उफणै दूध ।
भाई रै दुख मैं दुखी, पड़ै आग मैं कूद ।।४।।

छांटो सागर ! छिडकतां, हियो हुज्यावै हेम।
भाई-भाई मै हुवै, पय-पाणी सो प्रेम ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७

आयोडां रो आदर

सागर ! पायो सहज ही, सन्त मिलन संयोग ।
आगत-स्वागत अतिथि की, करणी दे उपयोग ।।१।।

पड्या कठै है पावणां, मिलै भाग्य बस जोग ।
सागर ! भगती-भाव स्यूं, कर उत्तम उद्योग ।।२।।

आयोडां री खातरी, करणी है कर्तव्य ।
भावां मै भालै जगत, सागर ! सभ्यासभ्य ।।३।।

आवो बैठो विनय स्यूं, आसण दैणो धाम ।
आयेड़ै रो आव स्यूं, सागर ! करणो काम ।।४।।

व्यवहारिकता मै कदे, मत बणजे तूं मूक ।
अवसर ओ अपणत्व को, सागर ! तूं मत चूक ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८

जीणै री जुगत

बणणो चावै तो बणी, सागर ! मीठी दाख।
भीतर-बाहिर सरस रस, लोक भरैला साख ।।१।।

सागर ! यदि बणणो सरस, सीख ईख स्यूं सीख।
चूसणियै रै कालजै, बांधै रस री डीक ।।२।।

मत बणजे तूं बोरियो, ऊपर कोमल कोर।
सागर ! सुन्दर रंग पर, भीतर महा कठोर ।।३।।

फिरण-फिरण मै फेर है, सागर ! तूं मत रूस।
रेंठ फिरै ईखू सरस, चरखी लेवै चूस ।।४।।

सागर ! तूं रहिजे सदा, धोलो दूध समान।
अभिरुचि रै अनुरूप ही, बणै विविध पकवान ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६

आज रा अगुवा

अगुवा सागर ! आज रा, केसूला रा फूल ।
दीसत दीसै फूटरा, किन्तु मूल मै भूल ॥१॥

अगुवा सागर ! आकड़ा, फूल देख मत फूल ।
आम्बा-सा अकडोडिया, भीतर तूल फिजूल ॥२॥

अधिक धनी है आकड़ो, सागर ! मत लै नाम ।
पान फूल फल है घणा, पर के आवै काम ? ॥३॥

ऊपरलै आलोक मै, अकल उलझगी आज ।
सागर ! भेद भविष्य रो, समझै नहीं समाज ॥४॥

लेक्चर झाड़ै, घर भरै, नेता नीत बिगाड़ ।
सागर ! यूं कद हो सकै, सही समाज-सुधार ॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०

आं बडोड़ाऊं दूर

सागर ! मोटां रै विचै, छोटां रो बे-हाल ।
ज्यूं गोधां रै झोड़ मै, बूंटा रो खोगाल ।।१।।

अपणी-अपणी दिन दशा, देख बणाणी बात ।
बड़ां-बड़ां री बात मै, सागर ! घाल न हाथ ।।२।।

सागर ! खींचाताण मै, हित नहिं आवै हाथ ।
पड़्या पिसीजै बापड़ा, घुण मोठां रै साथ ।।३।।

सागर ! मीठै रै लिए, कदे न खांणी ऐंठ ।
झूठी पातल चाटणै, स्यूं न भरीजै पेट ।।४।।

सागर ! सांगर केर स्यूं, पाली सूआ प्रीत ।
पड़ सोनै रै पिंजरै, जीणै मै के जीत ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१

सुधर' र सुधार

सागर ! सुधरै सागला, इसो सीख विज्ञान ।
कलाकार करदै तुरत, भाटै नै भगवान ।।१।।

कल बिन बल के काम रो, सागर ! साची मान ।
रसी-फसी पग बैल रै, निकल न सकै अजाण ।।२।।

देणो भाजन देखकर, सागर ! सहतो घाम ।
खाटी केरी रो बणै, पककर मीठो आम ।।३।।

अति ऊंडी आलोचकर, सागर ! भाजन सोज ।
सगती सारू सूंपणो, सहतो-सहतो बोझ ।।४।।

सागर ! गुरु लाखां मिलै, चेलो मिलै न एक ।
कह्यो करणिया है किता, दै उपदेश अनेक ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२

स्याणां री स्याणप

सागर ! स्याणप स्वयं री, काम पड्यां दै काम ।
है साहजी री सीख रो, फलसै तक परिणाम ।।१।।

अन्त-अन्त स्याणप करै, सागर ! कसबड़ हाय ।
कर्‌यै-करायै काम नै, करदै गतरस प्राय ।।२।।

सागर ! होणो ही चहै, हद महाजनी हिसाब ।
अति कसबड़ के काम री, (जो) करदै काम खराब ।।३।।

सागर ! सह लेणो स्वयं, समय पड्यां नुकसाण ।
पण शत्रु नै भी सलाह, हित की देणी जाण ।।४।।

साच झूठ रो है नहीं, सागर ! सही निवेड ।
तो तूं कैं ताणी करै, छुटपुट छेड़ा-छेड़ ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३

आत्म-निदरसण

सुणकर अणगमतो सबद, लाल न करणी आंख ।
सागर ! पेहली स्वयं की, जीवन झांकी झांक ।।१।।

खिण भर भी सागर ! खुलो, मन मतंग मत छोड़ ।
जद भागै अंकुश लगा, पाछो ही बाहोड़ ।।२।।

देखो भले दबाव दै, झटकै मिलै न तथ्य ।
तर्क तराजू स्यूं तुलै, सागर ! कदे न सत्य ।।३।।

सावधान सागर ! रही, आज 'जवां' को राज ।
चटको देवै एक ही, चलै कई दिन खाज ।।४।।

आत्म-निदरसण रै बिना, सब दरसण बे-कार ।
सिद्धि-द्वार सागर ! सुलभ, आत्मा ही हरिद्वार ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४

स्नेह-राग परिचय

विषय बधै विष बेल ज्यूं, परचो मोटो पाप।
सागर ! नहिं आवै सुधी !, धूलो खांयां धाप ।।१।।

पूलो न्हाख्यां पर जलै, छेड्यां ऊठै झाल।
रंग-राग री आग रो, सागर ! जग-जंजाल ।।२।।

स्नेह-राग सागर ! सबल, भंवर भयंकर भार।
भूल-भुलैयो भव-भ्रमण, बुद्धि बिगाड़ विकार ।।३।।

सागर ! परचै मैं पड्यां, हीये रहै न होश।
चंचल चित चकरी चढ़ै, दै ओरां नै दोष ।।४।।

हीयै फूटै नै मिलै, भाग फुटै रो जोग।
सागर ! थाइसेस-सो, (ओ) स्नेह-राग रो रोग ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५

तुकम-तासीर

दुर्जन तजै न दुष्टता सज्जन सजन स्वभाव।
सागर ! तो सूखै नहीं, तलियो देत तलाव ।।१।।

तजै 'तुकम-तासीर' कद, सोबत सकै न छूह[1]।
सागर ! शाहजादो रमै, महिलां मैं धिग् धूंह ।।२।।

सागर ! घर परिकर असर, आयां सरसी अन्त।
कह, कद कड़वी-बेल पर, मीठो फल मुलकन्त ।।३।।

सागर ! बढ़ा न बीसरै, बड़पण झोंका झेल।
दर मैं भी देखै नहीं, गज गंडक री गेल ।।४।।

असली रै औलाद की, हुवै न सागर ! होड।
गोड़ां री घरघोडिया, खुड़ा सकै कद खोड़ ।।५।।

---

१. तुकम-ए-तासीर, सोवत-ए-असर।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६

पाणी-परख

साहूकारी री सदा, रेसी अविचल रेख।
चोड़ै चींधी चोर कै, शिर पर सागर! देख ॥१॥

ओछी पत ओछी अकल, अवसर रा अणजाण।
अणघड़ अनुभवहीण रा, अै सागर! अहलाण ॥२॥

गरमी मैं सूखै नदी, बरस्यां आवै बाढ़।
सागर! बन्धो बांधकर, सीमित नहरां काढ़ ॥३॥

सिंचन चिंतन स्यूं सरस, सागर! जीवन खेत।
चासै बिजली च्यानणो, सूख न पावै रेत ॥४॥

पाणी स्यूं सागर! परख, सूरा, कूआ, सेण।
रद पाणी उतर्‌यां पछै, मोती, माणस, नेण ॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७

पौरस बढ़ा

कष्ट पड्यां कायम रहै, साहसीक निर्भीक।
सागर ! सिसकै सिटलिया, झांक रांक दै रींक ॥१॥

'चम्पक' हिमगिरिपर चढ़ै, सागर-तल लै नाप।
चन्द्र-लोक जा ऊतरे, साहस रो बल साफ ॥२॥

सहनशीलता री हुवै, हद जद सागर ! हार।
नारद, नमे न नागड़ा, नाग बिना फुंकार ॥३॥

कह सागर ! पौरुष-कथा, सुणतां चढ़ै उमंग।
रंग देख बदल्यां करै, ज्यूं खरबूजो रंग ॥४॥

शब्द असंभव कोश मै, सालै सागर ! साल।
कर्म-शील काढ्यां करै, पाणी फोड़ पताल ॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८

आत्मालोचन

निरखै तो खुदरा निरख, दो क्षण दुर्गुण दोष।
सागर! तूं पर-गुण परख, आगम रो उद्घोष ॥१॥

औरां री आलोचना, पागल पुरुष प्रलाप।
सागर! रोही रो रुदन, पाप अनाप-सनाप ॥२॥

निज अवगुण निरखै नहीं, आखै पर का भेद।
चाली सागर! चालणी, खेद बतावण छेद ॥३॥

सागर! काच रु केमरो, दोनूं परख प्रबुद्ध।
उलटो अंकन फिल्म मैं, शीसो सुध रो शुद्ध ॥४॥

दूजां नै देख्यां दकी, सरै न गरज लिगार।
अन्तर की आलोचना, सागर! प्रवचन-सार ॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६

तूं साधक है

तन-बल तो काची तकै, मन-बल रह मजबूत ।
सागर ! तिरै समुद्र मैं, साधक, दूत, सपूत ।।१।।

जल मैं ज्यूं नौका तिरै, त्यूं सागर ! संसार ।
नौका मैं जल यदि भरै, तो डूबै मझधार ।।२।।

सागर ! कड़वी बात सुण, जो दै मधुर जवाब ।
ठंडो पाणी उगलती, दै आगी नै दाब ।।३।।

अति-आरामी, आलसी, अभिमानी, आजाद ।
लंपट, लोलुप, लालची, सागर ! बो के साध ? ।।४।।

आंण-कांण सागर ! नहीं, खांण-पांण ही ध्यान ।
नहीं बखाण-बाणी समझ, साध असाध समान ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०

कवि बण, पण···

कविता करतां दधक्षर, सागर ! राखी याद ।
चरण धरै चेतै बिना, (तो) व्यर्थ हुवै बरबाद ।।१।।

राख आदि में ज-भ-ह्-र-ष शुरू न करणो छन्द ।
सुण सागर ! अ-ज-म-न-क पर, मत कर लेखण बंद ।।२।।

करामात कवि री किती, कहूं कल्पनानीत ।
सागर झलकै, गिरि गलै, जद कवि गावै गीत ।।३।।

कवि री छवि-सी कल्पना, रवि-सो कवि-उद्योत ।
नवि, पवि सागर ! अनुभवी कवि जगमगती जोत ।।४।।

कविता तोड़ मरोड़ कर, करै ओर की ओर ।
नांव आपरो चेपदै, चम्पक ! वो कवि चोर ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१

सागर ! सावधान !

अपणै मुद्दै मैं रही, सावचेत खुशहाल ।
'चम्पक' सागर ! चमकसी, आज नहीं तो काल ॥१॥

अकलदार नै आंख रो, घणो इशारो एक ।
अविवेकी नै लाख भी, सागर ! कहकर देख ॥२॥

आग्रह मैं आया करै, अहंकार, आवेश ।
झूठ, आंट, झंझट, कपट, सागर ! कटुता, क्लेश ॥३॥

आंख देखकर आंकलै, जो भीतरला भाव ।
'चम्पक' चतुर चकोर तूं, सागर ! छोड़ विभाव ॥४॥

अन्त मती वैसी गती, जैसी गति मति होय ।
मति नै बदलण दै मती, सागर ! सिन्धु विलोय ॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२

आशीष

सुबह-सुबह स्वाध्याय है, सागर ! साचो स्नान ।
उडा ऊंघ, आलस उभय, स्थिर चित बणी सुजान ।।१।।

निश्चित ही मिलसी रतन, पाणी माँहि मजीक ।
धीरज धर, कर साधना, सागर ! सिद्धि नजीक ।।२।।

सागर ! बड़ कै वृक्ष ज्यूं, तूं करज्ये विस्तार ।
हर्‌यो-भर्‌यो छायां घणी, सगलां नै सुखकार ।।३।।

सुखे-सुखे संयम निभा, सागर ! तूं सोत्साह ।
श्याम खोर बण संघ रो, 'चम्पक' री चित-चाह ।।४।।

राजा देवै रीझ कर, बड़ी-बड़ी बक्सीस ।
पर सागर ! चम्पक कन्है (है) आ हार्दिक आशीष ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रावक-शतक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा-छन्द

मंगलीक महावीर, गोतम गणधर गुण निला।
भिक्षू भंजन भीर, समरो निशिदिन श्रावकां !।१।।

तुलसी तरणी नाव, सागी इण संसार में।
भक्ति करो भल भाव, सगती सारू श्रावकां !।२।।

गणी-गण रा गुणग्राम, गाओ गौरव स्यूं गुणी।
करो इसो कोइ काम, सुधरै नरभव श्रावकां !।३।।

सामायक शुभ-ध्यान, चिन्तन और चितारणो।
बणो ज्ञान-गलतान, समकित धारी श्रावकां !।४।।

गहरो तात्विक ज्ञान, मिलणो मुश्किल है महा।
सीखो तत्त्व सुजान, सारां पेहली श्रावकां !।५।।

मत द्यो निन्द्रा मान, बातां-विकथा बरज कै।
बंचै जद व्याख्यान, सुणो ध्यान स्यूं श्रावकां !।६।।

अपछन्दा अवनीत, टालोकड़ गण स्यूं टलै।
बरतै जो विपरीत, संगत छोड़ो श्रावकां !।७।।

मानवता रो मान, सदा बधावो सोख स्यूं।
बणो मती व्यवधान, शुभ कामां में श्रावकां !।८।।

पर-गुण स्यूं धर प्रेम, निरखो निज अवगुण निपुण।
निमल निभाओ नेम, सुखे समाधे श्रावकां !।९।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्मल राखो नीत, परमप्रीत पय-जल जिसी।
जग में होसी जीत, सच्चाई स्यूं श्रावकां !।१०।।

ध्याओ धर्म-ध्यान, पाप-ध्यान नै परिहरो।
मिलसी शान्ति महान, सहज भाव स्यूं श्रावकां !।११।।

बणज्यो विज्ञ विनीत, चुणज्यो चोखा गुण चतुर।
निकलै नव नवनीत, शुभ चिन्तन स्यूं श्रावकां !।१२।।

दूषण मुनि मैं देख, चटकै मत थे चिमकज्यो।
समझ सीख सुविवेक, स्वामी जी रा श्रावकां !।१३।।

बिना विचार्यां बात, किण स्यूं ही करणी नहीं।
है अपणै ही हाथ, शोभा लेणी श्रावकां !।१४।।

बधज्या घणो बिगाड़, बे-मतलब री बात स्यूं।
तिल बणज्यावै ताड़, साम्प्रत देखो श्रावकां !।१५।।

रोजीनां री राड़, आछां नै ओपै नहीं।
बोहलो करै बिगाड़, सोचो समझो श्रावकां !।१६।।

दिल राखो दरियाव, झटकै थे मत झलकज्यो।
पड़सी पूर्ण प्रभाव, सगलां ऊपर श्रावकां !।१७।।

धन स्यूं नावै धाप, सागर नै ज्यूं सलिल स्यूं।
तृष्णा रो आताप, शान्त करो थे श्रावकां !।१८।।

साझो शासण-सेव, अटल राखज्यो आसता।
अलगो कर अहमेव, सफल बणो थे श्रावकां !।१९।।

बारह-व्रत वर रीत, धारो कर कर धारणां।
पूरी पालो प्रीत, संयम सागै श्रावकां !।२०।।

संत-सत्यां रै साथ, धारो धार्मिक धारणा।
बिना जरूरत बात, शोभै कोनी श्रावकां !।२१।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संत-सत्यां रै संग, बरतो मत विपरीतता।
परिहर प्रेम प्रसंग, शुद्ध रहीज्यो श्रावकां !।२२।।

न्यातीलां स्यूं नेह, अणहूंतो आछो नहीं।
छिन मैं देवै छेह, स्वारथ छूट्यां श्रावकां !।२३।।

पकड़ एक री पक्ष, न्याय निवाणै नां धरो।
पूजास्यो प्रत्यक्ष, समान समझ्यां श्रावकां !।२४।।

साची नेक सलाह, द्यो मत दिल देख्यां बिना।
बण कर बे-परवाह, साख न खोओ श्रावकां !।२५।।

उद्यम आगेवाण, जैनागम मैं जिन कह्यो।
तकदीरां रै तांण, समय न खोओ श्रावकां !।२६।।

अन्तर आंख उघाड, जोवो पथ जिनराज रो।
बांधो जीवन-बाड, सदा सुरक्षित श्रावकां !।२७।।

तप तीखी तलवार, करम कटक स्यूं जुध करण।
भरण सुकृत भंडार, सगती साहमो श्रावकां !।२८।।

सझो सुरंगो शील, बधसी घणी विशेषता।
झूल्यां संयम झील, शिव-सुख मिलसी श्रावकां !।२९।।

मिनखपणै रो मान, मानव बण खोवो मती।
इज्जत और ईमान, स्वयं बचाओ श्रावकां !।३०।।

भजल्यो श्री भगवान, भोर सांझ भल भाव स्यूं।
गेहरो-गेहरो ज्ञान, सझै नहीं जो श्रावकां !।३१।।

नहीं चहीजै नाम, इसा किता है आदमी।
कर्‌यां करण रो काम, स्वतः नाम है श्रावकां !।३२।।

फाड़ा-तोड़ी-फूट, मन रो जो मैलापणो।
लेवै निज गुण लूट, समझो स्याणां श्रावकां !।३३।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दलबन्दी-दीवार, काम नहीं देवै करण।
पेहली चहिजै प्यार, सब कामां मै श्रावकां !।३४।।

ओरां नै उपदेश, देणै मै के दक्षता।
बढ़ा विवेक विशेष, सुधरो थे खुद श्रावकां !।३५।।

अरे! अणूता आल, दूजां पर देवो मती।
होवै बुरो हवाल, सुजस न खोओ श्रावकां !।३६।।

राखो शासण-रीत, परम प्रीत गण-पूज्य स्यूं।
बाजोला सुविनीत, शोभा बढ़सी श्रावकां !।३७।।

थे मत खोओ थाप, बिना विचार्‌यां बोल कै।
चोखी है चुपचाप, सोच्या पेहली श्रावकां !।३८।।

चतुर और चालाक, अन्तर दोन्यां मै अधिक।
छोड़ो मन री छाक, सरल बणो थे श्रावकां !।३९।।

पूरब पुण्य प्रताप, मिली देह आ मिनख री।
परहा परिहर पाप, श्रमण-भूत बण श्रावकां !।४०।।

आतम-ज्ञान अनन्त, तर्क-तुला स्यूं नहिं तुलै।
तहमेवं ही तंत, सदा सिरे है श्रावकां !।४१।।

अणुव्रत-व्रत स्यूं ओप, आछी जीवन री अहो।
आडम्बर आटोप, सगला छोड़ो श्रावकां !।४२।।

अणुव्रत री ले ओट, खोट खराबी मति करो।
पापां री आ पोट, स्यान बिगाड़ै श्रावकां !।४३।।

कूड़ कपट रो कोट, खतरै स्यूं खाली नहीं।
गहरा ऊठै गोट, सुई न सूझै श्रावकां !।४४।।

चाल्यां खोटी चाल, पग-पग पिछताणो पड़ै।
पाणी पेहली पाल, सोहरी बंधणी श्रावकां !।४५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होवै काम हरेक, सहज विवेकी रा सदा।
विद्या बिना विवेक, शोभै कोनी श्रावकां !।४६।।

बधै सहज बहुमान, रलमिल सगलां स्यूं रह्यां।
बाजै जग बलवान, संगठन स्यूं श्रावकां !।४७।।

विनय सहित व्यवहार, खिण मैं जग नै खींच लै।
प्रगटै सहज्यां प्यार, सलिल बण्यां स्यूं श्रावकां !।४८।।

बदनीति, अति बात, खुद रो कर दै खातमो।
हियो राखज्यो हाथ, सुख पाओला श्रावकां !।४६।।

श्रावकपण रो सार, आचार्यां री आसता।
विमल विनय व्यवहार, सहनशीलता श्रावकां !।५०।।

सन्त-सत्यां रै साथ, हंसी-मसखरी हरकतां।
कोकथ करो न काथ, शरम राखज्यो श्रावकां !।५१।।

सदा करो सम्मान, सत्य शील सन्तोष रो।
सहज्यां बढ़सी शान, सारै जग मैं श्रावकां !।५२।।

कोई स्यूं भी काम, करडो बोल्यां नहिं कढ़ै।
पास्यो शुभ परिणाम, सावल बोल्यां श्रावकां !।५३।।

ओलखज्यो आचार, गण-मर्यादा गौर स्यूं।
विद्या रो विस्तार, संजम लारै श्रावकां !।५४।।

बगत-बगत रा बोल, नया-नया जो नीसरै।
तर्क तराजू तोल, मोचो समझो श्रावकां !।५५।।

आपसरी री ऐंठ, सुलझै समझोतो कर्यां।
पाछी जमज्या पेठ, संवली सोच्यां श्रावकां !।५६।।

अणबणती आसान, सहज नहीं है सुलझणी।
'मैं' रो मुधाभिमान, स्याणप खोवै श्रावकां !।५७।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जंचै नहीं जो बात, आचारज री आसता।
श्रद्धा भगती साथ, सुदृढ़ राखो श्रावकां !।५८।।

कष्ट पड़्यां कमजोर, पाछा देवै पांवड़ा।
साहमा मंड्यां सजोर, समर जीतस्यो श्रावकां !।५६।।

समकित रा सुविशेष, जतन जापता जो करै।
किंचित रहै न क्लेश, सरसै जीवन श्रावकां !।६०।।

चौबीसी चित चाव, अमल बना आराधना।
सहज रहै सद्भाव, सज्झाई रै श्रावकां !।६१।।

ऊंडो दै उपयोग, परमेष्ठी पंचक प्रवर।
सहज बढ़ै शुभ योग, स्मरण कर्‌यां स्यूं श्रावकां !।६२।।

बरतो बगत बिलोक, सीमा मैं रहकर सदा।
लारै होसी लोक, समय पिछाण्यां श्रावकां !।६३।।

आचारज री आंण, प्राणाधिक पहचाणज्यो।
तर्क फर्क युत तांण, श्रेष्ठ नहीं है श्रावकां !।६४।।

नवकरवाली नित्य, चवदह नियम चितारणा।
करो सदा रो कृत्य, शांत भाव स्यूं श्रावकां !।६५।।

गुरु-बचनां पर गोर, गहरा गुण बधसी घणां।
कालेजां री कोर, संघ संघपति श्रावकां !।६६।।

कर मन पर कंट्रोल, रूप देख रीझो मती।
आछी सीख अमोल, सत्पुरुषां री श्रावकां !।६७।।

अवसर नै अवलोक, वरतै बोही विज्ञ है।
लेक्चर झाड़्यां लोक, सहमा मंडसी श्रावकां !।६८।।

बे-मतलब बिखबाद, बढ्यां बणै विसमी स्थिती।
आत्मा मैं आंल्हाद, सदा बढ़ावो श्रावकां !।६९।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करड़ो कोई काम, अणचिंत्यो आवै अगर।
समरो भिक्खू स्याम, संकट टलसी श्रावकां !।७०।।

तीखा-तीखा तीर, मत मारो थे मरम का।
चिल ज्यावै चित चीर, शब्दां साटै श्रावकां !।७१।।

तारक तेरापन्थ, भिक्षू गणि खोज्यो भलो।
अडिग मना अत्यन्त, सुर तरु सेवो श्रावकां !।७२।।

माता-पिता समान, का भाई भल भाव स्यूं।
मित्र मित्र मतिमान, सोक बण्यां मत श्रावकां !।७३।।

सालै नान्ही शूल, खिण-खिण मैं खटको रहै।
शंका है प्रतिकूल, सुध समकित मैं श्रावकां !।७४।।

अटल मना आत्मस्थ, अविचल करो उपासना।
मत बणज्यो मध्यस्थ, संत-सत्यां रा श्रावकां !।७५।।

अणसमझू अणजाण, बात विचार सकै नहीं।
नाहक ही नुकसाण, सटकै करलै श्रावकां !।७६।।

सुगुण सयाणां संग, टालोकड़ रो टालज्यो।
रंग्या शासण-रंग, सदा रहीज्यो श्रावकां !।७७।।

निन्दक स्यूं अति नेह, अपछन्दा स्यूं प्रीत अति।
खिण मैं उडज्या खेह, श्रावकता की श्रावकां !।७८।।

हिंसा स्यूं तज हेत, अमल अहिंसा आचरो।
खड्या रहो रण खेत, समय पड्यां थे श्रावकां !।७९।।

मिनख, मिनख रो मोल, मिनखपणै स्यूं मापसी।
त्याग-तराजू तोल, शासण मैं है श्रावकां !।८०।।

श्रद्धा विनय समेत, धारो आगम धारणा।
रत्न नहिं ज्यावै रेत, सरस सुधा मैं श्रावकां !।८१।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फहम बिना री बात, चतुरां ! सुण चमको मती।
हियो राखज्यो हाथ, समय-समय पर श्रावकां !।८२।।

आगम रो उपकर्म, गुरु गम स्यूं गहरो हुवै।
मुश्किल मिलणो मर्म, स्वयं पढ्यां स्यूं श्रावकां !। ८३।।

मनमत्ते मतिमान, बणणो जाणै है बहुत।
अवरोधै उत्थान, स्वयं स्वयं रो श्रावकां !।८४।।

मोटा महिमावान, नमै सदा नल-नीर ज्यूं।
ओछां रै अभिमान, सटकै आवै श्रावकां !।८५।।

नाहक निन्दक लोक, कर्मठोक निन्दा करै।
जाणै बणकर जोक, सार चूसलै श्रावकां !।८६।।

निमल करो नित नेम, सामायक सज्झाय वर।
सेवा टेमोटेम, संत-सत्यां री श्रावकां !।८७।।

बे-मतलब कर बेहम, बात-बात मै बीचरै।
बाजै बो बे-फेहम, शूल सरीखो श्रावकां !।८८।।

बिना रीत री बात, देखो तो झट टोकद्यो।
पकड़ो मत पखपात, स्याणां सोतां ! श्रावकां !।८९।।

देखो जो कोइ दोष, कहो जग्यांसर कहण री।
मन नै व्यर्थ मसोस, सहन करो मत श्रावकां !।९०।।

निकमा ले ले नाम, रोला करणा रोज रा।
कोनी थांरां काम, सजग रहीज्यो श्रावकां !।९१।।

रख-पख झूठी राख, गाला गोलो गुरु कन्है।
सटकै खोवै साख, शोभा सगली श्रावकां !।९२।।

बोलै कड़वा, बोल, जहर घोलकर जीभ मै।
टांकी लगै न टोल, स्नेह टूटज्या श्रावकां !।९३।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बाजारां मै बैठ, कूड कपट करता रहै।
पल मै विकज्या पेठ, सो बरसां री श्रावकां !।९४।।

कैंची देवै काट, सी देवै पल मै सुई।
पढ़ो प्रेम रो पाठ, सुइ-डोरै स्यूं श्रावकां !।९५।।

सावधान सविधान, सोगन मैं रहिज्यो सदा।
मानवता रो मान, सदा राखज्यो श्रावकां !।९६।।

छोड़ो होडा-होड, जीवन नै हलको करो।
आ है नूंई मोड़, सावल सोचो श्रावकां !।९७।।

प्रायः मन मै कोड, आंणै-टांणै पर हुवै।
आ है नूंई मोड़, (थे) संजम सीखो श्रावकां !।९८।।

आडम्बर द्यो छोड़, जलम मरण अरु ब्याव मैं।
आ है नूंई मोड़, सदा सादगी श्रावकां !।९९।।

तांता द्यो थे तोड़, आर्त-रौद्र दो ध्यान स्यूं।
सौ को एक निचोड़, सीधा चालो श्रावकां !।१००।।

दोहा

दो हजार सतरह सुखद, द्वि-शताब्दी को दौर।
संघ-चांद थे श्रावकां !, 'चम्पक' बणो चकोर !।१०१।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संत-चेतावणी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होणो नहीं हिमायती, दुर्गण बीच दलाल।
'चम्पक' सन्त स्वभाव रो, सन्तां ! राखो ख्याल ॥१॥

चाली 'चम्पक' चालणी, छद्म बतावण छेद।
सन्त स्वात्मदर्शी सदा, भेदी भांपै भेद ॥२॥

धिंगाणिया 'चम्पक' धसै, धींगामस्ती धींग।
पण सन्ता ! मूंगा पड़ै, घणा बध्योडा सींग ॥३॥

अड़ो न 'चम्पक' द्यो अभय, दयापात्र है दीन।
सन्तां ! समता धर्म है, मत गूंदो गमगीन ॥४॥

सन्तां जाय स्वभाव कद, 'चम्पक' साधै सूध।
रला मींगण्यां रोज ही, बकरी देवै दूध ॥५॥

उद्यम मैं 'चम्पक' उकत, होणो नहीं हरान।
रुत आया सन्तां ! सरस, फल देवै फलवान ॥६॥

मोटा ही माफी करै, नमसी 'चम्पक' नरम।
सन्तां ! राख्यां सरैला, धीरप, धीरज, धरम ॥७॥

कीड़ी पर 'चम्पक' कटक, कमजोरां पर खार।
सन्तां ! मर्‌योड़ां नै अबै, थे के करस्यो मार ॥८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कसतां ही किचरो हुवै, 'चम्पक' कांसी, कांच।
सन्तां! रजमो राखज्यो, नहीं सांच नै आंच॥९॥

कहणै मै कुछ और ही, करणो चम्पक और।
राजनीति री रीत आ, सन्तां! करल्यो गौर॥१०॥

मिनख मतै मोती मिणै नैण-निवाणां नीर।
रुलपट री सन्तां! किसी, 'चम्पक' लेण-लकीर॥११॥

साथी-संगल्या कद सहै, चेला चांटी चोट।
'चम्पक' रलज्या गेडिया, सन्तां! मोटा मोट॥१२॥

सिर पोसी के बो सुई, दिन मै दीसै न बीम।
सन्तां! सार न कहण मै, 'चम्पक' कड़वो नीम॥१३॥

कमसल तजै कुबाण कद, 'चम्पक' कढ़े न काण।
सन्तां! रेत रलावणो, श्रम नै व्यर्थ सुजाण॥१४॥

मृदुता स्यूं 'चम्पक' मिनख, करदै काम सहर्ष।
सन्तां! रोल्यां रेत मै, आंधो ह्वै आदर्श॥१५॥

'चम्पक' करल्यो जापतो, बगत बड़ो विकराल।
सन्तां! रोक्यो नहि रुकै, पाणी फूटा पाल॥१६॥

मांचै मढ़ी मुंजेवड़ी, कुण थे-म्हे के तेन।
'चम्पक' सन्तां! नहि छुटै, गूंथीज्योड़ा जेन॥१७॥

सन्तां! रखपख डसरूंगस, रो जीनां री राड़।
राजनीति रो रोल ओ, 'चम्पक' पटक पछाड़॥१८॥

झूठा झूरै झूरणां, 'चम्पक' चिण अवरोध।
सन्तां! पोतै ही पड़ै, पापी खाड़ो खोद॥१९॥

व्याज वृद्धि विद्या विविध, असल रकम आचार।
सन्तां! देणो फालतू, बिगड़यै तिवण बघार॥२०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चहरै चलकै चतुर रै, आचरणां री आब।
सन्तां ! नहिं रहणै सकै, रगड्यां क्रीम रबाब ।।२१।।

दूजा रै शिर द्यो मती, इज्जत रो इल्जाम।
सन्तां ! गलै न घालणी, बलबलती बेकाम ।।२२।।

मदवो बण मरदै मुलक, ईख चाब कर ईम।
सन्तां ! विष उगलै विसम, जीम'र मीठो जीम ।।२३।।

इज्जत स्यूं इज्जत बधै, उपकृति स्यूं उपकार।
सन्तां ! रंजिस स्यूं रंजिस, प्यार बधावै प्यार ।।२४।।

सन्त सादगी स्यूं रहै, उंडी बात विचार।
सन्तां ! रंगत रोल दै, आ फिट-फाट अबार ।।२५।।

दूजी तरफ द्विरूपता, एकीपण इक ओर।
सन्तां ! रीती ही रहै, अपणायत अंगोर ।।२६।।

रहणो उज्जल धोलियो, ऐयाशी रा ऐन।
सन्तां ! नै शोभै नहीं, नित री फेना-फेन ।।२७।।

एक तरफ, ओझै, धुजै, हाथ दूसरी ओर।
सन्तां ! कुण टिकसी कहो, इसी बेरुखी ठोर ।।२८।।

अपणां स्यूं रहै अणमणो, हमजोल्यां स्यूं हेत।
सन्तां ! अणबण रो पड्यो, सीधो सो संकेत ।।२९।।

संयम-रुचि जिण रै जची, रची संघ शुचि संग।
सन्तां ! जीवन जंग मै, ऊंच रखै उचरंग ।।३०।।

घुट-घुट घोटै घूनरो, कहै न मन री खोल।
सन्तां ! छानो नहि रहै, गट-पट गट्टा गोल ।।३१।।

जाण रेत रा रमतियां, खमसी खिमता खाण।
सन्तां ! रमकर ऊठतां, टाबर देत भिसाण ।।३२।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मतिधर नहिं मारै मरक, गम खावै गम्भीर।
सन्तां ! रल-मिल कर रहो, परख परायी पीर ॥३३॥

सुधारणी सलटावणी, घर मै घर की बात।
सन्तां ! बारै बोलणो, सदा संघ रै साथ ॥३४॥

चुगली खावै चेहरो, चलगत कहै चलाक।
सन्तां ! रोकी कद रहै, तरकीबां री ताक ॥३५॥

मोटां सागै मसखरी, छोटां सागै छोल।
जद कद हद रासो करै, सन्तां ! आ रिगटोल ॥३६॥

होणहार रै हाथ है, जस अपजस रो जोग।
सन्तां ! रोलो घाल दै, लारै लाग्यां लोग ॥३७॥

काम-काज रै कोड मै, झगड़ो झालै झोड़।
सोच समझ सन्तां ! मुड़ो, मनमुटाव री मोड़ ॥३८॥

जाणी मुसकिल जलमभर, टाबरपण री टेव।
सन्तां ! दाग न लागज्या, सजग रहो स्वयमेव ॥३९॥

आछा नै ओपै नहीं, ठट्ठा ठोल मखोल।
सन्तां ! बात बिगाड़ दै, ओछा अणघड़ टोल ॥४०॥

धसकै पग निचलीधरा, डरसी बो डरपोक।
सन्तां ! नेडो नहिं रहै, सावधान रै शोक ॥४१॥

पलमा खोलै पारका, ढकण आपरी ढीम।
सन्तां ! रोग मिटा सकै ? हजरत नीम-हकीम ॥४२॥

तानो सहै न ताजणो, तेजी तजै न ताव।
सन्तां ! रेकारो सुण्यां, उबल जाय उमराव ॥४३॥

थानां लगै न थींगला, थलवट रो के थोभ।
सन्तां ! सत्य चुभै नहीं, चोभ लोभ रै खोभ ॥४४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुटिचर स्यूं दस-दस कदम, दुर्जन स्यूं दो खात ।
सन्तां ! टलजो दूर स्यूं, शठ स्यूं सौ-सौ हाथ ।।४५।।

उकतै नहीं, उछलै नहीं, धीरा धीरप धार ।
सन्तां ! सोनो सुध हुवै, तप-तप चोटां खा र ।।४६।।

ढ़ाल जठीनै जल ढलै, निरणो न्याय निवेड़ ।
सन्तां ! रांटो ही रहै, पंखा बाहिरो पेड़ ।।४७।।

पाप पलीतो पीलियो, पांव पांवणी दार ।
सन्तां ! राख्यो रह सकै, दाबा'र कितीक बार ।।४८।।

अै परसंसक अहितकर, फूलो मती फिजूल ।
सन्तां ! रहस विचारज्यो, भलो बतासी भूल ।।४९।।

छद्म छिपायो कद छिपै, बोयो पेड़ बबूल ।
सन्तां ! उघड़्यां ही सरै, धींठ धकेलै धूल ।।५०।।

भूल करै अै भायला, भडका जसरी भूख ।
सन्तां ! रसतो ही रुलै, चेतो जावै चूक ।।५१।।

जथा जोग जाचो जुगत, मान-तान मनुहार ।
रीत-रीत रा शोभसी, सन्तां ! अै सतकार ।।५२।।

यज्ञ-याम-यम-यामिनी, योग, योग्यता, याद ।
सन्तां ! रस खोवै विवस, पडतां पांण प्रमाद ।।५३।।

ठीमरता स्यूं ठहरसी, रतन रत्ती रू रबाब ।
सन्तां ! रिगटोल्यां सदा, खेमो करै खराब ।।५४।।

लंपट, लोलुप, लालची, लोपै लाज लकीर ।
रांगा रूंगा साटिया, सन्तां ! सहे न सीर ।।५५।।

वाक् चातुर्य, वदान्यता, विद्या, विनय, विवेक ।
सन्तां ! राखो रेख नै, अरजित कर आरेक ।।५६।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शान्त साधना साधणी, शरद चन्द्र-सी श्वेत।
सन्तां! शोभा संघ री, हिल-मिल राख्यां हेत ॥५७॥

भिन्न भिन्न नय भेद में, षट् दर्शन षट् कोण।
सन्तां! स्याद्वादी गुणी, गुण नै करै न गोण ॥५८॥

सेवा सुमिरण सादगी, साम्य योग स्वाध्याय।
सन्तां! रच्या-पच्या रहो, संयम स्वान्त सुखाय ॥५९॥

कर्‌यां दलाली कोल री, होसी काला हाथ।
सन्तां रहणो नहिं कदे, संज्ञा चूकां साथ ॥६०॥

मित बोलो वक्तव्य में, क्षमा करो क्षंतव्य।
सन्तां! रीत-रिवाज स्यूं, कार्य करो कर्त्तव्य ॥६१॥

ब्रह्मचर्य रो वदन मैं, त्राटक को सो तेज।
सन्तां! रोब रबाब है, आंख्यां रो आदेज ॥६२॥

जाणो, जोता लागग्या, (जद) ज्ञानी करै गुमान।
सन्तां! रती बधावणी, विनयी बण विद्वान ॥६३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुलाब गुणचालीसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोहा

अलड-बलड़ अनुचित अधिक, खाणो करै खराब।
'चम्पक' उदर उणोदरी, गुणकरणार गुलाब !।१।।

आवै ज्यूंही ऊर दै, खाऊ लेण खिताब।
'चम्पक' चेतो बापरै गड़बड़ हुयां गुलाब !।२।।

इमरत सो करसी असर, लूखी रोटी राब।
'चम्पक' भूख बिना भख्यां, गोटाइ गरल गुलाब !।३।।

ईं ऊमर मैं आमली, आम्बोली मत चाब।
'चम्पक' केरी काचरी, आब गमाय गुलाब !।४।।

उपराथली ज ऊरणो, बे-जर बिना हिसाब।
'चम्पक' चरणै रो चकर, गेहलो कार गुलाब !।५।।

ऊंखल, घट्टी, खल, थली, छाज, बुहारी, छाब।
'चम्पक' चूल्हें बैठणो, अशुभ गिणै रे गुलाब !।६।।

एक हाथ है एकलो, दो रो दूणो दाब।
'चम्पक' एकै एक मिल, ग्यारह हुवै गुलाब !।७।।

ऐकान्तिक अत्याग्रह, ताण्यां बधै तिजाब।
'चम्पक' समझोतो सदा, गमतो लगै गुलाब !।८।।

ओथाणा नींबू-मिरच, अै आचार निकाब।
'चम्पक' चीजां तामसी, गुण के करै ? गुलाब !।९।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

औरां नै अपणो चहै (तो) सेवा साझं सताब।
'चम्पक' चाम चबै नहीं, गमसी काम गुलाब !।१०।।

अंतस रो ओजस बधा, आपेइ बधसी आब।
'चम्पक' चाल कुचाल स्यूं, पिचकै गाल गुलाब !।११।।

करड़ो नहिं कहणो कदे, ज्वर मैं जियां जुलाब।
भाजन बिन 'चम्पक' भलो, गम खा बैठ गुलाब !।१२।।

खाटो खारो खोपरो, खोडी खांड खिजाब[1]।
'चम्पक' छोडै खट् खखा, ज्ञानी संत गुलाब !।१३।।

गरम-गरम गलगच, गिजो, गल्यो, गरिष्ट, गिराब[2]।
'चम्पक' गफलत मैं गिटै, (तो) गलै शरीर गुलाब !।१४।।

घमड़ी घाती घूनरो, घपली घाव घिजाब[3]।
'चम्पक' घाल, घणेर मत, (अै) घातक घणा गुलाब !।१५।।

चाय चबीणी चीकणी, चूरी चाट चटाब[4]।
'चम्पक' चिपक्या अै चचा, गेल न छुटै गुलाब !।१६।।

छद्मस्ती री छोल मैं, छल मत, छेड न जाब।
'चम्पक' चौनाणी चुकै, (तो) गूमर किस्यो गुलाब !।१७।।

जयणां 'चम्पक' जीव री, जुगतो जुगत जबाब।
आं दोऊं बातां दिपै, गण मैं सन्त गुलाब !।१८।।

झक्की झूठो झींपरो, झोड़ी बिना हिजाब[5]।
'चम्पक' टकर्यां जो टलै, गौरव बधै गुलाब !।१९।।

---

१. केश कल्प।
२. तोप के गोलै सो बिना चबायो।
३. पुराणो घी।
४. चाटणे री आदत।
५. शर्म।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टच्चर टाबर टिंगर स्यूं, टणकां स्यूं टकराव।
'चम्पक' शोभै नहिं चतुर, गुणिजन कहै गुलाब!।२०।।

ठगा'र ठोकर खा'र ह्वै, ठीमर ठाकर-साब।
'चम्पक' नहिं चेतै, गधो, गुलक[1], गिवार, गुलाब!।२१।।

डबकै डिगली चूक डफ, डालां डोलै डाब।
'चम्पक' जग जूता जड़ै, गलियां मांहि गुलाब!।२२।।

ढ़ब्बूशाही ढींगलो, ढ़बस्यूं ढंगस्यूं ढ़ाब।
'चम्पक' बुचकार्‌या बहै, गूंगो, बलद, गुलाब!।२३।।

तण्यां-धण्यां ही तर्क कर, खुद रह खुली किताब।
'चम्पक' चर्चा गेल स्यूं, गोला करै गुलाब!।२४।।

थंभा! थां सरिखा थकै? (तो) छत थांभण कुण थाब[2]।
'चम्पक' शासण आपणो, सांस न गेर गुलाब!।२५।।

दब्बू दुम्मी नै दकी, देवै हरकोइ दाब।
'चम्पक' फुंक्कारै फणी, (तो) रोब रवाब गुलाब!।२६।।

धण्यां कन्है धाडा पड़ै, धींगामस्ती धाब[3]।
'चम्पक' जो बोलै बिरै, पड़ै गदीड़ गुलाब!।२७।।

नर राखै नीची निजर, नैणां न्हांख नकाब[4]।
बायां स्यूं बोलै जणां, 'चम्पक' चेत गुलाब!।२८।।

पड़ै नहीं पड़पंच मैं, पजै न जाल-जराब[5]।
'चम्पक' पग नहिं चातरै, गहर गंभीर गुलाब!।२९।।

---

१. मदवो ऊंट।
२. समर्थ।
३. खुल्लै आम।
४. पडदो।
५. पगां रा मोजा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फहीड़ा फैंकै पड्यो, निकमो बणण नबाब।
'चम्पक' बादल बरसणो, गरजै नहीं गुलाब !।३०।।

बलज्या, बट जावै नहीं, जड़ जेवड़ी जनाब[१]।
बचन चूक 'चम्पक' बुरो, गट गुड़ज्याय गुलाब !।३१।।

भला आदमी ! भड़क मत, ताव खा'र बे-ताब[२]।
'चम्पक' अै भाटा भिड़ा, गुमराह करै गुलाब !।३२।।

मन राखीजे मोकलो, मोड़ै रा मेहराब[३]।
मांदा नै महमान नै, मरक न मार गुलाब !।३३।।

यद्यपि यूयं-युयं है, वयं-वयं मिजराब[४]।
'चम्पक मिश्री मैं मिल्यां, गुलकंद हुवै गुलाब !।३४।।

रहन सहन मैं राजसी, रीति-रिवाज रकाब[५]।
'चम्पक' रंजिस रंचसी, गरदो करै गुलाब !।३५।।

लगड़ पेच लल्लै चपै, 'चम्पक' लखै लखाब[६]।
लखणा रा लाडा लेवे, लुगड लपेट गुलाब !।३६।।

व्यवहारां मैं विविदिशा, (तो) विद्या बुद्धि वियाब[७]।
'चम्पक' विनय विवेकवर, बण गतिशील गुलाब !।३७।।

समकित संयम साथ मैं संघ आथ असबाब[८]।
'चम्पक' निर्मल चित्त स्यूं, ग्रन्थ्यां खोल गुलाब !।३८।।

---

१. बड़ो आदमी।
२. उंतावल मैं।
३. ताज।
४. सितार बजाणै को छल्लो।
५. लेण-देण।
६. लक्षण।
७. सफल।
८. सामान।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हसतै खिलतै हृदय रो, हाल, हियाव, हिसाब।
'चम्पक' न्यारो ही हुवै, घुल-मिल देख गुलाब !।३९।।

कुंडली-छन्द

चेजो चेजारो चिणै, नींवां निरख गुलाब।
झड़, झाड़ो, झोलो, झिड़क, झील झिलै क तलाब ?।
झील झिलै'क तलाब ? खोह रख राजरूपजी की-सी।
दो हजार बाइसै, 'चम्पक' गुणचालीसी।।
पूरी, पग मजबूत चाहिजै ठंडो भेजो।
नींवां निरख गुलाब ! चिणै चेजारो चेजो।।४०।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमारथ-पावड्या

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोहा

काट च्यार घातिक करम, प्रतिहार्याष्ट प्रतीक ।
चम्पा ! अर्हत्-पद प्रणम, तीर्थंकर तहतीक[1] ।।१।।

करै सिद्ध श्रेयस सजग, नमूं सन्त निर्भीक ।
चम्पा ! चिन्तव चेतना, लम्बी खांची लींक ।।२।।

कृपा हुवै गुरुदेव की, जावै भव-स्थिति पाक ।
सेवा सन्ता री सझै, 'चम्पक' तिरै चटाक[2] ।।३।।

कठिन मार्ग है मोक्ष रो, चम्पा ! अलख अलीक[3] ।
सन्ता बिना अनन्त को, अन्त नहीं नजदीक ।।४।।

कोमल परिषद् प्रशंसा, मीठो जहर मनाक[4] ।
चम्पा ! स्तुति-पथ फिसलणो, पड़ै प्रमत्त तड़ाक ।।५।।

कृष्ण, नील, कापोत मैं, राग-रोष नै रोक ।
धर्म-शुक्ल धार्यां ढ्है, चम्पा ! च्यारूं चोक ।।६।।

कहणै री कह सामनै, नहिं तर चुप ही ठीक ।
वीतराग विधि बांधग्या, चम्पा ! लोप न लीक ।।७।।

---

१. सत्य ।
२. झट ।
३. अदृश्य ।
४. थोड़ा-सा ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केहबत इण मैं है किसी ? बात बड़ी बारीक।
चम्पा ! धर्म-ध्यान मैं, राख हृदय रमणीक ॥८॥

कुण जाणै कद आउखो-बन्ध ज्यावै बन्दाक।
अप्रमत्त चम्पा ! रही, छोड़ छद्म की छाक ॥६॥

कुमति-कला कूंची कली आस्था राख अनंक।
शंका-कंखा सांप रा, चम्पा ! समझी डंक ॥१०॥

किसो जीवणो सो बरस, बैठ्यो कियां निसंक।
कर करणी चूकै अणी, चम्पा ! पाप प्रयंक ॥११॥

कर्म कर्योडा भोगणा, उदय पाडदी हाक।
चम्पा ! क्यूं चल-विचल-मन, मचकोड़ै मुंह-नाक ॥१२॥

कुशल ! जरा कौशल दिखा, झुककर चम्पा ! झांक।
घट-कूअै कचरो घणो'क, पाणी ? आकां आंक ॥१३॥

काछ-बाच रो साच जो, चम्पा ! कहै दडूक।
क्षणिक तनिक सुखहित मती, वधा अनन्तो दुःख ॥१४॥

करै गयी को सोच के ? चम्पा ! अब मत चूक।
तन की पोटी पूरयी, (पण) मन की मिटी न भूख ॥१५॥

कुम्हलावै चम्पा ! तुं क्यूं ! माथे मांडी बूक।
मणांबन्द मिसरी गिटी, फीको फिर भी थूक ॥१६॥

कोरी मींड्यां मांड दी, एक न मांड्यो अंक।
धर्म-अंक लारै धरै, (तो) चम्पा ! लागै लंक ॥१७॥

के है बन्धन ? क्यूं बंधै ? टूटै कियां विपाक ?
चम्पा ! थोड़ो सोच क्यूं, देवै उख परिपाक ॥१८॥

काम-भोग दुख रोग है, तांता तोड़ तड़ाक।
सुख रो रुख संतोष है, चम्पा ! चेत चटाक ॥१९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुटिल चित्त चंचल-चपल, पड़ै पाप रै पंक।
चम्पा ! फूलां रै तलै, शूलां रो आतंक ।।२०।।

कामी, कपटी, कलुष कल, रुलतै मन नै रोक।
चम्पा चंचलता मिट्यां, सरसी सगला थोक ।।२१।।

औरां रो ऐश्वर्य सुख, झांक रांक मत रींक।
करणी करतां क्यूं तनै, आवै चम्पा ! छींक ।।२२।।

कर्मभोग समभाव स्यूं, आली मत कर आंख।
चम्पा ! बांध्या चीकणा, रोवै क्यूं बण रांक ।।२३।।

काम किस्यो छोटो बड़ो, चम्पा ! चढ़ग्यो चोक।
पोजीसन रो रोग क्यूं, घर मैं घाल्यो लोक ।।२४।।

काम ओ कर्‍यो बो कर्‍यो, बदलो मांग वराक।
चम्पा ! ढ़ोवै भार क्यूं, सीधो काढ़ सुराक ।।२५।।

कुण के केवै के करै, कौण ठीक-बे-ठीक।
चम्पा ! चिंता और की, करण बुद्धि बारीक ।।२६।।

क्यूं कांदै रा छूतरा, छोलण बणग्यो छेक।
आड-डोड आग्रह हटा, चम्पा ! जगा विवेक ।।२७।।

कोमल मन स्यूं कर क्षमा, निपट माननै न्हांख।
भूलां ओरां री भुला, खुदरी भूलां झांक ।।२८।।

कर करुणां, वात्सल्यता, खमा जा'र नजदीक।
चम्पा ! ओरां रै झुकण, नै तूं मती अडीक ।।२९।।

क्रोध कर्‍यो गुरु मरडबण्या, चंदकौशिक विष फूंक।
चम्पा ! पायो शान्तिधर, केवल कूरगडूक ।।३०।।

क्रोध कलह कारण कह्यो, शान्ति शान्ति सिंदूक।
कर विशाल चम्पा ! हियो, मत बण कूप-मंडूक ।।३१।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुण आतमा परमातमा, विषय बड़ो बारीक।
सुलझ्यो गुरु सुलझा सकै, चम्पा ! ठीमर ठीक ॥३२॥

करामात चम्पा ! सिखी, घणी जमाई धाक।
भेद-ज्ञान पायां छुटै, जलम-मरण री छाक ॥३३॥

के ठा किसै शुभोदये, चम्पा ! ऊग्यो अर्क।
बण निशल्य निर्मल असल, अब के तर्क-वितर्क ॥३४॥

कुगुरु-सुगुरु धर्माधरम, चम्पा ! समझ्यो फर्क ।
अबकै समकित चरण रो, मिल्यो सहज सम्पर्क ॥३५॥

किती वार निश्चय कर्‌यो, अब मत अवसर ताक।
चम्पा ! आद अनाद रो, तीन पात रो ढाक ॥३६॥

कह्यो मान चम्पा ! न रुक, स्हास राख मत थाक।
लम्बो गेलो काटणो, अठी-बठी मत ताक ॥३७॥

कुशल-खेम इण डील रा, लुल लुल पूछै लोक।
चम्पा ! गुण चारित्र रा, जगा विवेक, विलोक ॥३८॥

करणी किरियाराधना (तो) लै आग्या आलोक।
आज्ञा ही आगम-अगम, चम्पा ! जीवन झोंक ॥३९॥

क्रोधी कजियो कर करै, नर जीवन नै नरक।
स्वर्ग शान्ति मैं है सदा, चम्पा ! बोलै चरक ॥४०॥

करणी रा सब लाड है, कृत-फल चम्पा ! चाख।
रेख-मेख आ कर्म री, नींमा फलै न दाख ॥४१॥

कद को बह्यो विभाव मैं, हाय-बोय रो रोग।
अब अबन्ध परिणाम स्यूं, चम्पा ! समचित भोग ॥४२॥

के ठा कुणसै जलम रा, शेष भोगणा भोग।
चम्पा ! चुकै उधार क्यूं, बिलखो देख बिजोग ॥४३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर मत भौतिक कामना, कृत-करणी मत बेच।
पुद्गल सुख है पांवला, चम्पा ! लड़ा न पेच ॥४४॥

के देखै चम्पा ! खड्यो, खिणै गधेड़ा खाज।
तूं करसी तो मैं करूं, बणग्यो समज[1] समाज ॥४५॥

के होग्यो चम्पा ! इयां, मूरत सो मुंहताज ?
समृद्धि सम्पन्न क्यूं, बण्यो भिखारी आज ? ॥४६॥

कदको कादै मैं कल्यो, पड्यो'र चम्पा ! चेत।
अबकै फिर बोइ मती, गांव-गोरवैं खेत ॥४७॥

कुत्सित-बुद्धि कु-ज्ञान कद, मिटसी रे मन मीत।
सुण चम्पा ! सत्संग है, परमारथ री प्रीत ॥४८॥

करुणा कर सद्गुरु दियो, चम्पा ! समकित पोत।
कर चरित्राराधना, मिलै जोत मैं जोत ॥४९॥

कर मत देरी, कस कमर, उठ न झांक इत-उत्त।
भक्ति समर्पण मैं भिजो, चम्पा धोलै चित्त ॥५०॥

कर्‌या आपरा कर्म ही, है सुख दुख रा हेतु।
चम्पा ! सूरज चांद नै, ग्रसलै राहू-केतु ॥५१॥

कोमल मन करुणा भर्‌यो, पावन हुवै प्रसस्त।
चम्पा ! क्रूर कठोर-मन, अस्त व्यस्त अस्वस्थ ॥५२॥

कठै ज्ञान ज्ञान्या बिना, आंख बिना अखियार्थ।
चीन्ह ज्ञान कै च्यानणै, चम्पा ! आत्म पदार्थ ॥५३॥

करणी चम्पा ! नहिं करी, वक्त कर्‌यो बरबाद।
भीतरलै नै भूलग्यो, रह्यो बारलो याद ॥५४॥

---

१. पशुओं का समूह।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केद प्राण क्यूं पींजरै? मिल्यो न अन्तर भेद।
छेद-भेद समझ्यां बिना, चम्पा! खेद ही खेद ॥५५॥

काम इसो कर, रात नै, आय निचिन्ती नींद।
छोड़ परायी पींदणी, चम्पा! अपणी पींद ॥५६॥

करड़ा बन्धन दो कस्या, चम्पा! मन मोह अंध।
एक सहज स्वच्छन्दता, दूजो है प्रतिबंध ॥५७॥

काम कठिन के सरल के? सुख-दुख एक समान।
चोखी-ओखी चीज तो, चम्पा! मन रो मान ॥५८॥

काया माया कारमी, जो जाणै सो जाण।
सत्य सरल सीधो सुगम, चम्पा! प्रकृति पिछाण ॥५९॥

कुण जाणै चम्पा! कणां, कसणो पड़ै पिलाण।
काल कौतुकी की कला, कहो कुण सक्यो पिछाण ॥६०॥

काठो राखी कालजो, चम्पा! कहणो मान।
आर्त-ध्यान मत आदरी, ध्यायी धर्म-ध्यान ॥६१॥

कारण पुनरागमन रो, सूक्ष्म शरीर सुजाण।
चम्पा! छोटोड़ो छुटै, (तो) निश्चय निर्वाण ॥६२॥

कालो काजल पाड़ मत, दीपक! ज्योति स्वरूप।
सर्व शक्तिमय क्यूं पड्यो, चम्पा! बण विद्रूप ॥६३॥

किस्यै जलम रा के पतो, संच्योड़ा पुन-पाप।
किस्यै जलम मै ऊघड़ै, चम्पा! रह चुपचाप ॥६४॥

कान, आंख, मुंह, नाक नै, लै चम्पा! ढ़क ढूंम।
साध खेचरी सुरसरी, लडालूम बन झूम ॥६५॥

किण नै तूं अपणो कहै, चम्पा! क्यूं ललचाय।
जींव अकेलो जलमियो, अन्त अकेलो जाय ॥६६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कली-कली चम्पा ! खिलै, दिन लेखै मैं आय ।
शान्ति, स्नेह, सन्तोष, सुख, समता मैं दिन जाय ।।६७।।

करणी करणै वासतै, आछो दिन कोड़ ओर ।
मुश्किल मिलणो आज स्यूं, कर चम्पा ! कुछ गोर ।।६८।।

काल-काल मैं कालओ, बीत गयो बे-कार ।
परमारथ पायो नहीं, चम्पा ! सुरत संभार ।।६९।।

कोमल धागां मैं कियां, उलझ्यो आर्द्रकुमार ?
अनुबन्ध अनुराग रो, चम्पा ! जरा विचार ।।७०।।

कर पुरुषारथ पराक्रम, लै बल वीर्य बटोर ।
भूल जगत रै भंवर मैं, चम्पा ! पजी न और ।।७१।।

कनक कामणी दोय है, विग्रह मूलक वक्र ।
अंतहीन तृष्णा अमित, चम्पा ! मोटो चक्र ।।७२।।

कुपित कुलांछा मारता, भंवर विवर अणपूर ।
आरंभ और परिग्रह, चम्पा ! रहिजे दूर ।।७३।।

कोकाटा करती बहै, जलम-मरण री धार ।
उत्पादी व्यय ध्रौव्य मय, चम्पा ! ओ संसार ।।७४।।

करणै वालो नहिं कियो, दियो जमारो खो ।
चम्पा ! तूं रोवै किनै ? जिणनै रोणो रो ।।७५।।

कर विवेक, वैराग्य स्यूं, अधिक न आनन्द और ।
रम निर्मल निर्वेद मैं, चम्पा ! चतुर चकोर ।।७६।।

कांटै स्यूं कांटो कढ़ै, विष दै विष नै मार ।
मन स्यूं ही मन नै मना, चम्पा ! चोज लगा'र ।।७७।।

कियां हुवै कचरो सफा ? स्याणा सोच विचार ।
चम्पा ! आश्रव रा पड्या, खुला अठारह द्वार ।।७८।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

काढ़-काढ़ कचरो थक्यो, चम्पा ! कितोइ बुहार ।
(अै) भूंडा दोय भतूलिया, अहंकार-ममकार ॥७९॥

किस्यै भरोसै तूं करै, चम्पा ! ओ अहंकार ।
कठै बीरबल सिकंदर, हिटलर खोज निकार ॥८०॥

काल अनन्तो बीतग्यो, रड़बडतां रंगरोल।
मिनख-जमारो ओ मिल्यो, चम्पा ! आंख्यां खोल ॥८१॥

कम रासन रस्तो घणो, जगड़ वाल जंजाल ।
जानक थोड़ी जिन्दगी, चम्पा ! झटपट चाल ॥८२॥

कर आत्मा रो काम तूं, झूठै जग मत झूल ।
म्हारापण नै दै मिटा, चम्पा ! भेद न भूल ॥८३॥

कसर लारली काढ लै, मिल्यो रत्नत्रय मेल ।
चम्पा ! पगमत चांतरी, चिल्लां चालै रेल ॥८४॥

करी हिफाजत देह री, गयो चेतना भूल ।
चम्पा ! अब भी चेतज्या, हाल-हाल अनुकूल ॥८५॥

कह्यो मान चम्पा ! करै, क्यूं तूं ताव खिंचाव ।
जीव स्वभाविक शुद्ध है, ओ विभाव भटकाव ॥८६॥

कमर बांध कर आज कै, दिन मै करी प्रवेश ।
माथै मरणो मंड़ रह्यो, चम्पा ! अगत अणेश ॥८७॥

किती किताबां पढ़ भले, करलै डिगर्‌यां पास ।
मुक्ति क्रिया अभ्यास बिन, (के) चम्पा ! सोहरे सास ॥८८॥

क्रिया-बाट नै कर उंची, चम्पा ! दिवलो चास ।
आछो मण भर ज्ञान स्यूं, रत्ती भर अभ्यास ॥८९॥

क्यूं उलझ्यो शब्दां मदां, अन्तर ज्ञान्यां पास ।
प्रश्न पडूत्तर कर परख, चम्पा ! बुझसी प्यास ॥९०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रोध कलुषता ल्या मती, चम्पा ! मन न मसोस।
कर्‌या आपरा भुगतणां, दूजां नै कै दोष ॥६१॥

करम कमेड़ी रा कर्‌या, चम्पा ! हथ-सी हूंस।
होड हवेल्यां री करै, नहीं छान पर फूस ॥६२॥

केवल मन ही बंध रो, कारण मन ही मोक्ष।
चम्पा ! मन जीत्यां विजय, है प्रत्यक्ष परोक्ष ॥६३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रमण-बावनी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

ॐ अरिहन्त अकर्म, सिद्ध सन्त गुणवन्त शुभ।
केवलि-भाषित धर्म, 'चम्पक' लै शरणो श्रमण !।१।।

अवसर रो अहसान, भूल्यो नहिं जावै भलो।
जो चावै सम्मान,(तो)'चम्पक' सज्जन बण श्रमण !।२।।

अहंकार आवेश, 'चम्पक' दानी-देश में।
तेस-मेस अवशेष, करै सुजस-रस रो श्रमण ?।३।।

आ मत आपै बार, तूं विनोद की बात मैं।
'चम्पक' तज तकरार, तर्क छोड़ सुगणां श्रमण !।४।।

आंख्यां उगलै आग, अगल-डगल बोलै विकल।
तेजी 'चम्पक' त्याग, शान्ति राख सुपालै श्रमण !।५।।

इला इमारत इल्म, 'चम्पक' मौकैसर मिलै।
फेर न उतरै फिल्म, समय नीसर्यां स्यूं श्रमण !।६।।

इकतरफो इकरार, निभै न दुनिया रो नियम।
तेजी तज तकरार, 'चम्पक' सट सलटा श्रमण !।७।।

इकतारी इकसार, आखी अण्यां अराधलै।
'चम्पक' नै सरदार, शोभै श्रीसंघ मै श्रमण !।८।।

इक्कै रो इजलास, 'चम्पक' विलखो बादशाह।
तेज बतावै तास, संघ संगठन रो श्रमण !।९।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदय भाव उपभोग, चोखा लागै चित्त नै।
क्षायक उपशम योग, 'चम्पक' अणसेंहदा श्रमण !॥१०॥

उतरै जणां उतार, धोखो देवणिया घणां।
ब्रेक बण्यां बेकार, 'चम्पक' कुण साहरो श्रमण !॥११॥

उपकारी स्यूं ऊर्ण, होणो के आसान है?
करै पालड़ो पूर्ण, 'चम्पक' धर्म सुणा श्रमण !॥१२॥

उपदेष्टा उपदेश, देवै सिंह ज्यूं दहाड़ता।
स्याल सरीखा शेष, 'चम्पक' निवडैला श्रमण !॥१३॥

उणिहारै उन्मेष, उपकारी रे नहिं उठै।
निकलण मत दै नेस, 'चम्पक' समझावै श्रमण !॥१४॥

उल्लू नै अफशोष, चम्पक' दिन मैं नहिं दिखै।
दोषी नै निज दोष, नहिं दीसै शीसै श्रमण !॥१५॥

उलझन मै उपहास, और उभारे उग्रता।
'चम्पक' ल्या ठंडास, मीठा शब्दां स्यूं श्रमण !॥१६॥

उलटो करै उजाड़, लल्लै-चप्पै जो लगै।
खिणै हाथ स्यूं खाड, 'चम्पक' खुद खातर श्रमण !॥१७॥

ऊफणतै ऊफाण, सिरकाजे मत सिलगती।
पाणी पडतां पाण, 'चम्पक' शान्त स्वतः श्रमण !॥१८॥

एरंड रो इकबाल[1], देतां लचको धह पड़ै।
'चम्पक' झोलो, जाल, साल, सुपारी सहै श्रमण !॥१९॥

एकाचार विचार, 'चम्पक' एक प्ररूपणा।
संगठन रो सार, स्वामीजी सोध्यो श्रमण !॥२०॥

---

१. पेड़।

एकंठ रो एकन्त, 'चम्पक' सिक्को रह सिरे।
भिन्न-भिन्न भाकन्त, सिट भी नहिं सीझै श्रमण !।२१।।

एकल स्यूं एकन्त, बात-विगत 'चम्पक' वरज।
अनरथ करै अनन्त, सर्प-दंश सरिखो श्रमण !।२२।।

एडी मांहे ऐंठ, 'चम्पक' औरत री अकल।
वलगत चेन्हा चेंठ, सावधान परखै श्रमण !।२३।।

खतम करै सब खेल, 'चम्पक' खारो बोलणो।
रच ज्यावै रंग रेल, सावल बोल्यां स्यूं श्रमण !।२४।।

खरो गणीजे खेंट, 'चम्पक' खटको टेंट मैं।
उलटो चाल्यां रेंठ, सूकै सै क्यार्‌यां श्रमण !।२५।।

खावै चतुर चरवा'र, अंग चंग 'चम्पक' लगै।
मिनख मान मनवार, कियां भूलज्यावै श्रमण !।२६।।

खुद मनचायो खा'र, हाथ पेट पर फेरलै।
'चम्पक' भाई भार, स्वार्थी जन समझै श्रमण !।२७।।

गर्भ ज्ञान रै गेल, मेह मैं बिजली मेख है।
'चम्पक' धुंओं धकेल, दीयो कद शोभै श्रमण !।२८।।

घण रो घणो'ज घेर, गण-गौरव 'चम्पक' गजब।
गुणकर अभिमत गेर, सगलां रै सागै श्रमण !।२९।।

छिप-छिप देखै छिन्द्र, 'चम्पक' एकल खोरड़ो।
घटै कद्र हे भद्र !, ओछी संगत स्यूं श्रमण !।३०।।

छाण-बीण री छूट, 'चम्पक' छौले छूतका।
टुकड़ा ज्यावै टूट, सार नीसरै के ? श्रमण !।३१।।

जीभ झरै रे ! जीभ, 'चम्पक' बोल बिगाड़ मत।
तोड़ बगावै तीब, सागै के चालै ? श्रमण !।३२।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुख मत मन मै वेद, 'चम्पक' करै जको भरै।
पक्की राख उमेद, अघ उघड्यां सरसी श्रमण !।४५।।

दोरी गलणी दाल, 'चम्पक' अन्त दुखी द्विमुख।
चलै दुतरफी चाल, भाटा भिड़ाणियां श्रमण !।४६।।

पाइ भर रो फेर, तैल बाल कर बाणियो।
'चम्पक' काढ़ै हेर, साहूकार सदा श्रमण !।४७।।

नान्हा सागै नेह, बड़ां-बुढ़ां आगै विनय।
'चम्पक' मधरो मेह, साथ्यां मै शोभै श्रमण !।४८।।

मुकलाई मै मोल, तंगी मै तेजी हुवै।
'चम्पक' गट्टा-गोल, सहयोगी घालै श्रमण !।४९।।

मिटै न 'चम्पक' मैल, समता रहै न समय पर।
(तो) ख्याला वाला खेल, साधक जन खेलै श्रमण !।५०।।

सत्पुरुषां री सीख, सुण 'चम्पक' सुख स्यूं सुवै।
तिल भर रखै न तीख, शान्त सरोवर सो श्रमण !।५१।।

संध्या और प्रभात, फूलण-फूलण मै फरक।
ल्यावै दिन इक रात, 'चम्पक' चीन्हे चिह्न श्रमण !।५२।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुख मत मन मैं वेद, 'चम्पक' करै जको भरै।
पक्की राख उमेद, अघ उघड्यां सरसी श्रमण !।४५।।

दोरी गलणी दाल, 'चम्पक' अन्त दुखी द्विमुख।
चलै दुतरफी चाल, भाटा भिड़ाणियां श्रमण !।४६।।

पाइ भर रो फेर, तैल बाल कर बाणियो।
'चम्पक' काढ़ै हेर, साहूकार सदा श्रमण !।४७।।

नान्हा सागै नेह, बड़ां-बुढ़ां आगै विनय।
'चम्पक' मधरो मेह, साथ्यां मैं शोभै श्रमण !।४८।।

मुकलाई मैं मोल, तंगी मैं तेजी हुवै।
'चम्पक' गट्टा-गोल, सहयोगी घालै श्रमण !।४९।।

मिटै न 'चम्पक' मैल, समता रहै न समय पर।
(तो) ख्याला वाला खेल, साधक जन खेलै श्रमण !।५०।।

सत्पुरुषां री सीख, सुण 'चम्पक' सुख स्यूं सुवै।
तिल भर रखै न तीख, शान्त सरोवर सो श्रमण !।५१।।

संध्या और प्रभात, फूलण-फूलण मैं फरक।
ल्यावै दिन इक रात, 'चम्पक' चीन्हे चिह्न श्रमण !।५२।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शान्ति-सिखावणी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'गुरु राखै रहणो बठै, मन नै सदा मिलार,
'चम्पक' जी न चुरावणो, श्रम स्यूं शान्तिकुमार !।१।।

रलमिल ज्याणो रह जठे, 'चम्पक' चित्र जमार,
खार दुराव खिचाव मैं, सार न शान्तिकुमार !।२।।

काम-काज मैं कमकसी, करै तर्क तकरार,
'चम्पक' घसै न काम स्यूं, सुणालै शान्तिकुमार !।३।।

वैरागी बण बीसरैं, सुखहित संजम-भार,
'चम्पक' बारां कद सरै, कारज शान्तिकुमार !।४।।

विषय-वासना नहिं बुझी, परिहर घर-परिवार,
'चम्पक' बो खोटी हुयो, सांप्रत शान्तिकुमार !।५।।

'चम्पक' इसी-बिसी जिसी, मिलज्या जग्यां विचार,
'किमेग राइं करिस्सइ', सोज्या शान्तिकुमार !।६।।

सोग्यो-संताप्यो रहै, 'चम्पक' मुंडो चढ़ार,
रच्यां-पच्यां बिन नहिं रमे, संयम शान्तिकुमार !।७।।

लुक-छिप कर नहिं बैठणो, ऊंचो नीचो जार,
'चम्पक' चोडे-च्यानणै, सीखो शान्तिकुमार !।८।।

पापात्मा नै वस करै, तरै सन्त संसार
मार मोह-मद-मान नै संचर शान्तिकुमार !।९।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रोज सिख्योड़ो रात नै, चेतै सहित चितार,
'चम्पक' स्वाध्यायी सुवै, सीमित शान्तिकुमार !।१०।।

'चम्पक' विकथा मैं बगत, गमा मती बेकार,
चांकै किम्मत समय री, सुधिजन शान्तिकुमार !।११।।

हूंसी टाबरां स्यूं न कर, 'चम्पक' हाथ लगाए,
बराबरी का स्यूं वरत, सत्कृत शान्तिकुमार !।१२।।

बायां स्यूं बातां नहीं, करणी निजर उठार,
'चम्पक' राखी आंख रो, संवर शान्तिकुमार !।१३।।

चालाकी गुरुवां कन्है, 'चम्पक' मायाचार,
बिल मैं बड़तां सांप है, सीधो शान्तिकुमार !।१४।।

सेवा मांगै सुज्ञता, चतुराइ आचार,
'चम्पक' विनय-विवेक सह, स्थिरता शान्तिकुमार !।१५।।

सेवा स्यूं फूलै-फलै, घुलै प्रेम-व्यवहार,
'चम्पक' आनन्द रै झुलै, झूलै शान्तिकुमार !।१६।।

चतुर नाम चावै नहीं, काम न समझै भार,
'चम्पक' बाही चाकरी, साची शान्तिकुमार !।१७।।

सेवा 'चम्पक' साधना, आत्म-धर्म अवधार,
व्यावच तेरापंथ री, शोभा शान्तिकुमार !।१८।।

परम्परा री धारणा, पेहली विधिसर धार,
'चम्पक' चील्हा पर चलै, साधक शान्तिकुमार !।१९।।

भूलां भूलै लारली, कर्म निर्जरा धार,
'चम्पक' बा निस्वार्थी, सेवा शान्तिकुमार !।२०।।

तंग तोड़कर दौड़कर, व्यावच विनय बधार,
'चम्पक' कामू की सदा, सुधरै शान्तिकुमार !।२१।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बड़ा बड़ेरां बहुश्रुती, कर 'चम्पक' सत्कार,
स्थविरां री आसीस ही, सुरतरु शान्तिकुमार !।२२।।

चम्पक मोटो जगत मैं, मां रो ही उपकार,
बणै मातृ-ऋण स्यूं उऋण, सपूत शान्तिकुमार !।२३।।

झट मां आवै याद, जद आयां करै डकार,
'चम्पक' 'मातृ-देवो भव,' सरवण शान्तिकुमार !।२४।।

निछरावल गुरु आंण पर, 'चम्पक' प्राण उंवार,
काम पड्यां कायम रहे, बो सिख शान्तिकुमार !।२५।।

'चम्पक' चौड़ै चौक मैं, कहै बकार-बकार,
शासण ही सुख-दुःख रो, साथी शान्तिकुमार !।२६।।

संघ-संघ है, संघ री, शक्ति अपरम्पार,
संघ-शक्ति समुपासना, कर तर शान्तिकुमार !।२७।।

उघड़ै तप-तेजस्विता, 'चम्पक' चक्राकार,
संघ-शक्ति सिंहवाहिनी, साधी शान्तिकुमार !।२८।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सरड़का सोह्ली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोहा

सेकै रोटी स्वयं की, पेली बांधै पाल।
(बो) के सड़कासी सरड़का, पाणी मरै पताल॥

करै न कोई की गई, पड़ै न मुंहड़ै लाल।
सुणा सकै बो सरड़का, मोकै पर मणिलाल॥

मुद्दै मै मजबूत जो, हिरदै में हमदर्द।
सुणा सकै मणि ! सरड़का, मस्त-मोड़, मन-मर्द॥१॥

पजै नहीं परपंच मै, पनपण दै नहिं पोल।
सुणा सकै मणि ! सरड़का, खरो खेंट, जी खोल॥२॥

अगलै नै नहिं आंगली, टेकण रो दै टेम।
सुणा सकै मणि ! सरडका, नीति-निपुण, दृढ़-नेम॥३॥

लल्लै-चप्पै नहिं लगै, पड़ै न आल-पंपाल।
सुणा सकै मणि ! सरड़का, हियो हाथ, खुशहाल॥४॥

अरथ गरथ उलझै नहीं, जगडवाल जंजाल।
सुणां सकै बो सरड़का (जो) चालै अपणी चाल॥५॥

खांपण राखै खाख मै, निर्मोही निर्भीक।
सुणां सकै मणि ! सरडका, डांट डपट डाढीक॥६॥

सागर मै रहणो सदा, बांध मगर स्यूं वैर।
सुणां सकै मणि ! सरड़का, दर्दी दुखी दिलेर॥७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चत्तर चोगो चोकसी, साचो सुलझ्यो सूत।
सुणां सकै मणि ! सरड़का, रांगड़ रण-रजपूत ।।८।।

हार ज्याय तो हर नहीं, जीत्यां नहिं मन-जोम।
सुणां सकै मणि ! सरड़का जो वनवासी व्योम ।।९।।

हित की सोचै हर वगत, हिये हेमजल हेज।
सुणां सकै मणि ! सरड़का, परचै रो नहिं पेज ।।१०।।

पीसेड़ी पीसै नहीं, टूकै मै दो टूक।
सुणां सकै मणि ! सरड़का, दुविधा बिना दडूक ।।११।।

पींच काढ़ दै पीप नै, फेर पंपोलै पीड़।
सुणां सकै मणि ! सरड़का, भीतर बणकर भीड़ ।।१२।।

पछै उठावै पाछलो, पैर आगलो टेक।
सुणां सकै मणि ! सरड़का, हटक न सकै हरेक ।।१३।।

ताब करै तरकीब स्यूं, फैंकै नहीं फहीड़।
सुणां सकै मणि ! सरड़का, छेक देखकर छीड़ ।।१४।।

बिना बगत बोलै नहीं, मोकै चुकै न मोल।
सुणां सकै मणि ! सरड़का, डिगै न जिणरी डोल ।।१५।।

कसणी पर हीरो कसै, काच कांकरा जाच।
सुणां सकै मणि ! सरड़का-सोहली 'चम्पक' साच ।।१६।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साधक-शतक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा-छन्द

ॐ कार अविकार, प्रणव-बीज सां स्यूं सिरै ।
निराकार साकार, सब मंत्रां मैं साधकां !।१।।

'अ-सि-आ-उ-सा' मन्त्र, महाप्रभाविक मांगलिक ।
तेज तरुणतम तन्त्र, साधो सुधमन साधकां !।२।।

'अ-भी-रा-शि-को' जाप, जयाचार्य रो जागतो ।
शमन करण संताप, जपो जतन स्यूं साधकां !।३।।

अर्हम् अर्हम् एक, अगर लीनता लागज्या ।
विकसित हुवै विवेक, सब कुछ सधज्या साधकां !।४।।

अर्हम् है आदर्श, अन्तर अर्हम् अहम् मै ।
रेस रेफ उत्कर्ष, सुधरै बिगड़ै साधकां !।५।।

अकलदार अहंकार, फटकणदै न पडोस मैं ।
भारी विद्या-भार, सहणो दोरो साधकां !।६।।

इष्ट देव अरहन्त, है आपां रै एकही ।
दूजां नै धोकन्त, सरधा डोलै साधकां !।७।।

इज्जत और इमान, दोनूं दोरा राखणा ।
सहज मान-सम्मान, सोहरो कोनी साधकां !।८।।

ईस सेरुओ सार, मांचै रो मंडाणा है ।
भारी भरखम भार, साल सहेला साधकां !।९।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऊंचो उच्च-विचार, उचित सुझाव उदार मन।
ऊपरलो उपचार, सदा राखसी साधकां !।१०।।

उपयोगी उपवास, द्रव्ये भावे दोउं तरफ।
बढ़ै आत्म-विश्वास, स्वास्थ्य सुधारै साधकां !।११।।

उलझन में उलझाड़, घालणिया मिलसी घणां।
हीयै रो हुबसाड़, सुण, सुलझाओ साधकां !।१२।।

एक-एक स्यूं एक, ज्ञानी-ध्यानी गफ-गुणी।
गोरख गुदडी केक, शासण-सागर साधकां !।१३।।

एक तरफ की ऐब, करणै सकै बिगाड़ कद ?
टांको लागै न टेब, बिना सींवणी साधकां !।१४।।

एको लारै एक (तो) मींड्यां मांडो मोकली।
एकै बिना अनेक, शुन्य-शुन्य है साधकां !।१५।।

कमजोरां नै कोस, करड़ो काठो को मती।
मरतां गलो मसोस, थे मत मारो साधकां !।१६।।

कमजोरी रो काम, कोई मै क्यांनै पड़ै।
पडतां रा परिणाम, सदा चढ़ाज्यो साधकां !।१७।।

कोई नै कमजोर, जाण जलील करो मती।
गलै लगा, कर गौर, साहरो दीज्यो साधकां !।१८।।

खटा सकै कद खाल, नीर निवाणां ही निभै।
उंचा उठै उछाल, सागर मै ही साधकां !।१९।।

खमतखामणा खेम,-कुशल करै कालो कटै।
हियो हुवै झट हेम, सरल भाव स्यूं साधकां !।२०।।

ख्याती करै खुवार, मूढ़ बणावै मिनख नै।
इन्द्रिय विषय-विकार, स्यान बिगाड़ै साधकां ।।२१।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गण-गणी में जो गर्क, घुलो मिलो बां मैं रलो।
संकीलो सम्पर्क, समकित खोवै साधकां !।२२।।

गुण गिरवा गम्भीर, गाजै पण गरजै नहीं।
तीखा ताना-तीर, शोभै कोनी साधकां !।२३।।

गलती, गड़बड़, गेस, गमगीनी, गप, गन्दगी।
पड़ै न दाबी पेस, साहमी आसी साधकां !।२४।।

घणो करै घमसाण, घर मैं घुस घुसपेठिया।
जाण बणै अणजाण, सूदा दीसै साधकां !।२५।।

घसपस घाल घणेर, ओछां स्यूं आछो नहीं।
कोरो दीसै केर, सीदो फाटै साधकां !।२६।।

घर मैं घर री बात, ढ़क कर राखो ढंग स्यूं।
स्याणप री शुरुआत, सीख्यां सरसी साधकां !।२७।।

चाल चुगल री चांक, छांनी रहै न छिबकली।
ईर्ष्यालू री आंख, सटकै समझो साधकां !।२८।।

चमचा जावै चाट, माल मसालो मिनट मैं।
सूखो सपटम पाट, सिद्धांती रहै साधकां !।२९।।

चटकै जावै चेंट, चींट्यां चीणी नैं चुंटण।
खारो, खरो रु खेंट, सूंघै कोइ न साधकां !।३०।।

छोड़ सुधा रो स्वाद, छेक अही-विष जो छकै।
अक्कल रो उन्माद, सदा सिदासी साधकां !।३१।।

छद्मस्था री छोल, छट्ठै गुणठाणै छलै।
पण, गण-गालागोल, सहणै सकै न साधकां !।३२।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छली, छुरी, छद,[1] छेद, गयी[2] न कोई री करै।
आफत बिना उमेद, सावचेत रहो साधकां !।३३।।

जीव-दया रा जाण, जयणा राखो जुगत स्यूं।
निबलां रो नुकसाण, शास्त्र न मानै साधकां !।३४।।

जगड़वाल जंजाल, दुनियांदारी रो दरो।
समकित-रतन सम्भाल, सेंठो राख्या साधकां !।३५।।

जाणपणै रो जोम, करणै सकसी केवली।
अल्प-ज्ञान मति ओम, शिक्षार्थी है साधकां !।३६।।

झूठो झोड झपाड़, झटपट गलै न घालणो।
राल राड़ बिच बाड़, सिरक ज्यावणो साधकां !।३७।।

झोलै नै लै झाल, विरला विरख[3] इसा मिनख।
चांतर[4] ज्यावै चाल, सड़क चालतां साधकां !।३८।।

झेलै झोंका झोल, झड़ी पड़ीसी झूपड़ी।
डूंगर ज्यावै डोल, सहै सहणियां साधकां !।३९।।

टक्कर देवै टाल, टूटी जोड़ै टेम पर।
टीस, रीस दै ढ़ाल, स्याणो बोही साधकां !।४०।।

टींटोड़ी ज्यूं टांग, ऊंची रख आकाश मैं।
स्यांग्यां वाला सांग, शोभै कोनी साधकां !।४१।।

टक्कै टांग उठार, टेडो चालै टेंट मैं।
भीतां झेलै भार, सिरकी[5] सहै न साधकां !।४२।।

---

१. आवरण।
२. लिहाज।
३. वृक्ष।
४. चूक।
५. सरकंडों की बनी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ठोकर वाली ठोर, ठहर-ठहर कर ठीकसर।
चालै चतुर चकोर, संयम-साधक साधकां !।४३।।

ठीमर, ठट्ठा-ठोल, ठाकर जो ठणक्या करै।
डूमां वाला डोल, सांपड़तैइ साधकां !।४४।।

ठोल्या खावै ठांव[1], ठंडो जल ठारै, ठरै।
नीलम पावै नांव, साण चढ्यां स्यूं साधकां !।४५।।

डाबर-डाबर[2] डोल, हंस ! हंसाई क्यूं करै ?
कियो निभाओ कोल, स्थिरता साधो साधकां !।४६।।

डटकर एकण ठोड़, करणो-मरणो मांड्यो।
निश्चय, बडो निचोड़, संयम-रुचि रो साधकां !।४७।।

डगमग डांवांडोल, नाव पार कद नीसरै ?
आस्था ही अनमोल, साध्य सिद्धि मैं साधकां !।४८।।

ढ़ील दियां बे-ढ़ाल, गोचां खा गुड़कै किनो[3]।
साहर्‌यां शिखरां न्हाल, साधो मननै साधकां !।४९।।

ढ़को न अपणा दोष, पड़ो न पड़पंच पारकै।
सूखो स्याही चोस, सदा सिखावै साधकां !।५०।।

ढ़िगलां-ढ़िगलां ढाक, अण गिणती रा आकड़ा।
श्वेत ढाक अरु आक, साधक, विरला साधकां !।५१।।

तेज तरुणिमा तोल, आकर्षण चावो अगर।
(तो) मूल-बंध[4] रो मोल, समझो, साधो साधकां !।५२।।

---

१. मिट्टी का बरतन।
२. छोटी तलाई।
३. पतंग।
४. गुदा चक्र को ऊपर खींचने वाली योगक्रिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तर्क-तर्क रै स्थान, श्रद्धा-श्रद्धा री जग्यां।
जिज्ञासू बण ज्ञान, संचित करज्यो साधकां !।५३।।

तन नै कर तजबीज, जोगी राखै जुगत स्यूं।
चढ़ी अमोलक चीज, सिरड़्यां[1] हाथां साधकां !।५४।।

थंभां छत री थांम, भीतां झेल्यो भार सोह।
नींवां रो नहिं नाम, (ओ) सही समर्पण साधकां !।५५।।

थड़[2] थांमै स्थित-प्रज्ञ, पान फूल फल सब मिलै।
पकड़ पानड़ो अज्ञ, सोह क्यूं चावै साधकां !।५६।।

थपथपियो[3] दे थाप, करदै लोधै[4] नै कलश।
गुरुगम बिना कलाप, शास्त्र, शस्त्र, श्रुति साधकां !।५७।।

दया न दान न धर्म, जोर जबरदस्ती जठै।
मन-परिवर्तन मर्म, सुध श्रद्धा रो साधकां !।५८।।

दोय जणा बिन धाड़, दोय जणा बिन दोसती।
दोय जणा बिन राड़, सुणी न देखी साधकां !।५९।।

दोय मिल्या दुख होय, जड़-चेतन प्रकृति-पुरुष।
भाव-विभाव भिजोय, संस्कारां नै साधकां !।६०।

धैर्य बिना कद धर्म, टिकै, धिकै, थिरकै सिकै।
धर्म बिना कद कर्म, सिरकै, छिटकै साधकां !।६१।।

ध्यान-योग धीमान, गुरु स्यूं धारै धिरप स्यूं।
आन-पान रो स्थान, सिरै परखज्यो साधकां !।६२।।

---

१. सिरड़ी-सनक।
२. पेड़ का स्कन्ध।
३. कुंभार।
४. गीली मिट्टी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्याता ध्येय रु ध्यान, एक बणै जद स्थिर पणै।
पाचूं-पवन समान, मिलै 'शक्ति-शिव' साधकां !।६३।।

नरम नीति स्यूं नेम, नहीं निभैला निर्मला।
अनुशासन री टेम, शक्ति बरतज्यो साधकां !।६४।।

निर्णय जो निष्कर्ष, निपुण-बुद्धि रै न्याय रो।
स्वीकृत करो सहर्ष, सरल चित्त स्यूं साधकां !।६५।।

निरतिचार निर्द्वंद, संयम समकित साधना।
करो छन्द नै बंद, समता-साधक साधकां !।६६।।

पुण्य प्रमाण प्रवीण, प्रभुता प्रियता पूज्यता।
करो न पूंजी क्षीण, सम्बोधी-धर साधकां !।६७।।

पालै छुप-छुप पाप, पछताणो पड़सी पछै।
छद्मस्थी री छाप, लाग्या सरसी साधकां !।६८।।

परम प्रभावी प्रेय, परमेष्ठी पंचांगुली।
एक दुष्ट है श्रेय, स्पष्ट-निष्ठ रहो साधकां !।६९।।

फिरतल री फरियाद, कुण स्वीकारै, कुण सुणै।
स्थिरता रो कुछ स्वाद, स्थिर बण चाखो साधकां !।७०।।

फटकारे ही फाव[1], बोलै पाण, बण बे-रुखो।
द्यो आयां नै आव, आदर-सादर साधकां !।७१।।

फैंको मती फहीड़, बको मती बेफेम थे।
भाग्योडां री भीड़, स्हामो साहसी साधकां !।७२।।

बात-बात मैं बैर, बांधो मत बैठा-सुतां।
ओ जबान रो जैर, सागी शंखियो साधकां !।७३।।

---

१. मुफ्त-बेकार।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बधतो जाय बिगाड़, द्रष्टा देखै है खड्या।
कुण झोलै मैं झाड़, साहम सकैला साधकां !।७४।।

बातां री बंभेर, घोड़ा दौड़ै कागजी।
(मैं) लागूं खारो जेर, सीधो बोल्या साधकां !।७५।।

भीतर-भीतर भेद, बधै बेल विष री बुरी।
ऊंडी जठै उमेद, शिल सपाट है साधकां !।७६।।

भावां मैं ल्यो भांप, सुस्त देख मुनि सम्पदा।
जाय कालजो कांप, सूतां-सूतां साधकां !।७७।।

भभकी जस री भूख, चूंच बाहिरी चिड़कल्यां।
चूंचूं करै अचूक, सिट नहीं सीझै साधकां !।७८।।

महामनां ! मनुहार, मानो मन मोटो करो।
मेट खार, मन मार, सब मै रलज्यो साधकां !।७९।।

मननशील ! महामान्य ! मरम मरक मारो मती।
अभिमत हुयां अमान्य, सल मत घालो साधकां !।८०।।

मिनख, मेह, मत, मोत, मोती मांग्या कद मिलै ?
जगै जोत स्यूं जोत, जदि संयोजक साधकां !।८१।।

याद करो आयात, के निर्यात कर्यो ? कुशल !
रीतो ही दिनरात, रह्यो क ? सोचो साधकां !।८२।।

यांत्रिक-युग मैं योग, प्राणायाम प्रयोग है।
व्यायामज व्यपयोग, शुभोपयोगी साधकां !।८३।।

यात्रा आठूं याम, यायावर है यति-व्रती।
पालां संयम-स्थाम, सुखसाता स्यूं साधकां !।८४।।

राखो द्रष्टा-भाव, एक दृष्टि इण सृष्टि मैं।
लागणद्यो न लगाव, शीसै की ज्यूं साधकां !।८५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राग-रीस है दाग, त्याग विराग-पराग मैं।
अन्तर धुकती आग, शान्त करो सत साधकां !।८६।।

राग-रसिक, रमणीक, रूप-रसिक, रसना-रसिक।
लोप लाज-लय-लीक, सदा सिदावै साधकां !।८७।।

लक्खण लक्ष्य रु लेख, लाख लुकायां नहिं लुकै।
केक भेख मैं छेक, ससंकेत कहुं साधकां !।८८।।

लय, लत, लीक, लिलाड़, लारै लग्या लटूरिया।
दैवै बात बिगाड़, सापादूती साधकां !।८९।।

लाखां-लाखां लोक, लुल-लुलकर लटका करै।
संयम श्लोक विलोक, सद्गुरु कृपया साधकां !।९०।।

वरतै जो विपरीत, टालोकड़ गण स्यूं टलै।
अपछन्दा अवनीत, संगत छोड़ो साधकां !।९१।।

विट्ठल रो विश्वास, कोइक विट्ठल ही करै।
शासण रो इतिहास, साखी साहमै साधकां !।९२।।

विज्ञ वणिक व्यवसाय, क्रय-विक्रय विणजै विविध।
आंकां आंकै आय, सामायक-धर साधकां !।९३।।

शम-दम मैं खम-ठोक-जम, नमकर रम विगम तम।
जो द्यो प्राक्रम झोंक, (तो) सुगम सुसंयम साधकां !।९४।।

शान्त मना शुभ सोच, विष पीकर शंकर बणो।
शिवं स्वात्म संकोच, श्रेयस्कर है साधकां !।९५।।

शासन शास्ता शान, शोधित शुद्ध सुशासना।
सगला एक समान, स्व-पर न समझै साधकां !।९६।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

षट्-द्रव्यात्मक[1] लोक, सृष्टि सजीव अजीव री।
संतति संक्रम रोक, सोधो सोनो साधकां !।९७।।

षट् प्रमाद[2] परिहार, षट् पलिमन्थु[3] न आचरो।
षट् प्रतिक्रमणाचार,[4] सदा साचवो साधकां !।९८।।

षट् सद्गुण[5] सम्पन्न, हुवै श्रमण गण स्तंभ सो।
प्रतिभा प्रभा प्रपन्न, संघ सम्पदा साधकां !।९९।।

साम्य-योग ल्यो साध, सब समान सुख-दुख स्वगत।
स्वानुभूति रो स्वाद, सुधाश्राव है साधकां !।१००।।

सन्त समागम सार, सामेलो साझो सविधि।
स्वागत युत सत्कार, शासण शोभा साधकां !।१०१।।

सद्गुरु शीख सचोट, स्वीकारो सम्मान स्यूं।
सविनय चरणां लोट, सत्य सुझाओ साधकां !।१०२।।

है अपणै ही हाथ, अपणी इज्जत आबरू।
राख याद दिन रात, सलाह, संचरो साधकां !।१०३।।

हुवै न कदे हताश, आपो नहिं दै आपरो।
लाख-लाख शाबास, बीं साधक नै साधकां !।१०४।।

हंस-वृत्ति हिय-हेज, हंसमुख हर्यो भर्यो रहै।
(वो) अतिशायी आदेज, स्हेज तेज लहै साधकां !।१०५।।

---

१. धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय, जीवास्तिकाय, काल।
२. मद, विषय, कषाय, निद्रा, आलस्य और प्रतिलेखना।
३. चपलता, वाचालता, चक्षु-कुशील, चिड़चिड़ापन, अति लोभ और निदान-संकल्पी।
४. सामायक, चौबीसस्तव, वन्दना, प्रतिक्रमण, कायोत्सर्ग और पच्चक्खाण।
५. श्रद्धालु, सत्यवादी, मेधावी, बहुश्रुत, शक्ति-सम्पन्न और प्रशान्त-चित्त।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महावीर निर्वाण-महोत्सव, दो हजार इकतीस सुखेन।
देहली रेली बड़ी नवेली, एक मंच पर सारा जैन।
दी श्रद्धांजलियां रंगरलियां, भक्ति भाव भृत वरणां में।
सेवाभावी 'चम्पक' 'साधक-शतक' धरै श्रीचरणां में ।।१०६।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शिक्षा-सुमरणी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोहा

सदा समर्पित सुर-सरी, सागर स्यूं सम्बन्ध।
'चम्पक' श्रीसंघ चरण मै, प्रणमै छन्द-प्रबन्ध ॥१॥

नमै खमै बोही गमै, गंज गरज री गन्ध।
विनय-बिधा 'चम्पक' बिणै, विगत छन्द कर बन्ध ॥२॥

सहज समर्पण सुमन-वन, शोभै 'चम्पक' संघ।
सुधा संघ-पति सारणा, सोनै मांह सुगंध ॥३॥

इमरत आंख्यां में झरै, तपै देह पर तेज।
'चम्पक' चेहरै सोम्यता, सन्त हिये मै हेज ॥४॥

विषय-वासना बुझ गई, आश पाश को अन्त।
संयम समता मैं रमै, 'चम्पक' साचो सन्त ॥५॥

सन्त बहै सत्पंथ मै, ग्रन्थ छोड़ निर्ग्रन्थ।
'चम्पक' तंत उदन्त मै, लै अनन्त को अन्त ॥६॥

त्याग-विराग-तड़ाग मै, अतिशायी अनुराग।
चंचरीक 'चम्पक' चुसै, मुनि-पद-पद्म-पराग ॥७॥

शासण सुर-तरु सुख करु, सिद्धि-सौध-सोपान।
'चम्पक' शासण च्यानणो, आन-पान सम्मान ॥८॥

शासण शीतल छांवली, अणाधार आधार।
'चम्पक' शासण चेतना, हरण पाप हरिद्वार ॥९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शासण दुर्लभ देवरो, शासण पूजा-पाठ।
शासण रै परताप ही, 'चम्पक' सगला ठाठ ॥१०॥

शंख दक्षिणावर्त है, संघ श्वेत-मन्दार।
चिन्तामणि 'चम्पक' चहक, वांछित-फल दातार ॥११॥

मानसरोवर, मलयगिरि, मख-मयूख-मोहार[१]।
मंगलमय, शासण मुदित, 'चम्पक' चरण पखार ॥१२॥

विद्या स्यूं बेसी बधै, विकट अनास्था आज।
'चम्पक' चौड़ै चोक मैं, सोचो सुज्ञ समाज ॥१३॥

बिना हिलायां ओझज्या, लोकोक्ति प्रख्यात।
सूती रा पाडा जणै, 'चम्पक' चोड़ै बात ॥१४॥

गुड़-लिपटेडी बात स्यूं, राजी रहै समाज।
'चम्पक' लागै चबड़को, साच सुणायां आज ॥१५॥

सापा-दूती स्यूं सरै, भले कितोइ काम।
पर 'चम्पक' चौड़ै पड्यो, बुरो अन्त परिणाम ॥१६॥

संघरषण स्यूं संघ मैं, 'चम्पक' पड़ै दरार।
भीतर ही भीतर धुकै, अणबोली तकरार ॥१७॥

नेता निरवालो रहै, (तो) बधै न वाद-विवाद।
'चम्पक' कम-बेसी नमक, करै खाद्य बे-स्वाद ॥१८॥

सांय-सांय सुलगै सतत, दिन भर दिल रु दिमाग।
'चम्पक' बातां स्यूं कदे, बुझै न अन्तर-आग ॥१९॥

स्याणां 'चम्पक' सोच तूं, मत इकतरफी तांण।
थारै डावी-जीवणी, दोन्यूं एक समान ॥२०॥

---

१ यज्ञ का प्रकाश-द्वार।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चम्पक चिड़-भिड़ स्यूं हुवै, घर मैं घणो बिगाड़।
भुन न्हाखै सद्भावना, मनोभेद की भाड़ ।।२१।।

दर्दी नै दीसै जियां, अपणो दर्द अमाप।
त्यूं दोषी यदि देखलै, (तो) 'चम्पक' पलै न पाप ।।२२।।

पक्ष-पात रो पादरो, पड़सी क्यूं न प्रभाव।
थोथी तर्कां स्यूं तणै, 'चम्पक' और तणाव ।।२३।।

'चम्पक' चोड़ै सूगली, सापा-दूती साव।
बातां-बातां मैं बढ़ै, दिक्कत और दुराव ।।२४।।

हाथ-हाथ स्यूं यदि घसै, (तो) गरमी बढ़ै विशेष।
बात-बात री घर्षणा, 'चम्पक' करदै क्लेश ।।२५।।

बंधी मुट्ठी रहण दै, 'चम्पक' चतुर विचार।
भर्‌यो भरम ही है भलो, हाथ पसार्‌यां हार ।।२६।।

सन्तां ! शासण रो सदा, हित आपांरै हाथ।
चम्पक चालो चेत कर, सगलां नै ले साथ ।।२७।।

नेता नितरण लागग्या, चलै दुतरफी चाल।
'चम्पक' किण नै दोष दै, कुदरत करै कमाल ।।२८।।

अठी-बठी री बात स्यूं, टूटै हार्दिक हेत।
'चम्पक' अवसर हाल है, चेत सकै तो चेत ।।२९।।

कित्ती मेहनत स्यूं घड़ो, त्यार करै कुंभार।
चटकै फटकै फूटतां, 'चम्पक' लगै न बार ।।३०।।

सड्या-गल्या जूना पड्या, मुरदा मती उखेड़।
छुट-पुट छेड़ा छेड़ स्यूं, 'चम्पक' कठै निवेड़ ? ।।३१।।

द्वंद्व दिमागां मैं भर्‌यो, दिल मैं खड़ी दिवार।
भीतरलो भेद्यां बिना, 'चम्पक' नहिं प्रतिकार ।।३२।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रेम हृदय री देण है, है व्यवहार दिमाग।
फूल बिना फूलै कठै, 'चम्पक' प्रेम-पराग ॥३३॥

करसी सो भरसी दकी ! धक्कै धिकै न पोल।
तो कांदां रा छूतका, 'चम्पक' तूं मत छोल ॥३४॥

'चम्पक' होकर ही रहै, होणी अपणै आप।
नेता री निष्पक्षता, छोडै दिल पर छाप ॥३५॥

बैर मिटै नहिं बैर स्यूं, बुझै न घी स्यूं आग।
कादै स्यूं 'चम्पक' धुपै, कद कादै रो दाग ? ॥३६॥

दुर्व्यसनी देख्या दुखी, सदा सुखी गुणवान।
हलको जीवन हर समय, राखै 'चम्पक' मान ॥३७॥

साच, साच 'चम्पक' सदा, झूठ अन्त है झूठ।
छिन मै जावै झूठ स्यूं, प्रेम-प्रीत, मन टूट ॥३८॥

झूठै रो 'चम्पक' जमै, एक बार विश्वास।
धग्-धग् अन्तर धड़कतो, रहसी अन्त उदास ॥३९॥

अति-परिचित स्यूं अर्थ रो, बणै जितै व्यवहार।
करो मती 'चम्पक' कहै, स्वारथियो संसार ॥४०॥

'चम्पक' विनय विवेक बिन, व्यर्थ बाह्य व्यवहार।
बगत देखकर बरतणो, साचो शिष्टाचार ॥४१॥

डिगूं-पिचूं डिग-मिग करै, घड़-घड़ ओघट घाट।
'चम्पक' समकित चरण मै, उलटो करै उचाट ॥४२॥

डोको फाड़ै डांग नै, तिल ले चाल्यो ताड़।
'चम्पक' छिपग्यो छोकरां ! राई ओलै पहाड़ ॥४३॥

डिगली चूक डफोल स्यूं, राख न 'चंपक' राड़।
ओछै मुतलब नै अधम, बोहलो करै बिगाड़ ॥४४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

डोर हाथ मैं जो हुवै, (तो) ल्यावै पतंग मरोड़।
'चंपक' कूंची हाथ, मै (तो) सगला आसी दौड़ ॥४५॥

डूबै मुरख डफोल क्यूं, खोद हाथ स्यूं खाड।
'चंपक' रुखवालो लुटै, खेत खायगी बाड़ ॥४६॥

छोटां नै छिटका मती, चाढ़ चिणांरै झाड़।
'चंपक' छोटो सो चिणो, कणां भांजदै भाड़ ॥४७॥

'चंपक' चेतो कर चतुर ! चित मत वकरी चाढ़।
अंतसकै आवेश नै, मुंहडै स्यूं मत काढ़ ॥४८॥

एकेक तो कचरो बणै, बहु मिल बणै बुहारी।
तिण स्यूं घण नहिं त्यागणो, 'चम्पक' रख इकतारी ॥४९॥

घण रो मत गह्रो घणो, पड़ै मती प्रतिकूल।
जीतै घण ही जगत मै, 'चम्पक' बण अनुकूल ॥५०॥

जन-मत सब कुछ जगत मै, 'चम्पक' देखो जाय।
जन-मत स्यूं विपरीत जन, घर-घर धक्का खाय ॥५१॥

गलै सुदी गण मै गड्यो, रह 'चम्पक' पग रोप।
शान्त स्वतः ही समय स्यूं, हुवै कोप-आरोप ॥५२॥

शान्त चित्त 'चम्पक' सदा, कार्य व्यस्त विश्वस्त।
रहणो अपणै हाल मै, मस्त स्वस्थ आत्मस्थ ॥५३॥

सावधान रहणो सुघड़, संयम मै प्रति सास।
हित खोवै जो हाथ स्यूं, 'चम्पक व्यर्थ विकास ॥५४॥

चित मै चासी च्यानणो, हित रख 'चम्पक' हाथ।
करै मती नाहक अती, अन्त अंधेरी रात ॥५५॥

आकर झट आवेश मै, बक ज्यावै बे-फेम।
स्याणप री 'चम्पक' खबर, पड्यां करै बीं टेम ॥५६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेखो अगलो लारलो, लख कर 'चम्पक' बोल।
मते मिणीजै मिनख रो, एक मिनट मैं मोल ॥५७॥

'चम्पक' जीवन-जीतणो, खुलो खिलाणो नाग।
काजल री आ कोठरी, लाग न ज्यावै दाग ॥५८॥

बहु-बेट्यां पर बेअकल, फाड़ै आंख फिजूल।
'चम्पक' बीं बदकार रै, धोबां-धोबां धूल ॥५९॥

बिना फेम बोल्यां बधै, बेमतलब रो बैर।
ओरां पर आरोप स्यूं, 'चम्पक' हुवै न खैर ॥६०॥

बिगडायल बदनीत तो, बोलै आल पंपाल।
'चम्पक' चेतो राख तूं, अपणो आप संभाल ॥६१॥

कोई स्यूं करणी नहीं, बिना जरूरत बात।
बहु बोलै री बीगड़ै, 'चम्पक' जग प्रख्यात ॥६२॥

चालो चोखी चाल मैं, करज्यो चोखा काम।
'चम्पक' संशय मत करो, रेख राखसी राम ॥६३॥

ओरां रो अवगुण करण, घड़ मत ओघट घाट।
'चम्पक' मेलै मिनख रो, मिटै नहीं ओचाट ॥६४॥

टेम टुटण रो टाल दै, 'चम्पक' चतुर सुजाण।
आपसरी री बात मैं, खटै न खेचां ताण ॥६५॥

सुणी सुणाई बात पर, धर मत चम्पक ध्यान।
अन्तर कहणै-सुणण मैं, हुवै जमीं-असमान ॥६६॥

मूंडै-मूंड कराण रो, खोटो ढ़ालो छोड़।
'चम्पक' चुम्बक मैं चतुर !, निकलै न्याय निचोड़ ॥६७॥

जो चावै जग जीतणो, उत्तम एक उपाय ॥
'चम्पक' कर अहसान तूं, दुश्मण भी दब जाय ॥६८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपणी अकड़ाई अजड़, खतम करै सब खेल।
निज री 'चम्पक' नम्रता, मित्र मिलावै मेल ॥६९॥

भाई नै 'चम्पक' भले, तूं बकलै कर व्हेम।
भाई ही आसी भलो, आडो ओहूंड़ी टेम ॥७०॥

व्हायल चारै व्हायलो, लै भायां स्यूं तोड़।
'चम्पक' चुगणी ठीकरी, भर्‌यो घड़ो मत फोड़ ॥७१॥

'चम्पक' भाई बूकिया, भाई आंख्यां गोडा।
भाई को कमजोर के? टूट्या तोही टोडा ॥७२॥

ओपै भाई री जग्यां, भाई रो ही मेल।
'चम्पक' लूखी चीकणी, फूटी तो हि बंडेल ॥७३॥

बुरो बैंर बिखबाद रो, भायां मैं मत घाल।
'चम्पक' तूं चालै मती, राजनीति री चाल ॥७४॥

भाई भूखो भाव रो, रोटी भूखो रांक।
सहज मान सम्मान मैं, 'चम्पक' चुरा न आंख ॥७५॥

'बडो बिचारैला बडी, ओछो ओछी चाल।
'चम्पक' पोटी पाव की, सवासेर मत घाल ॥७६॥

शोषणहीन-समाज री, रचना बड़ो विचार।
'चम्पक' थोथी कल्पना, कर्‌यां करै सरकार ॥७७॥

चितड़ो चकडोल्यां चढ्यो, राखण रोब रबाब।
'चम्पक' चांदी रो चकर, खेलो करै खराब ॥७८॥

कुण ल्यायो कुण लेयग्यो, किण संग चाली आथ।
जाण-बूझ 'चम्पक' जगत, जबरन घालै बाथ ॥७९॥

'चम्पक' अंत न चाह को, मांडी माथै बूक।
भस्म-व्याधि, भोजन भखै, भांज सकै कद भूख ? ॥८०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'चम्पक' लिछमी चचला, इण रो के इतबार।
कुण ल्यायो कुण लेयग्यो, तो कें री तकरार? ॥८१॥

'चम्पक' चौड़े आयला, आज नहीं तो काल।
धन-धरती दोनूं दकी !, है सरकारी माल ॥८२॥

'चम्पक' धन भेलो करै, चूस-चूस कंजूस।
कोड़ां पकड़ीज्यां पड़ै, देणी लाखां घूंस ॥८३॥

दीपक बुझग्या दीपता, 'चम्पक' चब्या सुपर्व।
राज गया, राजा गया, गेहला ! क्यां पर गर्व ? ॥८४॥

धरणी रो धन धरण मैं, धर्‍यो रहेला लार।
खोटा तूं क्यां नै घड़ै ?, 'चम्पक' जरा विचार ॥८५॥

'चम्पक' किण-किण रो चल्यो, गेहला ! गर्थ गुमान।
मिलसी अंत मसाण मैं, सगला एक समान ॥८६॥

कुण किण रै तकदीर रो, जोड़-कोर धर जाय।
रखवाली 'चम्पक' रखै, कुण खरचै कुण खाय ॥८७॥

संचै मो-मोखी शहद, अधिकी 'चम्पक' आश।
अति संचय रो सामनै, प्रतिफल पड्यो खुलास ॥८८॥

खतरो सोनो है खरो, जाणै सब संसार।
'चम्पक' सोह क्यूं चूंटकर, (आ) ले ज्यासी सरकार ॥८९॥

सोनो सरकारी हुसी, घणी नहीं है देर।
'चम्पक' चूकैला जको, पिछतावैला फेर ॥९०॥

जोखो मोटो जीव नै, 'चम्पक' अब भी चेत।
सोनै रो स्याणा मिनख !, हटा हृदय स्यूं हेत ॥९१॥

देतां जी दोरो हुवै, खरचै नहीं छदाम।
'चंपक' संग चालै नहीं, (ओ) धन आसी के काम ? ॥९२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'चम्पक' चढ्यो समाज रो, शिर पर मोटी कर्ज।
देणो लेणो आपसी, (है) साधारण सो फर्ज ॥९३॥

घणा हुसी खाकर खुशी, हाथ पेट पर फेर।
खुवा दूसरै नै खुशी, 'चम्पक' कोइक दिलेर ॥९४॥

एक दालियो भी दकी !, दूजो सकै न चाख।
'चम्पक' मत बेचैन बण, भाग भरोसा राख ॥९५॥

आयो हो जद एकलो, जासी एकाएक।
झामल झोलो बीच मै, टेको 'चम्पक' टेक ॥९६॥

दीन और दुनियां दोउं, सझै न एकण साथ।
'चम्पक' दिन रै च्यानणै, रहणै सकै न रात ॥९७॥

नीयत सारू नीसरै, अन्त नतीजो नेम।
'चम्पक' चींधी चोर कै, पीपल चढ़ै न पेम ॥९८॥

झूठ छिपायो कद छिपै, 'चम्पक' चोडै आय।
फल दो दिन पेहली पछै, अन्त गतां स्यूं जाय ॥९९॥

साच रहेला साच ही, झूठ आखरी झूठ।
साची 'चम्पक' सामनै, झूठ चलै परपूठ ॥१००॥

आंख कान मै आन्तरो, 'चम्पक' आंगल च्यार।
दूरी देखण सुणण री, कहतां पड़ै न पार ॥१०१॥

कान राग-रसिया खुशी, रंग रूप मै नैन।
चाट चटोड़ी जीभड़ी, 'चम्पक' पड़ै न चैन ॥१०२॥

सोतां मोत सिरावतै, जाग्यां साहमी जाण।
'चंपक' चोकस चालणो, सुण मन-मीत ! सुजाण ॥१०३॥

मिली जकी मै ही मिनख !, सावल करलै सब्र।
जाणो 'चम्पक' इक जग्या, का मसाण का कब्र ॥१०४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मरण जीण रो मामलो, है होणी रै हाथ।
'चम्पक' कोइ पेली पछै, सगला निभै न साथ ॥१०५॥

धर्म-ध्यान मैं मदद दै, साचो बोही सैण।
'चम्पक' बाधक बणणियां, दुश्मण गोता देण ॥१०६॥

अन्तर-मुख अभ्यास रो, मुश्किल है मंडाण।
'चम्पक' चेतन री चटक (तूं) जोग्यांस्यूं ही जाण ॥१०७॥

कवियां मैं बैठूं उठूं, मुड़ती देखूं मोड़।
कोड-कोड मैं होड मैं, 'चम्पक' दोड़ी-दोड़ ॥१०८॥

बत्तीसै सी०स्कीम मैं, शरद च्यानणी रात।
चम्पक ! शिक्षा-सुमरणी, सुमर सुमेरु साथ ॥१०९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फुटकर फूल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोहा

'चम्पक' पावन पावणां, परमेसर रो रूप।
मोत्यां मूंघा मोवन्यां ! गिण मत छाया धूप ।।१।।

'चम्पक' भावी जोग भल, मोको मिल्यो महान।
मांग्या मिलै न मोवन्या ! मेह, मोत, मेहमान ।।२।।

पलक बिछादै पावडां, भूल मूल तिस-भूख।
सुवरण-मोको मोवन्या ! 'चम्पक' तूं मत चूक ।।३।।

सागर ! समता री सरस, परिणति हुवै प्रवीण।
'चम्पक' चेतन चुप रहै, क्षमता मत कर क्षीण ।।४।।

बराबरीकै स्यूं भिड़ण, 'चम्पक' चहिजै चोज।
मर्‍यै हुयै नै मारणो, मै मरदां के मोज ।।५।।

आह्मी-साह्मी उतरती, औरां री कर आप।
चढ़ती 'चम्पक' जो चहे, (तो) स्वयं सूंफड़ा साफ ।।६।।

उद्यम रो अधिकार है, टलण सकै कद टेम।
होसी जो होणी हुसी, 'चम्पक' खेम अखेम ।।७।।

चुगली खा डूबै चुगल, बांध पाप की पोट।
'चम्पक' उठा न गोट तूं, सागर ! हिला न होठ ।।८।।

'चम्पा' चकमो दै मती, भीतरलो टंटोल।
सागर ! अपणो दोष तूं, ओरां पर मत ढ़ोल ।।९।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'चम्पक' सागर ! तूं सुघड़, मत कर गोल-मटोल।
ठोस बात ठीमर करै, छोरा ठट्ठा-ठोल ॥१०॥

अठी बठी रा अणघड़्या, तूं फहीड़ मत फेंक।
ठीमरपण री ठीकसर, 'चम्पक' लागै नेक ॥११॥

बुद्धिहीण बिह्वल बिकल, अकल बिना रा ऊंठ।
'चम्पक' बिगड़ी चासणी, टूटै नमें न ठूठ ॥१२॥

ठबको लाग्यां ठीकरी, कलशो काच कथीर।
'चम्पक' खमसी चोट नैं, हीरो-हेम-हमीर ॥१३॥

बचन-बचन मैं आन्तरो, पीढ्यां रो पड़ ज्याय।
एक बचन मैं मिलण रो, 'चम्पक' उपजै चाव ॥१४॥

एक बचन घाघां भरै, घाव घालदै एक।
अमृत-जहर जबान मैं, 'चम्पक' जगा विवेक ॥१५॥

लाग्योड़ी पर लूंण सो, एक बचन दुख देह।
एक बचन दै सांत्वना, 'चम्पक' उमड़ै नेह ॥१६॥

आग ऊपड़ै बचन स्यूं, बचन बणै रस-धार।
शत्रु-मित्र बाणी सुगण ! चम्पक' जरा विचार ॥१७॥

निरवद बोल्यां निर्जरा, सावद बन्ध विषाद।
एक बचन स्वाध्याय है, 'चम्पक' इक बकबाद ॥१८॥

अर्थशून्य अविवेक वच, अनरथ कर अयथार्थ।
निर्जरार्थ निरवद बदै 'चम्पक' बचन यथार्थ ॥१९॥

'चम्पक' झुककर जुगत सर, जडियो जड़ै जड़ाव।
जमै जग्यासर खटोखट (तो) बाणी बणै बणाव ॥२०॥

सागर ! चतुर चलाक मै, अन्तर 'चम्पक' एक।
चाल कुचाल चलाक की, विकसित चतुर विवेक ॥२१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'चम्पक' चोटी पर चढ़ै, पुरुषां रो पुरुषार्थ।
हुवै परायी कृपा पर, चिन्तन कद चरितार्थ ॥२२॥

अनुभव-दीपक स्यूं दिसै, 'चम्पक' च्यारूं कूंट।
गुण्यां बिना दुनियां गिणै, भण्यो पढ्योड़ो ऊंठ ॥२३॥

गणित रु गुरु री अलख गति, 'चम्पक' चढ़ आकाश।
गगन-दीप दरिया गुरु, पर-हित करै प्रकाश ॥२४॥

डोर सुगुरु कै हाथ मैं, गोचां खाय पतंग।
टूटै तो लूंटै जगत, विधि को 'चम्पक' व्यंग ॥२५॥

गुरुवर गुर-ज्ञाता गजब, परखै 'चम्पक' पीड़।
जीवन झोंकै जद-कदे, पड़ै भगत पर भीड़ ॥२६॥

'चम्पक' मंदिर री मुरत, माथै चाढ़ै लोक।
आचार्जां री आंण ही, साधै सगला थोक ॥२७॥

जद गुरु देवै ओलमो, झुकज्या चरणां आगै।
कद 'चम्पक' पतझड़ बिना, पेड़ां रै फल लागै ॥२८॥

गण गेलै गूंजै गणी, गण पूजै गणि-गोप।
गण जूंझै गणि आंण पर, 'चम्पक' गणि गण-ओप ॥२९॥

ऊपर उज्जल धोलियो, मन मिनखां रै मेल।
जेपुर री उपमा जचै, 'चम्पक' गल्यां रु हेल ॥३०॥

मन गलतो, मन गोमती, मन ही तीरथ-घाट।
मन मंदिर, मन देवता, मन ही पूजा-पाठ ॥३१॥

मन गंगा, मन गंदगी, मन रावण, मन राम ॥
सुरग-नरक पुन-पाप मन, मन उजाड़, मन ग्राम ॥३२॥

मन सीता, मन सुर्पणां, मन हि कृष्ण, मन कंस।
'चम्पक' मन योगी-यवन, मन कौओ, मन हंस ॥३३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निजर निर्मली निरखणो, किरतब खुली किताब।
'चंपक' रोब-रबाब रख, खो मत खोह गुलाल ॥३४॥

ऊठ सवारी ओज को, दिन मैं देखै ख्वाब।
'चम्पक' पड़ पर-पेज मैं, गलती करै गुलाब ॥३५॥

आज बलै क्यूं कालजो, जचै न जुगतो जाब।
सागर ! बहम पड़ै मनैं, गुमशुम कियां गुलाब ॥३६॥

गिरतोडै नै थाम'र, चंपा ! चेप टूटतोड़ै नैं।
फूंक दूखतै फोडै रै दै, सींच सूखतोड़ै नै ॥३७॥

सज्जन कम संसार मैं, दुर्जन घणा दिमाग।
हंसू चादर पर हतक, लाग न ज्यावै दाग ॥३८॥

थारी म्हारी उतरती, कर दै प्रीत तुडाय।
उडज्या कुबधी काकलो, राजहंस फसज्याय ॥३९॥

कण नै तूं मण मानलै, साहस राख संभाल।
हंसू काढै हिम्मती, पाणी फोड़ पताल ॥४०॥

कच्चै पक्कै आपरै, घर री हुवै न होड।
ओरां री महलायतां, फिरणूं हंसू जोड ॥४१॥

वीसा बरसा रो बण्यो, बड़लो जावै टूट।
अंकूरै री आश कद, 'चंपक' रहे अखूट ॥४२॥

हाकम देतां हुकम तूं जरां भांपलै भाव।
'चंपक' बोही चिमकसी, जिणरै गहरो घाव ॥४३॥

'चंपक' चिन्तन चितकां, करो समय समझाय।
नुआं मकान बणै नहीं, जूनां ढ़हता जाय ॥४४॥

सहणै री सगती हुवै, तो कर हंसी मजाक।
'चंपक' जो सुण नहिं सकै, तो जबान बस राख ॥४५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मन देखै जद ही करै, 'चंपक' हसी विनोद।
सुण विरोध-प्रतिशोध रो, तूं खाडो मत खोद ॥४६॥

कहणी कदे न काम की, खाण-पाण असुहाण।
'चंपक' निकलै चित्त नै, चीर बचन को बाण ॥४७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोलह सतियां (क्रमशः)

रामायण छन्द

ब्राह्मी[१] और सुन्दरी[२] कौशल्याजी[३] सीता[४] राजमती[५]।
कुन्ती[६] द्रुपद-सुता[७] चन्दनबाला[८] महारानी मृगावती[९]।
चतुर-चेलना[१०] प्रभावती[११] दीपती-सुभद्रा[१२] दमयन्ती[१३]।
सुलसा[१४] शिवा[१५] सोलवीं पद्मावती[१६] सती शुभ जयवन्ती ॥१॥

चतुर्विंशति-स्तव (लोगस्स) के आधार पर

पैंसठियो यन्त्र

दोहा

श्री नेमी[२२] संभव[३] सुविधि[९], धर्म[१५] शान्ति[१६] स्वयमेव।
अनन्त[१४] मुनि सुव्रत[२०] नमी[२१], अजित[२] चन्द्रप्रभ[८] देव ॥१॥
ऋषभ[१] सुपारस[७] विमल[१३] मलि[१९], पुष्प[२५] अंक पच्चीस।
अरह[१८] वीर[२४] सुमति[५] पदम[६], वासुपुज्य[१२] जगदीश ॥२॥
श्री शीतल[१०] श्रेयांस[११] जिन, कुन्थु[१७] पास[२३] भव-सेतु।
अभिनन्दन[४] वन्दन करै, 'चंपक' मंगल हेतु ॥३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सात बात रो एक जवाब

मनोहर-छन्द

एकरस्यां मोहन पे, गोप्यां मिल आई सात।
एक साथ बोली, मांगें पूरी करवाइये।
कविता सुणाओ[1] नाथ! कुश्ती दिखाओ[2]
द्वार बन्द कर आओ[3], ब्याह मेरो रचाइये[4]।
कहो जी! गुजरियों को गो-रस क्यूं लूट्यो आप[5]।
घूमन की इच्छा, एक रथ तो मंगाइये[6]।
उबराणे फिरते क्यों[7]? 'चंपक' चकोर होके।
'जोरी नां' कहे कृष्ण, करूं क्या बताइये॥१॥

---

१. कविता—जोड़ी नहीं।
२. कुश्ती कैसे लड़ूं?—पहलवान जोड़ी का नहीं।
३. द्वार बंद तो करूं—पर किवाड़ों की जोड़ी नहीं।
४. विवाह के लिए जोड़ीदार—बराबर का वर कहां है?
५. जोरी दावे थोड़ा ही लूटा था?
६. रथ के लिए बैलों की जोड़ी चाहिए, वह नहीं है।
७. जूतों की जोड़ी नहीं है क्या करूं? नंगे पांव फिरना पड़ता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पच्चक्खाण-निर्णय-विधि

रामायण-छन्द

एक कोटि इक भांगो रोकै, दोय कोटि स्यूं तीन रुकै,
तीन कोटि मै सात रुकैला, चार कोटि मैं नौ ठबकै।
पांच कोटि मैं तेरह गिणज्यो, छव मै रुकै भंग इकवीस,
सात कोटि मै रुकै पचीसी, आठ कोटि रोकै तेतीस।
नव कोटि पचखाण करै तो, सगला भांगा रुक ज्यावै,
करण-जोग रो लेखो भिन भिन, 'चम्पक' स्याणां समझावै ॥१॥

करण-जोग-कोटि	भांगा रुकै	आंक ११-१२-१३	२१-२२-२३	३१-३२-३३
१×१=१	१	१ × ×	× × ×	× × ×
१×२=२	३	२ १ ×	× × ×	× × ×
१×३=३	७	३ - ३ - १	× × ×	× × ×
२×१=४	९	४ - ३ - १	१ × ×	× × ×
२×२=५	१३	५ - ४ - १	२- १- ×	× × ×
२×३=६	२१	६ - ६ - २	३- ३- १	× × ×
३×१=७	२५	७ - ६ - २	५- ३- १	१ × ×
३×२=८	३३	८ - ७ - २	७- ५- १	२- १- ×
३×३=९	४९	९ - ९ - ३	९- ९- ३	३- ३- १

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाव्रतां रा २२५ भांगा

करण जोग स्यूं कर गुणां थावर पांचां संग।
पंचेन्द्रिय विकलेन्द्रियां प्रथम इक्यासी भंग ॥१॥

क्रोध, लोभ, भय, हास्य स्यूं नवगुण कर नतशीस।
दूजै महाव्रत रा बणै अै भांगा छत्तीस ॥२॥

अप्पं बहुवं अणुथुलं चित्त अचित्तमतान्त।
तीजै महाव्रत रा बणै भांगा चोपन शान्त ॥३॥

सप्त वीस चोथे गुणो देव मिनख तिर्यंच।
मिश्र अचित्त सचित्त स्यूं करो पांचवें संच ॥४॥

८१ ३६ ५४ २७-२७
इक्यासी छत्तीस मिलाल्यो चोपन दो सतवीस।
२२५
'चम्पक' भांगा महाव्रतां रा अै दो सौ पच्चीस ॥५॥

चोबीस तीर्थंकरां री पहचाण

गीतक

वृषभ[1] हाथी[2] अश्व[3] बन्दर[4] क्रोंच[5] कमल[6] रु स्वस्तिक[7],
शशि[8] मगर[9] श्रीवत्स[10] गेंडो[11] महिष[12] शूकर[13] श्येनक[14]।
वज्र[15] मृग[16] अज[17] और नंद्यावर्त[18] कलश[19] रु कूर्म[20] स्यूं,
नील-उत्पल[21] शंख[22] फणधर[23] सिंह[24] चीन्हों मर्म स्यूं ॥१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घासो-गोली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वस्थ अगर रहणो हुवै, 'चम्पक' कहणो मान ।
हित-मित पथ्याहार रो, सन्तां राखो ध्यान ॥१॥

टाली-टाली मत करो, सब रस मांगै देह ।
सन्तां ! उदर उणोदरी, राखो निःसन्देह ॥२॥

'चम्पक' नियमित घूमणो, आसण प्राणायाम ।
एक हवा सौ दवा रो, सन्तां ! करसी काम ॥३॥

रोग, बैर विष-बेल है, कहणै मैं के लाज ?
घासै-गोली रो करो, सन्तां ! प्रथम इलाज ॥४॥

अजीरण हुवै तो

अगर अजीरण रो बहम, पीओ निरणो पाणी ।
उत्तम औषध अपच रो, संतां ! ऋषि-जन बाणी ॥५॥

लै घासो घस सूंठ मैं, काली नमक डली ।
'चम्पा' ! सट कर नहीं तर, खटकै अली सली ॥६॥

जीव दोरो हुवै तो

जीव दोरो होवै जरां, दोय लूंग लै चाव ।
'चम्पक' अन्तर आग आ रूई मैं मत दाब ॥७॥

इमरत-धारा अधिकतर, सुलभ मिलै सब ठोड़ ।
च्यार बूंद लै क्यूं करै, 'चम्पा' ! भाजा-दोड़ ॥८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कबजी हुवै तो

इसब गोल हरडै नमक, ल्यो जो हो अनुकूल।
कब्ज रोग रो मूल है सन्तां ! करो न भूल ॥९॥

पेट-दर्द

पेट-दर्द असह्य तो, सांभर घी मै सांध।
द्यो समाधि झटपट हुवै, सन्तां ! धीरज बांध ॥१०॥

आधो हलदी-गांठियो, रगड़ छाछ मै चाटै।
असर तुरत 'चम्पक' करै पेट-दर्द नै दाटै ॥११॥

आधण सरिखो गरम जल, कप भर ल्यो मुनिराय।
घोल चमच चीणी पिओ, पेट आफरो जाय ॥१२॥

छव मासा भर सूंठ मै, मासो कालो लूंण।
उदर शूल मै फाकतां, इन्जेक्सन सो सूंण ॥१३॥

सूंठ मिरच इक इक पिपल, साजी जरा मिलाय।
घस तातै जल स्यूं पिअै, पेट-शूल मिट ज्याय ॥१४॥

बादी-गेस

सूंठ रेत मैं सिकी हुवै, कालो नमक मिलाय।
दो दो रत्ती मातरा, गेस पेट रो जाय ॥१५॥

धणियै री गूली दुणी मिसरी जीम्यां बाद।
फाकी लेलै गेस हर 'चम्पा' ! छोड़ प्रमाद ॥१६॥

पीपल १ लूंग १ सोडो मिठो, चमठी पीपरमेन्ट।
लै भोजन कै बाद मै, गेस मिटै अरजेन्ट ॥१७॥

आंव मै

सौंफ सूंठ छीपा हरड़, मिसरी तिणी मिलाय।
फाकी आठाना भरी, आंव पुराणी जाय ॥१८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भूनेड़ी जोहरड़ अरु, चीणी तिन-तिन मासा।
फाकै नित दोन्यूं वगत, जावै आंव अकाशां ॥१९॥

लस्सी कच्चै दूध री, तज मासा भर लेवै।
'चम्पा' ! अजमा आंव मैं, खून बन्द कर देवै ॥२०॥

तिन-तिन मासा चिणी मैं अमचूर फाक पी पाणी।
हफ्ते भर दिनगै-सिंज्या, विचै सूंफ नहिं खाणी ॥२१॥

पइसै भर छोटी दुधी, पाव दही में लेवै।
तीन दिनां तक रोज तो, आंव नांव नहिं रेवै ॥२२॥

खूनी उलटी-दस्त मै

पांच नीम रा पानड़ा, गोल मिरच ल्यो दोय।
घासो उलटी दस्त मैं, खून बन्ध झट होय ॥२३॥

'चम्पा' ! कप भर चाय मैं, चम्मच भर घी घाल।
पायां खूनी दस्त रो, सरल इलाज कमाल ॥२४॥

दांत-दर्द मै

दांत सुरक्षित राखणां, तो अंगुली स्यूं खूब।
रगड़ मसूड़ा दस मिनट, नित 'चम्पा' ! मत ऊब ॥२५॥

दांत दरद ज्यादा करै (तो) हलदी मसलो भाई।
दाबो कपूर कांकरी (या) हींग सुसरल दुवाई ॥२६॥

तीन लूंग नीम्बू रै रस मैं, पीस दांत पर मसलो।
दर्द मिटै 'चम्पक' हो ज्यावै, झट हल मसलो सगलो ॥२७॥

'चम्पा' ! दांतां पर मसल रोज तिली रो तेल।
मुंह बंदकर, झार्यां छुटै पायरिया स्यूं गेल ॥२८॥

दांत कढ़ायां नहिं हुवै, कदाच लोही बन्द।
फूओ कडवै तैल रो, दाबो ह्वै आनन्द ॥२९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आंख की दुवाई

कानां री किट्टी तथा, उठतां वासी थूक।
सन्तां ! घालो आंख मैं, अंजन अजब अचूक ॥३०॥

चम्पा पड़्ज्या पितरडो, गुडनै जरा तपा'र'[1]।
एक आंगली आंज कर, बाकी बांधो वार ॥३१॥

नाक री फुणसी पर

फुणसी निकलै नाक पर, टीकी द्यो घिस लूंग।
अथवा काली मिरच की, भूल तैल मत सूंघ ॥३२॥

हो ज्यावै रूं-तोडियो फुणसी उठै विषेली।
रगड़ अफीम लगाय द्यो, संता ! सारां पेली ॥३३॥

ताव-बुखार, शरदी-जुखाम

ज्वर नै भूखी राखणी जुखाम पथ्याहार।
मांगै सन्तां ! मानल्यो, नेक सलाह सुखकार ॥३४॥

ताती मिसरी चाबकर, गरम उदग पी त्याग।
करो सांझ का सन्त जन, शरदी जासी भाग ॥३५॥

लूंग सूंठ अजवाण ल्यो, पीपल तुलसी पत्र।
घाल लूंण पंच मेल को, घासो बड़ो विचित्र ॥३६॥

दीपन पाचन ज्वर-हरण, दोष-शमन हित दोय।
गोलीद्यो संजीवनी, काया कंचन होय ॥३७॥

बीस पीस काली मिरच, काढ़ै विधि उपरान्त।
छांण, ठार, पीवै कटै, मलेरिया री रान्त ॥३८॥

---

१. एक बूंद नींबू रस मिलाकर।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूखे छाती पासल्यां, दो मुनका कर साफ।
हींग दो रती घालद्यो, सावल अपणै आप ॥३९॥
राख पुराणै बोरै री, दो रत्ती शहद मिलाय।
चाटै मलेरिया एकान्तर, चोथ तेजरो जाय ॥४०॥

खांड फिटकड़ी रो फूल्योद्यो जलस्यूं औषधि सेहली।
दो-दो घंटा स्यूं दो पुड़ियां बुखार चढ़ियां पेहली ॥४१॥

गलै रो इलाज

शरदी स्यूं दूखै गलो, उन्हे जल रै साथ।
करो गिरारा लूंण का, सन्तां! मानो बात ॥४२॥

गरमी स्यूं सूकै गलो, चिपज्यावै जो कंठ।
ठंडै पाणी स्यूं करो, कुरला तज अंट-संट ॥४३॥

करो गरारा हींग रा, जो होवै स्वर-भंग।
मिटै खरखरी गलै री, कवोष्ण जल रै संग ॥४४॥

कफ रो हुवै प्रकोप तो, जरा फिटकड़ी घोल।
करो गारगल कफ झड़ै, जय-भिक्षु की बोल ॥४५॥

तैल गुणगुणो तिली रो जको कान मै घालै।
चमत्कार बो गलै रा टोन्सल, सुजन मिटालै ॥४६॥

ल्यो अरहर की दाल रो थोड़ो उबल्यो पाणी।
करो गरारा मुनिजनां! जो टोन्सल सुजन मिटाणी ॥४७॥

खासी

च्यार-पांच काली मिरच, डली लूंण की न्हांक।
चाबो पाणी मत पिओ, खासी जाय चटाक ॥४८॥

रगड़ च्यार पिस्ता मियां, चाटै शहत मिलाय।
सूखो कफ खलकै तुरत, 'चम्पक' ल्यो अजमाय ॥४९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिर-दर्द

छोटी सीसी मैं भरो, पीस हींग बारीक।
सूंघाओ सिर-दर्द झट, होसी सन्तां ! ठीक ॥५०॥

सूखा तुलसी-पत्र ल्या, पीस छांण द्यो नास।
पांच मिनट मैं सिर-दरद, मिटै करो विश्वास ॥५१॥

बे-हिसाब माथो दुखै (तो) पीपल जल में पीस।
छांण नाक मैं बूंद दो सूंघो, ऊठै चीस ॥५२॥

झलझलाट लागै घणो (पण) पीड़ा करसी कूच।
चम्पा अजमाइश सुदा, मणि-मुनि नै ल्यो पूछ ॥५३॥

सात विदामा एकमिर, इक इलायची घोट।
सिता मिला चाट्यां मिटै, सिर की शूल सचोट ॥५४॥

मधु-मेह

रस गिलोय चम्मच भर्‌यो, चमच्यो शहत मिलाय।
चाटै रोजीनां सुबह, (तो) सब प्रमेह मिट ज्याय ॥५५॥

शहद आंवला-रस हलद, कर समभाग प्रयोग।
चम्मच भर दोन्यूं वगत, मिटै प्रमेयज-रोग ॥५६॥

सत गिलोय, आंवला, हलद सम चम्मच भर फाक।
जल स्यूं गिट, भोजन करै शूगर मिटै सटाक ॥५७॥

'चम्पा' ! चोआनी भरी लै बूंटी गुडमार।
स्वरस करेलै रो मिला (तो) शुगर समुद्रां-पार ॥५८॥

सांधां रो दरद (गठिया-वात)

चीड़ भेड रो बीस ग्राम लै सुबह बीस ही सिंज्या।
सात दिनां से सांधा खुलज्या 'चम्पक' धीज पतीज्या ॥५६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लकबै री शन्यता पर

दस पन्द्रह काली मिरच, घी मैं घिस बारीक।
लकबै पर मालिस करै (तो) सात दिनां मैं ठीक ॥६०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यादगारां

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुनि राजमलजी (आत्मा) नै सीख

अजी ! राजमल जी कियां ? चाल्या इयां अबोल ?
'चम्पक' मिनटां मैं कर्‌यां, थे तो बिस्तर गोल ॥१॥

जातां-जातां सीख ल्यो, अणसण-रोली घोल ।
'चम्पक' तिलक करै चतुर ! जमग्यो रंग जसोल ॥२॥

२०२१ चेत वदी ५
जसोल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गणेशमलजी स्वामी (जसोल) की स्मृति में

सोरठा

गहरो गुणी गणेश, गलै सुदी गण मै गड्यो।
बलि बलवान विशेष, 'चम्पक' चतुरां चित चढ्यो ॥१॥

डायै हाथ मै हाथ, पकड्या दोन्यूं म्हारला।
जोर लगा इक साथ, 'चम्पक' कस्यो छुड़ाण नै ॥२॥

पूंचा जाता टूट, जोर लगातो और जो।
जाय जंबूरी छूट, स्यात् सिकंजो सिरकज्या ॥३॥

'चम्पक' आवै याद, बो दिन बीयां को बियां।
गुण गणेश साल्हाद, गणि-गण रो भारी भगत ॥४॥

पूरी ही परतीत, रीत-नीत रो रांगड़ी।
बरतेडो विपरीत, नहीं सुहातो संघ स्यूं ॥५॥

मुनि जीवण-मुलतान, सेवा साझी सांतरी।
भल भावी बलवान, टाली 'चम्पक' नहिं टलै ॥६॥

चढ़ै सिराडै काम, जो राखै शासण-शरण।
नित गणेश रो नाम, 'चम्पक' चित चेतै करै ॥७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रावतमलजी स्वामी की स्मृति में

सोरठा

साताकारी सन्त, समझदार स्याणो सुघड़।
मुनिरावत मतिमन्त, साचो सेवक संघ रो ॥१॥

गण-गणपति रा गीत, गौरव स्यूं गातो गुणी।
निश्छल निर्मल नीत, निरतिचार निर्भय निपुण ॥२॥

संयम मैं सानन्द. सावधान 'चम्पक' सजग।
(अब) राखीजे जयचन्द !, रावत मुनि री रीत तूं ॥३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोहन मुनि (चूरू) की स्मृति में

दोहा

अड़ी-खंभ खूंटो खरो, गण रो खैरखवाह।
टेक निभायी एक-सी, वाह ! सोहन मुनि वाह ।।१।।

सेवा मुनि नगराज री, और छत्र रो त्याग।
दोनां रै हाथां गया, (ओ) सोहन रो सोभाग ।।२।।

थां सरिखो शासण-भगत विरलो, कवि बे-जोड़।
पलक इशारे परखतो, मंत्री-मुनि री मोड़ ।।३।।

वाह रे वाह थांरो विनय, भक्ति मान-मनुहार।
सोहन मुनि-सा समर्पित, लाखां मैं दो चार ।।४।।

'चम्पक' चित्त चितारसी, जदकद ल्हसण-प्याज।
सोहन ! सम्वत सात है, आंख्यां सामै आज ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सहिष्णुता की प्रतिमूर्ति, साध्वीप्रमुखा,
महासती लाडांजी की पुण्य-स्मृति में

दोहा

खरी कुशल खेमंकरी, खटी न खामी खेह ।
लाडां 'दीपां' दूसरी, हथणी की सी देह ।।१।।

दीपक लाडां दीपती, दीदारु दाठीक ।
चम्प ! चरुडो च्यानणो, पटुता-प्रीत प्रतीक ।।२।।

कला-कुशल कोमल कमल, पद की रंच न पीक ।
'चम्पक' ! राखण चोकसी, लाडां तजी न लीक ।।३।।

धीरी धरणीधर जिसी, सरल स्वभावी शान्त ।
शुभ चिन्तन 'चम्पक' सतत, बणी न लाडां भ्रान्त ।।४।।

शासण नै सुगणी सती, दीन्हो अपणो भोग ।
'चम्पक' अब चेतै करै, लाडां नै सब लोग ।।५।।

शिक्षा-प्रिय, सेवा सजग, सहिष्णुता संस्कार ।
मातृ-हृदय स्याणी सदय, सती सिरे सरदार ।।६।।

बिज्जल बंकी बेनड़ी, निर्मल शासण-नैण ।
'चम्पक' आज चली गयी, मैं समरूं दिन-रैण ।।७।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साध्वी रतनाजी (राजलदेसर) की स्मृति मैं
(२०२५, भाद्रपद, कृष्णा १३, चूरू)

सोरठा

वाह ! रतनाजी ! वाह !, करी फतह रण-खेत मैं ।
'चम्पक' री चित चाह, लाख-लाख शाबास ल्यो ।।१।।

रतनां रतन अमोल, शासण मै स्याणी सती ।
गम्यो न गाला-गोल, साफ कह्यो खुल्लो सुण्यो ।।२।।

दृष्टि धण्यां री देख, पेहलां, पग धरती पछै ।
राखी रतनां रेख, आखी अणियां एक-सी ।।३।।

हित री हक री बात, कहतां रतनां कद चुकी ।
सुस्ताती नहिं स्यात्, करी न कोई री गई ।।४।।

सेवाकरण सचेष्ट, गिण्यो न छायां धूप नै ।
सागी मां-सी श्रेष्ठ, रतनां रोगी-ग्लान री ।।५।।

चतर हाथ री आम, रतनां रंग-रोगान मैं ।
इस्यो-विस्यो कोई काम, दाय न आतो देखतां ।।६।।

'चम्पक' नित अविवाद, पथ-ल्यावण घासो घसण ।
आसी रतनां याद, सांधण टूटी पातरी ।।७।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आशुकवि सोहनलाल सेठिया (सरदारशहर) के प्रति

स्याणो सोहन सेठियो, समझदार समयज्ञ।
शासण रै इतिहास रो, संग्राहक मर्मज्ञ ।।१।।

मालचन्द जी रा मिल्या, शुभ सात्विक संस्कार।
विमल विवेकी विज्ञ वर, गहर गंभीर विचार ।।२।।

अन्तरंग-पार्षद असल, विधि-वेत्ता विश्वस्त।
टाबर होकर ठिमर-सा, लिखतो पत्र प्रशस्त ।।३।।

आंख इशारे ओलखतो, आशय इंगियागार।
अति उपयोगी आशु-कवि, उद्यमशील उदार ।।४।।

बिनय मढ़ी, बोली बडी, घड़ी बुद्धि बजराट।
जुड़ी-कड़ी सोहन श्रमण-सागर की गहघाट ।।५।।

आस्था गणि-गण री सुदृढ़ श्रद्धावान सुभाष।
स्मरण-शक्ति अद्भुत उपज, अहं न आयो पास ।।६।।

वर्तन चिन्तन कथन हो, अनुशीलन अनुरूप।
'चम्पक' सोहन चमकग्यो, श्रावकता रो स्तूप ।।७।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रांचलिया सुगनू बाबू की याद में

दोहा

भद्र-पुरुष, भाविक भलो, भातृ-भक्ति भरपूर।
भीतर भीरु, भुज-बली, छल-बल-दल स्यूं दूर ।।१।।

शासण रो सेवक सुघड़, सभ्य, शील-संगीन।
शान्त स्वभावी, सन्त-सो, सुगनचन्द शालीन ।।२।।

पग-पग रस्तो नापतो, यात्रावां रो रूप।
साताकारी सांतरो, गिणी न छायां धूप ।।३।।

बंगाली-बाबू जिसो, बण्यो बणायो वेश।
काली कांबल इकपखी, विनयी विज्ञ विशेष ।।४।।

नफरत झंझट-झूठ स्यूं, गम्यो न वाद-विवाद।
आंचलियै री आसथा, 'चम्पक' आसी याद ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सेठ भंवरलाल दूगड़ की याद में

दोहा

विज्ञ, विवेकी, वैद्य बो, धीर, वीर, गंभीर।
माखण ज्यूं पिघलत हियो, परख पराई पीर ॥१॥

दरद्यां पर दिल री दया, रोग्यां रो हो राम।
दुखियां री 'भंवरू' दवा, थाक्यां रो विश्राम ॥२॥

जाणकार जस हाथ मैं, निरधनियां स्यूं नेह।
गिणी न आघी-पाछली, 'भंवरू' आंधी-मेह ॥३॥

सेठां रै घर रो रह्यो, रजवाड़ी सम्मान।
(पर) 'भंवरू' मैं देख्यो नहिं, दर मैं मान-गुमान ॥४॥

सीधो-सादो संजमी, सन्त-सत्यां रो दास।
सोनो 'चम्पक' सोलवूं, 'भंवरू' रो विश्वास ॥५॥

फुलड़ां पर भंवरा फिरै, फिर्‌या भंवर पर फूल।
विधना ओ के बे-बगत, करगी ऊल-पंचूल ॥६॥

सेठां ! अब सेंठा रयो, सगला कहै समझाय।
(पर) 'चम्पक' चतुरां चित चढ्यो, 'भंवर' न भूल्यो जाय ॥७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोहनलालजी खटेड़ (लाडणू) की याद में

दोहा

भाई मोहनलालजी, श्रावक सुघड़ सुजाण।
कर अनशन-आराधना, कीन्हो स्वर्ग-प्रयाण ॥१॥

उभय पक्ष निर्मल कर्यो, पायो जन्म प्रमाण।
ज्ञान-ध्यान स्वाध्याय मै, रहता आगेवाण ॥२॥

कहता कम, सुणता घणी, करता जुगती जाण।
थोडै मै सलटावता, तज मन खींचा ताण ॥३॥

हमदर्दी हद हिम्मती, सुविवेकी दाठीक।
लल्लै-चप्पै स्यूं परै, वर निस्पृह निर्भीक ॥४॥

कहणै री मुंहडै कही, बण कर बे-परवाह।
नहिं कहणै री अन्त तक, कहो कुण पायो थाह ॥५॥

सलाह लेवता सैकडां, देता हित-मित सीख।
भारी चिड़ ही झूठ स्यूं, गिण्यो न दूर नजीक ॥६॥

नित निर्मल करणी करी, स्वाभिमान युत नेक।
'चम्पक' भाई सैकड़ां (पर) मोहन-सा कोइ एक ॥७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हणूतमलजी सुराणा (चूरू) के प्रति

दोहा

हाजर सेठ हणूतमल, हरदम शासण हेत।
सब स्यूं ऊपर समझतो, सदा सुगुरु संकेत ॥१॥

संघ-द्रोही स्यूं स्वप्न मैं, भी नहिं मिलती रूह।
गण-गणि री गमती नहीं, चम्पक ऊह-पचूह ॥२॥

'चम्पक' बो जलम्यो नहीं, रुकण झुकण री रात।
टाली कदे न टेम पर, सेठाणी री बात ॥३॥

आदर[1] गो फादर अवल, संत-सत्यां रो भक्त।
'चम्पक' कदे न चूकतो, वक्त व्यक्त अव्यक्त ॥४॥

जी-सा सुणतां झिझकतो, 'अम्मापिउ' समाण।
दृढ़-धर्मी 'चम्पक' खरो, (वो) दिया ठिकाणै प्राण ॥५॥

---

१. आदर्श साहित्य-संघ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दफ्तरी जयचन्दलालजी की याद में

दोहा

स्याणो शासण भक्त, हद हो हाथी हिम्मती ।
हमदर्दी हर वक्त, दुःखदर्दी को दफ्तरी ॥१॥

निस्संकिय निर्भीक, काम करावण कलकुशल ।
धीर-धुनी दाठीक, 'चम्पक' तेजस्वी चतुर ॥२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पद्यात्मक पत्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पत्र संख्या ३
भीनासर
वि० सं० २००० मिगसर सुदी ११

दोहा

हृदय-कमल विकसावसी, देख्यां तुझ मुख भान।
आनन्द अनुपम जे हुसी, ते जाणै भगवान ॥१॥

परम पूज्य महाराज रै, श्री चरणां अनुरक्त।
सुखसाता पूछै सुखद, बड़बंधव विधियुक्त ॥२॥

देव सुमंगल दृष्टि स्यूं, बहुत-बहुत आनन्द।
वरतै, चाहूं आप री, करुणा वदना-नन्द ! ॥३॥

वत्सलता चिरंकाल तक, चावै है श्री-संघ।
पावो जग मैं जय-विजय, पग-पग पर रस-रंग ॥४॥

भ्रात ! बाट आगमन की, देखूं मै दिन-रैन।
सुख-संवाद सुण्यां हुवै, चित मैं 'चम्पक' चैन ॥५॥

भक्ति-पत्र कै रूप मै, भेजूं दूहा पांच।
आंख पांख 'चम्पक' तुंही, तुंहि चूगो तुंहि चांच ॥६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पत्र संख्या ५
बम्बई
२०११ माघ सुदी १५

दोहा

भव्य ! मातृदेवो भव, आप्त वाक्य अनुसार।
मातृ-चरण 'चम्पक' करै, वन्दन सौ-सौ-बार ।।१।।

स्वस्ती श्री गुरुदेव कै, पग-पग जय-जयकार।
जन-मनहारी स्वाम कै, जग-जस अपरम्पार ।।२।।

बड़भागी गुरुदेव कै, चिहु दिशि रेलम्पेल।
दिन दूणी निशि चौगुणी, बधै संघ री बेल ।।३।।

मन प्रसन्न गुरुदेव को, सुन्दर स्वास्थ्य विशेष।
चित चिन्ता करज्यो मती, यद्यपि बास विदेश ।।४।।

सोरठा

सब शहरां शिरमोड़, मुम्बई सागी मोहमयी।
सुन्दरता बे-जोड़, निवसै लोग सुसभ्य-सा ।।५।।

प्रकृति देही धार, मानो भू-पर ऊतरी।
इत जल जलाकार, इत पहाड़ ऊंचा हर्‌या ।।६।।

दरियो करै किलोल, चढै उछाला खावतो।
करतो घोल-मथोल, टोलां स्यूं टकरावतो ।।७।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बम्बई रै अनुरूप, होयो पुज्य पधारणो।
लोकां पण धर चूंप, लाहो सेवा रो लियो ॥८॥

बण्या घणां प्रोग्राम, देख्यां जी-सोरो हुवै।
माह-मोच्छव रो काम, सारां मैं हद लेयग्यो ॥९॥

ही सगली तजबीज (पण) कमी आपरी खटकती।
मंजुल मूर्ति घणीज, रह-रह चेतै आंवती ॥१०॥

अनुभव ही अनुमान, प्रख्याती मैं के कहूं ?।
लारै फिरै निधान, होणहार पुण्यवान कै ॥११॥

श्री गुरुराज प्रताप, सुखसाता वरतै अठै।
माजी ! घणीज आप, चित्त-समाधी राखज्यो ॥१२॥

करज्यो पर-उपकार, विचर-विचर गांवां नगर।
भगर सखर सुखकार, सदा स्वास्थ्य री साधना ॥१३॥

वृद्धावस्था पेख, सेवा रो लाहो लियो।
ओरुं अवसर देख, धणी घणी करसी कृपा ॥१४॥

करो सतत स्वाध्याय, आं थांरै अनुरूप है।
जीवन सफल गिणाय (जद) मैं भी करस्यूं अनुकरण ॥१५॥

इण ऊमर रै माह, ओ साहस, संयम-निमल।
राखो मन उत्साह, धन्य-धन्य है आपनै ॥१६॥

विरह असह्य अवश्य, (पण) अछो वीरमाता तुम्हे।
समझो सकल रहस्य, गाढ़ घणेरो राखज्यो ॥१७॥

ले म्हांरो अभिधान, थे सुखसाता पूछज्यो।
सतियां सहु गणवान, सब नै सोहरा राखज्यो ॥१८॥

समाचार सुखकार, सुणां घणां लोगां कनै।
हुवै हर्ष अणपार, (पण) म्हांनै चेतै राखज्यो ॥१९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सकल कुशल संवाद, थांरै ही परताप स्यूं।
फिर-फिर आवै याद, साद सुवत्सलता मर्‌या ॥२०॥

माजी! कृपा विशेष, बणी सवाई नित रहै।
बातां सैं अवशेष, मिल्यां कहण रा भाव है ॥२१॥

मातृ-भक्त अनन्य, 'चम्पक' चित चरणां वसै।
वो दिन ऊगै धन्य, जद मिलणो होसी सुखद ॥२२॥

दोहा

तत्रस्थित सतियां भणी, वंचै चम्पक रेस।
सुखसाता सब राखज्यो, हिलमिल हेत विशेष ॥२३॥

समझदार नै ह्वै सदा, घणो इशारो एक।
जाझी सेवा साझज्यो, जागृत राख विवेक ॥२४॥

सत्यां! ज्यादा के लिखूं, सो बातां इक बात।
माजी मन राजी रहै, ज्यूं करज्यो सहु साथ ॥२५॥

सोरठा

श्रमण रु हंस गुलाब, हीरो मणी वसन्त युत।
सविनय आदर-भाव, पूछै सुखसाता प्रगट ॥२६॥

स्वीकृत करो प्रणाम, अन्तर आशिर्वाद द्यो।
आवां गण-गणि काम, 'चम्पक' म्हे चित चाव स्यूं ॥२७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पत्र-संख्या ६
सरदारशहर
२०१६ फागण वदी ८

दोहा

स्वस्ति श्री मातेश्वरी !, सुखपृच्छा साल्हाद ।
खिण-खिण आवै आपरी, म्हां सगलां नै याद ।।१।।

म्हे सगला सकुशल अठै, श्री गुरुदेव प्रसाद ।
शिघ्र मिलेला आपनै, गुरु-दर्शण रो स्वाद ।।२।।

सफल सुफल यात्रा करी, जावां माजी पास ।
म्हां सगलां रै चित्त मै, है अधिको उल्लास ।।३।।

चढ्यो शिखर गण आपणो, भारी बढ्यो विकास ।
जुग-जुग जावेला पढ्यो, (ओ) यात्रा रो इतिहास ।।४।।

विजय हुवै जावै जठै, बधै घणो सम्मान ।
पुण्यवान गुरुदेव रै, पग-पग प्रगट निधान ।।५।।

संयम सफलो आपरो, वरतै है शुभ-योग ।
आही म्हारी कामना, रहिज्यो सदा निरोग ।।६।।

सेवा मै जो साधव्यां, सुख-पृच्छा सविधान ।
माजी ज्यूं राजी रहै, सगला राख्या ध्यान ।।७।।

पुण्याई दिन-दिन बधो, माजी ! वय रै साथ ।
'चम्पक' अब मिलस्या जणां, करस्या सारी बात ।।८।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सब सन्ता री तरफ स्यूं, सुखसाता सह हर्ष ।
तुलसी-शासण मैं तपो, माताजी सौ-वर्ष ॥९॥

जस, मिलाप, मोहन, पिथू, सम्पत, मणी, महेश ।
सागर रूप वसन्त की, सुख-पृच्छा सुविशेष ॥१०॥

माजी ! गुरुकुलवास ओ, सेवा रो संयोग ।
बगसावो गुरु महर कर, यात्रा रो शुभ योग ॥११॥

माताजी ! म्हां पर धण्यां, करी घणी धणियाप ।
म्हे सगला सकुशल अठै, थांरै ही परताप ॥१२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पत्र संख्या ३०
२०२५ प्रथम आषाढ़ वदी २
२ जून १९६९

दोहा

म्हे तो चिकमंगलोर मैं, थे बीदासर ठीक।
दूरी 'चम्पक' देह पर, अन्तर अति नजदीक ॥१॥

मन मैं आवै उड मिलूं, पगां हुवै जो पांख।
के है ? क्यूं ? क्यूं नहिं मिटै, झट ल्यूं 'चम्पक' झांक ॥२॥

राजरूप जी री रही, रग रजवाड़ी चाल।
'चम्पक' झूमर कुल कला, लाड ! लाडली-लाल ॥३॥

वदना-मां री बहुमुखी, ढली जु धीरज ढाल।
छव भायां री छवि मयी (तूं) लाड ! लाडली-लाल ॥४॥

सिंह पुरुष 'चम्पक' चतुर, माहवत मोहनलाल।
बीं भाई री बैन तूं, लाड ! लाडली-लाल ॥५॥

कोठारी करड़ै मतै, नीतिमान ननिहाल।
बैद सुनहली कुल-वधू (तूं) लाड ! लाडली लाल ॥६॥

संयम लीन्हो सिंह ज्यूं, ठेट निभायी टेक।
'चम्पक' चेतै राखज्ये, रण-रजपूती रेख ॥७॥

अधिकारी पद मैं अखी, सारी शासण-सेव।
निरतिचार 'चम्पक' निमल, अलगो रख अहमेव ॥८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शासण भिक्षु स्वाम रो, मिलियो मोटै भाग।
तुलसी-सो नायक तरुण, 'चम्पक' चैन चिराग ॥९॥

कहै 'चम्पक' सुण बहन ! कद, टलै आखिरी टेम।
प्राप्त करी पंडित-मरण, कुशल-खेम बण हेम ॥१०॥

रोग असाध्य शरीर मैं, समता युत खुशहाल।
'चम्पक' शतमुख जन कहै, (आ) लाडां करै कमाल ॥११॥

सहनशीलता सजगता, रत स्वाध्याय पुनीत।
आ अंतिम आराधना (थे) रह्या जमारो जीत ॥१२॥

पर माजी रो बांधज्यो, सुदृढ़ धीरज बांध।
लाखीणी लाडां बणै, चमकै 'चम्पक' चांद ॥१३॥

आज्ञा अनुशासन-कुशल, वर वात्सल्य अगाध।
सुगणी स्याणी सति करै, अब लाडां नै याद ॥१४॥

आस-पास होतो अगर, (तो) दिखलातो दो हाथ।
'चम्पक' सेवा साझ तो, बणा अनोखी बात ॥१५॥

अब लाडां ! मोको निरख, खांप दिखाजे खंग।
'चम्पक' तूं मत चूकजे, राजपूतण ! रण-रंग ॥१६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पत्र संख्या ३३
बैंगलूर
२०२६ भादवासुदी ११/१२

दोहा

तन-बल ज्यूं-ज्यूं तनु हुवै, मन-बल ह्वै मजबूत।
काची नहिं ताकै कदे, सूरा सिंह सपूत ॥१॥

रांगड़-रण मैं रत रहै, रढ़ियालो रजपूत।
जुग-जुग रेहसी जींवती, लाडां! सबल सपूत ॥२॥

साहस लाडां रो सुणूं, तो पौरुष चढ़ै प्रचूर।
मिलणै री मन मैं घणी, पण पैंड़ो अति दूर ॥३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पत्र-संख्या ३५
वैंगलूर
२३-१०-१९६९
२०२६ आसोजसुदी १३

दोहा

जयवन्तो शासन जबर, अति उन्नत इतिहास।
आपां बडभागी इसो, पायो परम प्रकाश ।।१।।

एक-एक स्यूं ही अधिक, त्यागी तपसी सन्त।
पर लाडांजी लेयग्या, बाजी तंतो तंत ।।२।।

सहनशीलतां वेदनां, दोन्यां रो संघर्ष।
विजयी बणै सहिष्णुता, लाडां रो उत्कर्ष ।।३।।

गांव-गांव रा जातरी, आवै दर्शण हेत।
मुख-मुख स्यूं आवाज इक, लाडां बड़ी सचेत ।।४।।

वीदासर वासी सुघड़, खूब निभावै फर्ज।
सुण श्री चित परसन हुयो, (जद) करी चोरड़्यो अर्ज ।।५।।

पसरै संघ प्रभावना, है सगलां रो काम।
'चम्पक' जी सोरो हुवै, जद सुणूं पूर्ण आराम ।।६।।

स्वास्थ्य लाभ लाडां वरो, करो संघ री सेव।
(तो) 'चम्पक' दर्शण शीघ्र ही, देसी श्री गुरुदेव ।।७।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पत्र-संख्या ३६

दोहा

देव गुरु परताप स्यूं, अनान्द वरतै अत्र।
शुभ भगिनी भगिनी सुणो, लाडां ! चम्पक पत्र ।।१।।

सकल सिद्धि दाता सुगुरु, समरूं बारम्बार।
जननी रो इण जगत मैं, है अनन्त उपकार ।।२।।

संस्कारी सम्यक्त्व शुभ, सुध संयम सहयोग।
आत्म-साधना में अतुल, पावन मिल्यो प्रयोग ।।३।।

ओ भैक्षव-शासन अमल, लहकै लीला लहर।
कहो बखाणूं मैं किती, माताजी की महर ।।४।।

नाता भाई-बहन रा, आपां कर्‌या अपार।
पण संयम बिन जीव री, सरी न गरज लिगार ।।५।।

मोको अबकै ओ मिल्यो, सर्‌या मनोरथ सार।
समकित चारित पुल सफल, तर्‌या सिंधु-संसार ।।६।।

जीव विभावी भाव मैं, रुल्यो अनन्तो काल।
सहज आत्म-दर्शण बिना, सगलो आल जंजाल ।।७।।

कर्म-वर्गणा रो कर्‌यो, संचय आद अनाद।
उज्ज्वलता तप-निर्जरा, बणै स्वर्ण निर्खाद ।।८।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्रमत्त लाडां रहो, खिण खिण चतुर सुजाण।
वरो आत्म-आरोग्यता, करो स्व-पर-कल्याण ॥९॥

आत्म-भावना मैं मगन, लगन एक अवलोय।
शरीर आत्मा अलग है, दोय मिल्यां दुख होय ॥१०॥

समतायुत स्वाध्याय मैं, बणो हृदय तल्लीन।
करो उपक्रम जुगत स्यूं, बणै विरूप विलीन ॥११॥

आत्म स्वरूपोदय हुवै, निखरै अन्तर-नाद।
भावै 'चम्पक' भावना, आत्मानन्द अगाध ॥१२॥

गुरु-दर्शण री चावना, हुयां करै हरवक्त।
(पर) भावां मैं भगवान रा, दर्शण देखै भक्त ॥१३॥

बीदासर रो क्षेत्र ओ, मां-बेट्यां रो जोग।
स्याणा श्रावक श्राविका, नदी-नाव संयोग ॥१४॥

सेवा मैं सतियां सतत, सावधान सोत्साह।
भैक्षव शासण री हुवै, जग मैं यूं वाह! वाह ॥१५॥

फर्ज सिर्फ पुरुषार्थ रो, होसी होवण हार।
आत्म-भावना परक औ, 'चम्पक' खुला विचार ॥१६॥

ज्यूं-ज्यूं पैंडो काटस्यां, होस्यां त्यूं नजदीक।
'चम्पक' देव-गुरु कृपा, जो होसी सो ठीक ॥१७॥

बीदासर रा लोग मिल, करी अर्ज सविवेक।
मांगीलाल भी कहण मैं, कमी न राखी एक ॥१८॥

समाचार विधि-विधि सुण्या, पर दर्शण रो जोग।
आसी जद मिलणो हुसी, लाडां! बणो निरोग ॥१९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पत्र संख्या ३७
नागपुर
२०२७ मिगसर कृष्णा ९

दोहा

माजी ! म्हे महाराष्ट्र मैं, पायो सुखे प्रवेश।
सरकारी सम्मान स्यूं, स्वागत विधि सुविशेष ॥१॥

गण-गौरव गरिमा गहन, अतिशय धर आचार्य।
सावचेत श्रावक सुघड़, कर्‌यो कठिनतर कार्य ॥२॥

रोज रायपुर मैं रह्यो, रोलो सीता-राम।
गुंडां रै हाथां गरक, तपग्यो शहर तमाम ॥३॥

रोया घणाज रोवणां, धेख्यां पोखण धेख।
कृत नहिं करणै रा कर्‌या, दंग रह्या सब देख ॥४॥

नाच मोरियो पग निरख, नीर झरै भर नैण।
पिछतावै पापी पछै, कवियां री आ कैण ॥५॥

परतख परख्यो पारखू, शासण रो सौभाग।
तुलसी फौलादी पुरुष, 'चम्पक' चैन-चिराग ॥६॥

माजी ! थांरी महर स्यूं, लागी लीला लहर।
जय गूंजै जावां जठै, आनन्द आठूं पहर ॥७॥

संगीना सह संतरी, पुलिस जवान ससेन।
अफसर फटफटिया लियां, आगै-लारै भेन ॥८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सागै यात्री सात सौ, लोर्‌यां गाड्यां लेण।
बावन कारां मोटरां, वोलेन्टर अति सेण ॥९॥

धर कूंचा धर मंजलां, दोडां दोनूं टेम।
मन मैं माजी मिलण री, क्षण-क्षण कुशलै खेम ॥१०॥

सदा समाधी मैं सुखे, रहै निरुज तनुरत्न।
'चम्पक' चतुर चकोर चित, प्रतिपल करो प्रयत्न ॥११॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संस्मरण पदावली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(इण अठहत्तर दूहां में अठहत्तर संस्मरण आयोडा है। वे अन्त में क्रमवार हिन्दी भाषा में दीयोडा है।)

आपसरी मै बांटकर, खाणो सदा खुवा'र।
हाल काम आवै संन्तां ! (बै) माजी रा संस्कार।।१।।

पड़ूं परायी भीड़ मैं, जद कद हुवै प्रमाद।
'चम्पक' हलदी-दूधरी, (बा) घटना आवै याद।।२।।

कह्यो न सदतो, रेंवतो, (म्हारो) तोरो चढ्यो अकास।
पड़ी प्रकृति जावै कियां, सन्तां ! सोहरै सास।।३।।

सोचूं आज हुंसी आवै, बो भी हो कुछ टाबरपण।
रोयो दादोजी रै सागै, बैकूंठी मै बैठण।।
हपड-हपड कर चिता जली जद, पड्यो एक पलको-सो।
'चम्पक' चमक्यो चित चेतना को, अनुभव हलको-सो।।४।।

म्हें लड़ पड़ता शान मैं, पत्थर फैंक अजाण।
अखी प्रमाण लिलाड़ मैं (ओ) 'चम्पक' पड्यो निसाण।।५।।

पकड़ पूंछड़ी उंदरड़ी, मै ल्यातो मन-मोद।
डर लाडांजी भाजता, बड़ता मां की गोद।।६।।

किरचा रोज चुरावतो, लुक-छिप भर-भर मुट्ठी।
ल्हापां मैं चनपट पड़ी, 'चम्पक' चोरी छूटी।।७।।

मै राणावजी रै कुअै, डूब्यो जद कोठा मैं।
उगी किरण वैराग री, मोत दीसगी सामैं।।८।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बीं कूअै पडतां नै राख्यो, हाथ झाल प्रेमालू।
अबै पकड़ काढ़ो तो जाणूं, रोज कहै ओ बालू॥९॥

बालू! हाल के बीगड्यो, कर हिम्मत अविखिन्न।
असल मित्रता को अमिट, 'चम्पक' मांडै चिह्न॥१०॥

बाबू अबै पास होग्या, मामाजी मार्‍यो तीर।
आई शरम, छोड दी बीड़ी, चम्पो खांच लकीर॥११॥

अपणो-सो पर-दुख हुवै, जाण्यो पेहलां-पेल।
चिलचट्टै स्यूं छूटगी, लाडांजी री गेल॥१२॥

कहो करणियों के करै, जद बाड़ खेत नै खाय।
एक रुपैयै मैं टली, 'चम्पक' कुसंग बलाय॥१३॥

चेनरूपजी री घटी, घटना घड़गी इतिहास।
इं अनित्य संसार स्यूं, 'चम्पक' बण्यो उदास॥१४॥

सन्तां! गरज दूध री पालै, लाडणूं रो पाणी।
हर मोसम मैं साताकारी, हेल्यां बड़ी सुहाणी॥
इर्या समिति देख'र चालो, चेतावै अै कांटा।
आस-पास रा गांव बसावै, लाडणूं रा भाटा॥१५॥

सीधी पट्यां सांतरी, और दूध सो पाणी।
सन्तां! म्हारो लाडणूं, लन्दन री सहनाणी॥१६॥

धोरा तपै-ठरै, कट ज्यावै-ओला-बोझा झाड्यां।
बारह ही पून्यूं सुखदाई, (अै) लाडणूं री बाड्यां॥१७॥

पूनू- सागर - समेर - जस्सू - रणजीतो - हनुमान।
पेहर्‍या ओढ्या देव कुंवर-सा, अै टाबर पुनवान॥
बैंगाणी परिवार अनोखो, देखो! मन रो कोड।
दगग-दगग रस्तो बेहवै है, जाणै हरिसन-रोड॥१८॥

जद राम चरित्र मंडासी, गणिवर ढ़ालां फरमासी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चम्पो भी कंठ मिलासी, मधरी तान-तान-तान।
सोहन ! मुनि ! मत करो मसखरी, संत सुजान जान-जान ।।१६।।

तार नहीं, टेम नहिं, नहीं दियै मैं तेल।
तो ही चाल मलकती चालै, (म्हारै) लाडणूं री रेल ।।२०।।

दरब घणां, दाता घणां, (पर) अन्तराय अगवाणी।
ढ़ंढ़ण रिषि नै राजग्रही मैं, मिल्यो न भोजन-पाणी ।।२१।।

किती कहूं कालू कृपा, कृत-मुख करुणा-धाम।
चम्पा ! तू उलझ्यो कठै ? (ओ) नहीं आपणो काम ।।२२।।

गुरु की गुरुता गजब की, वत्सलता अनपार।
एक शब्द मैं ही दियो, म्हारो जहर उतार ।।२३।।

सन्तां ! शासण मैं सदा, सेवा धर्म अतुल्य।
श्री कालू करुणा करी, आंक्यो सेवा-मुल्य ।।२४।।

सुमिरन शक्ति अचिन्त्य है, परख्यो धर अनुराग।
निकल्यो निबियै ईड़वै, (जद) पैरां पर स्यूं नाग ।।२५।।

सन्तां ! कठिन-कठिन सेवा को, अवसर जद-कद आवै।
सब स्यूं आगै रह सेवार्थी, 'चंपक' भाग्य सरावै ।।२६।।

गीली गार दिवार थे, चढ़ग्या लड़दा च्यार।
ढ़हणै रा 'चंपक' ढ़चक, अै साहमा आसार ।।२७।।

छग्गू-बा ! आ के ल्याया, पाणी लारै लहताण।
रह्या तिसाया, चढ़्यो तावड़ो, वाहरे ! वाह ! 'धमताण' ।।२८।।

पुस्त पुराणा री पकी, मुचै न मिनख मकान।
अस्थिर 'चंपक' आज रा, नुआं मकान-जुवान ।।२६।।

'चंपक' चेहकै को चकर, सह नहिं सकै हरेक।
टहण्यां तो नीचै टिकी, ऊपर जड़्या उवेख ।।३०।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केशा मार, खेंचै कुशा, ओ बे-अकल अजाण।
करमां नै रोसी, कुशी! प्रोथी तजसी प्राण ॥३१॥

बड़ो कुमाणस सागरियो, गोरांजी! थारो भाई।
बाई! इंनै समझाओ तो, मनै हुवै सुखदाई॥
देखो फोड़ी नुई पातरी, थाड़ो-सो चिमठाओ।
भलै आदमी मैं कद आसी, अक्कल मनै बताओ ॥३२॥

मांडीखेड़ा! तूं बडो, बहमी भी बे-ढ़ंग।
(पण) दिखा दियो परतापजी, रजपूती रो रंग ॥३३॥

हाथी के हांक्यां करै, ऊंठां ज्यूं टिचकार।
(आ)जाणै एक गिवार भी(थे)कियां चलाओ सरकार॥३४॥

छांनै सिरहाणै छिपा, चिट कद स्यूं क्यूं मेली।
तुलसी! 'चंपक' चिमठियो, बणी अबूझ पहेली ॥३५॥

विनय मान-सम्मान में, मै स्नेहार्द अखूट।
के ठा? भाई बैठणो क नहीं, कह चल्यो ऊठ ॥३६॥

बुरा न मानें, पूछ रहा हूं, झिझक है कि, कुछ उलझन?
कवि बैठे कमरे के भीतर, (और) बाहर कवि-सम्मेलन ॥३७।

म्हारै कहणै स्यूं हुवै, कद विनीत-अविनीत।
(इं) मजलिस नै पूछो जरा, तुम कितनेक विनीत ॥३८॥

कृपा गुरांरी है जठै, बठै मधुर मधु-मास।
संघ गुणी, चंपक रिणी, कृपा-कृपा सहवास ॥३९।

अकलदार पेहली बता! आज्ञा है कि आहार?
खाऊं या सेवा करूं? सागर! सोच विचार ॥४०॥

अणहोणी होसी नहीं, होसी जो होणी।
मन मानी तांणो मती, गुरु-दृष्टि जोणी॥
धर्म-विहीन-समाज के? ठप समाज बिन-धर्म।
स्वर-व्यंजन-सी एकता, चंपक समझ्यो मर्म ॥४१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बा मटकी पटकी बठै, अटकी अठै अजेस।
'चंपक' चटकी पण दकी, भटकी मती मुनेस ॥४२॥

आछो सोच्यो आपपण, म्हांरै जची न हाल।
('अै) तीनूं टाबर एक-सा, 'चंपक' लागै चाल॥
कमी न राखी आपतो, कृपा करायी धाप।
'चंपक' आगैं आगलां रा अपणा पुन-पाप ॥४३॥

करै संघ-हित करणियां, प्राणार्पण प्रख्यात।
गम खालेणै मैं जीवण ! गजब जिसी के बात ॥४४॥

कविता कुदरत की कला, सागर ! मिल्यो सुयोग।
(पण) आइन्दा अपशब्द रो, फेर न करी प्रयोग ॥४५॥

आगेसर करणी नहीं, सागर ! इसी मजाक।
धसकै स्यूं फाटै हियो, हुवै अनर्थ हकनाक ॥४६॥

घृणा न करणी घाव स्यूं, रोगी स्यूं अनुराग।
सागर ! सेवा सन्त री, मिलै पुरबलै भाग ॥४७॥

सागर ! मत कर सूमड़ा, कर काठो कंजूस।
दियां नहीं खूटै दरब, मत बण मक्खीचूस ॥४८॥

सागर ! सोह क्यूं सुलभ है दुर्लभ सेवा-धर्म।
ओ तप 'चंपक' गहनतम, मानवता रो मर्म ॥४९॥

छग्गू-बा गमेती बाबो, आवै आडो-आडो।
'चंपक' वरस चोरासीआया, तोही गुड़कावै गाडो ॥५०॥

माली सींच्यो, तरु फल्यो, चढ्यो भगत-जन हाथ।
चंपै री आ पुज्यता, सदा सफेदी साथ ॥५१॥

सिवा आपरै कुण सकै, म्हांरा रस्ता रोक।
आज्ञा लिछमण-रेख आ, 'चंपक' चोड़ै चौक ॥५२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अटकल-पटकल कुछ नहीं, कल बाबै रो नांव।
जस जद मिलणै रो हुवै, (तो) 'चंपक' लागै दांव ॥५३॥

मांगी मांग करी घणी, पर नहिं मानी एक।
पड्यो गुरां नै पिघलणो, रही भगत री टेक ॥
भगत बड़ो संसार मैं, सब ली इक मति ठान।
भगतां रै लारै झुकै, देखो यूं भगवान ॥
भगती मैं सगती विविध-जुगती करै विनीत।
रीत प्रीत री देखल्यो, हुई भगत री जीत ॥५४।

गफलत स्यूं गोता पड़ै, खेद खिन्न हो ज्याय।
'चंपक' जो पथ चूकज्या(बो)पग-पग पर पिछताय ॥५५॥

मांगीलाल मतंग ज्यूं चालै, फूंसरास रा पूत।
बिन मतलब ही खांधा तोड़ै, आ कुणसी आकूत ॥५६॥

गंगापुर स्यूं गंगापुर तक, दिवस इग्यारह लाग्या।
पुर'र पहूनो मिला, भाग अट्ठारह गांवां रा जाग्या ॥
अमावसी पधरावणो, एकम हुवै विहार।
दो संवत गंगापुर फरस्या, चंपक जय-जयकार ॥५७॥

ओ कांटो कद स्यूं उग्यो, अरे! फूटरा फूल।
'चंपक' होकर चतुर क्यूं, गई विधाता भूल ॥५८॥

कांटो पग रो काढ़ दै, चंपक चतुर चकोर।
(पर) मन रो कांटो मांयलो, कहो कुण काढ़ै कोर ॥५९॥

एक जग्यां दरडो पड़ै (जद) ढ़िगलो दूजी ठोर।
चंपक धन चोरी बिना, भेलो हुवै न भोर ॥६०॥

ठीक नहीं है ठाकरां! बेजां ओ विसवास।
अंत जिनावर जात रो, 'चंपक' के इकलास ॥
चंपक के इकलास, क आछो नहिं आसंगो।
बिना अरथ कोइ बगत, अचानक बधै अडंगो ॥
खतरनाक खुंखार नै, रखणो घणो नजदीक।
नीपीतां री प्रीत आ, नहीं ठाकरां! ठीक ॥६१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लाग्यो 'चंपक' लोभ में, कुक्कर बिना बिचार।
कई दिनां तक खटकसी, ओ कंगण केदार ॥६२॥

अरे! बाप रो मोह ओ, आछो नहिं है अन्त।
'चंपक' फोड़ा पड़ेला, सुणलै सन्त वसन्त ॥
मालव री काची रही, ठेट जेट की जेट।
गा, गलावडो ले गयी, खेलो मिटियामेट ॥६३॥

छोटी-सी गलती बणै, 'चम्पक' भारी भूल।
सारहीण सिगरेट में, मानो अनरथ मूल ॥६४॥

गई अकल गावन्तरै, सागरिया! कीं सोच।
नाभी जड़ नर-देह री, कहदे निस्संकोच ॥६५॥

कीड़्यांभी कोनी करै, निःकरमा स्यूं नेह।
पकड़ टांगड़ी फैंक दै, परली कानी पेह ॥६६॥

मतलब स्यूं 'चंपक' मिल ज्याणो, बता बड़ी के बात?
एक साथ निभावै बींरो, सदा निभाणो साथ ॥६७॥

संयम सुध-बुध बिसर कर, भाजड़ भाजी जाय।
'चंपक' चेतो बाप रै, (जद) फल प्रमाद रा पाय ॥६८॥

जो देणै जोगो हुवै, उणनै ही बतलावै।
'चंपक' मांगण नै भलां! कुण किणरै घर जावै ॥६९॥

कालै स्यूं क्यांनै करै? मूरख! माथा कूट।
कुओ कबूतर नै दिसै, झूठैं नै सो झूठ ॥७०॥

'चंपक' काम बढ़ैला चनणूं! जग मैं जता न जात।
लवै अबै क्यूं लागगी, खरची थारै हाथ ॥ ७१॥

भाई भाई रै घरै, आवै मोटै भाग।
'चंपक' भगती भाव स्यूं, बधै धर्म अनुराग ॥७२॥

चंपक जैन समाज रो, गूंजै गौरव गान।
पड्यो सामनै प्रेम रो, फल चोड़ै चौगान ॥७३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ताकत राखी काल तक, थांभण नभ भुज-थंभ।
पड़ूं-पड़ूं चंपक पड़्यो, (ओ) दुखे देह रो दंभ ।।७४।।

पख रो 'चंपक' पादरो, उफणै इयां उफाण।
(थां) मोटोड़ां रै झोड़ मैं, (आं)नान्हां रो नुकसाण ।।७५।।

तपी तपस्या तीव्रतम, महामना महावीर।
तपग्यो 'चंपक' तावड़ो, ओ मन बण्यो अधीर ।।७६।।

पोथी सागर! के पढूं, समझ लियो मैं सार।
प्रेम भाव रा पाधरा, 'चंपक' अक्खर च्यार ।।७७।।

'चंपक' चवदस च्यानणी, याद रहेला रोज।
सालासर री साख स्यूं, जा सागर! कर मोज ।।७८।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संस्मरण

[संस्मरण पदावली में संदर्भित संस्मरणों
का अनुक्रम से प्रस्तुतीकरण]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१

बड़ा वह, जो खिलाकर खाये

उदारता सहज नहीं उभरती, जब तक आत्म-सम्मान न जगे। आधिपत्य की सुरक्षा का बोध ही दूसरों के दुःख में सहयोगी बनाता है। माता-पिता का संस्कार और व्यवहार, उदार बनने में शत-प्रतिशत काम करता है। आत्म-प्रतिष्ठा और स्वाभिमान जगे, इसलिए बच्चे के हर उचित कार्य की प्रशंसा आवश्यक है—ये शब्द थे स्व० भाईजी महाराज के।

बचपन से ही चम्पूभाई दयालु थे। उन्हें मां बार-बार समझाया करती, बेटा! अच्छे लड़के हर चीज को मिल-बांट कर खाया करते हैं। अपने से कमजोर को कभी सताया नहीं करते। यही कारण था स्वर्गीय भाईजी महाराज सदा कमजोरों की सहायता करते। वे जो चीज खुद खाते, बांट-बांटकर खाना पसंद करते।

अपने अनुभव सुनाते हुए उन्होंने बताया—एक बार मैं आम खा रहा था। पास खड़ा मुसलमानी-मोलारी का लड़का टुगर-टुगर देखता रहा। उसका मन भी आम खाने को ललचा रहा था। वह अपनी मां के पास जा, रोने लगा। मां बरतन मल रही थी। उस गरीब मां के पास आम कहां था? उसने लड़के को डांटा। जब वह नहीं माना तो उसने एक थप्पड़ जड़ दिया।

मुझसे देखा नहीं गया। मैं घर में जा, छींके पर से एक आम उतार लाया। उसको दिया। अब वह खुश था। उन दिनों हमारे मरुस्थल-प्रदेश में आम थे कहां? इने-गिने लोगों तक आम पहुंच पाते थे। कोई-कोई रईश ही आम का उपयोग करता था।

मां के पास मेरी शिकायत पहुंची। मुझे बुलाकर पूछा गया। मां ने आंख दिखायी। मैंने बाल-सुलभ सरलता से कहा—मां! तुमने ही तो कहा था—हर चीज बांट-बांटकर खानी चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मां हंस पड़ी। मेरी पीठ थपथपाते हुए मां ने कहा—बहुत अच्छा किया बेटा ! खिलाकर खाने वाला ही बड़ा होता है।

भाईजी महाराज ने एक पद्य कहकर उस स्मृति को ताजा किया—

'आपसरी में बांट कर, खाणो सदा खुवा'र।
हाल काम आवै सन्ता ! (बै) माजी रा संस्कार।।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२

हल्दी-दूध

क्या कभी स्वार्थ का त्याग दिये बिना परार्थ सधता है? उसकी पीड़ा अपनी पीड़ा है, यह आत्म-भाव ही तो संधीयता है। त्याग पराग है। औरों का सहयोग कर जताओ मत। प्रशंसा की भूख पुण्य-निर्जरा का नाश कर देती है। हम-दर्द बनते सिर-दर्द हो तो हो। काम करने के बाद तख्ती को धो डालो। कुछ करके गिनाने वाला अपने आपको गिराने वाला होता है।

भाईजी महाराज ने बताया—बचपन में मैं एक बार दुलेछी के दासे पर चलते-चलते गली में गिर गया। मां ने मुझे हल्दी डालकर गरम दूध पिलाया। मैं ठीक हो गया। कुछ दिनों के बाद मेरे साथ एक लड़के की कुश्ती हुई। मैंने उसे धर पटका। वह चित् हो गया। उसके पैर में चोट आई। उससे उठा नहीं गया। मैं दौड़ा। घर से एक गिलास गरम दूध और हल्दी लाया। उसे पिला दिया।

मां व्याख्यान सुनकर आयी। देखा, दूध कम है—क्या बात है? पूछताछ की। मैं बोला—मैं ले गया। मां ने कहा—क्यों? मैंने बताया—लड़का गिर गया था, उसके चोट आई थी। दूध-हल्दी पीने से वह ठीक हो जाएगा। उसके घर दूध-हल्दी कहां है मां?

मां ने कहा—पर तुम बिना पूछे कैसे ले गये? दूध कम होने का बहम कितनों पर जाता?

मैं गम्भीर हो गया। गलती का अहसास हुआ। मुझे अनबोल देख मां ने कहा—कल तुम्हें दूध नहीं मिलेगा।

बात खतम हुई। दूसरे दिन मनुहारें करने पर भी मैंने दूध नहीं पिया। दादाजी को पता चला। उन्होंने मुझसे कारण पूछा। मैंने आपबीती बतायी। शाबासी भी मिली और हिदायत भी मिली। दादाजी ने अपने कटोरे में से मुझे दूध पिलाया और कहा—'काम पूछकर करो, कर लिया हो तो बाद में कह दो।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रारंभ से ही मुझे पराये दुःख में पड़ने की आदत थी और आज भी है। पर मर्यादा-विधि का उल्लंघन होते ही याद आ जाता है—

'पड़ूं परायी भीड़ मैं, जदकद हुवै प्रमाद।
'चम्पक' हलदी-दूधरी, (बा) घटना आवै याद॥'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३

मुझ में कितना आग्रह था

अति आग्रह मनो-क्लेश का कारण है। जब अहं फुफकारता है, आदमी कर्त्तव्या-कर्त्तव्य भूल जाता है। व्यक्ति में आकांक्षाभीप्सित जिद्द होता है। मनोवांछित न हो तब तक चैन नहीं पड़ता। यह है, तो सही, पर आग्रह के पीछे सत्य का बल चाहिए। सत्य-बल का प्रयोग किसी को अनुचित दबाने, विवश करने के लिए नहीं, पुनर्चिन्तन के लिए हो। अनुशासन सत्याग्रह भी खतरनाक है। अपने अधिकारों की मांग व्यक्ति की जन्म-सिद्ध स्वतंत्रता है। पर उसमें विनय-विवेक और औचित्य का ख्याल अवश्य होना चाहिए।

श्री भाईजी महाराज फरमाया करते—बचपन में मुझे कोई ओलंभा नहीं दे सकता था। घर या बाहर कोई कुछ कह देता तो दादाजी के पास शिकायत जाती और उसे ऐसी डांट पड़ती, वह भी याद रखता।

मैं भी कम नहीं था। सब कहते, दादाजी ने इसे बिगाड़ दिया है। इतना सिर चढ़ा बच्चा, क्या काम का? पर मेरी तो वहां सब कुछ फबती थी। छह और भाइयों में मैंने जितनी मौज की/जिद्द चलाई/मनमानी की, क्या कोई करेगा?

एक दिन मैं भोजन करने बैठा। माताजी ने मुझे थोड़ा-सा कड़ा डांटा। मैं उस दिन जिद्द पर था 'छींके पैदा आम दे' (छींके पर रखे आम दो)।

होता यों, बाजार से जब भी सब्जी-फल आते, छांटकर कुछ ऊपर धर देती। मैं चटोकड़ा था, दादाजी का मुंहलगा लाडला। ऐसी-वैसी चीज, जो सबके लिए हो, मैं क्यों खाऊं? छांटकर रखी गयी, अच्छी बढ़िया चीज खाऊंगा। मां प्रायः तो मुझे ऊपर रखी चीजें दे देती। पर उस दिन सभी बच्चे घर पर थे। मेरी जिद्द पूरा करना मां के लिए भी भारी था। मैं जब किसी तरह माना ही नहीं, तो माताजी ने तंग आकर थप्पड़ मार दिया। बस, फिर क्या था, मेरा मूड बिगड़ गया। मैं खाना छोड़, रोता हुआ बाहर चला गया। दादाजी दुलेछी (बैठक) में बैठे थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उन्होंने मुझे बुलाया/मनाया/फुसलाया/समझाया/ अपने पास बिठाकर खाना खिलाया।

मुझे आज भी याद है, दादाजी ने उस दिन माताजी को कितना कड़ा उलाहना दिया था—शायद जरूरत से ज्यादा। कहते-कहते उन्होंने यहां तक कह दिया—'खबरदार! मेरे चम्पू को आइन्दा कुछ कहने की जरूरत नहीं है। यह जो करे करने दो।'

माताजी जैसी विनीत महिला भी बिरली ही होगी। उन्हें अनुशासन का इतना ख्याल था, उस दिन के बाद मुझे कभी कुछ कहा हो, याद नहीं पड़ता। बच्चा समझ-अनसमझ में कौन-सा तूफान नहीं करता? पर मांजी मेरी सभी हरकतें चाहे-अनचाहे स्मित हास्य में क्षम्य कर देती थीं।

मैं आज सोचता हूं, मुझमें कितना आग्रह था। कुछ-कुछ अब भी है। बहुत ढला हूं, पर फिर भी—

कह्यो न सदतो, रेंवतो (म्हारो) तोरो चढ्यो अकास।
पड़ी प्रकृति जावै कियां? सन्तां! सोहरै सांस॥'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४

मुझे भी उस दिन एक अपूर्व अनुभव हुआ

जन्म और मृत्यु के इन झूलते दो तारों के बीच लटकती जिन्दगी भी एक बड़ा आश्चर्य है। आदमी जब तक जीता है, कितनों से अपनत्व जोड़ता है। आगे-पीछे की सोचता है। किन-किन तमन्नाओं के संग्रह करता है। पर जब जाता है खाली हाथ/अनबोल/असहाय। सब कुछ यहीं धरा रहता है। अपने कहे जाने वाले, दो-दस दिन रो लेते हैं। शेष रहती हैं व्यक्ति की स्मृतियां। वे भी कितने दिन? समय बीतता है, स्मृतियां अनन्त में विलीन हो जाती हैं। सच पूछो तो जाने वाले को कोई नहीं रोता। रोते हैं हम अपने सुख को/स्वार्थ को।

बचपन कितना भोला होता है। वह यह तो नहीं जानता, क्या हुआ? पर जब मृतक की चिता जलती है, उस लपट में प्रकाश के भीतर भी कुछ दिखता है। मेरे अपने स्नेही/प्यारे को क्यों जला दिया? वह अब कहां गया? क्या सभी यों ही जाएंगे?

श्री भाईजी महाराज सुनाया करते थे—मुझे भी उस दिन एक अव्यक्त अनुभव मिला। दादा राजरूपजी का देहान्त वि० सं० १९७३ फाल्गुन कृष्णा चतुर्दशी को हुआ। तब तक मुझे यह पता ही नहीं था, मृत्यु क्या होती है। हम दादा-पोतों के कोई जन्म-जात संस्कार ही ऐसे थे, मेरे बिना उन्हें और उनके बिना मुझे चैन नहीं पड़ता। मेरा खाना-पीना/नहाना-धोना/सोना-उठना सब कुछ दादाजी के साथ होता। मेरी हर फरमाइश वे पूरी करते। करते भी खूब चाव-उच्छाव से।

दादाजी के तकलीफ थी। मैं भी पास बैठा था। सांस निकला। एक बार सब रोये। मैं भी रोया। और-और रोये थे कुछ दूसरे कारण से, मैं रोया था दादाजी की तकलीफ में सहभागी बनने।

कुछ देर के बाद सब शान्त, मैं भी शांत। शायद इसलिए कि कपड़ा उठा दिया गया है, दादाजी को नींद आयी है। लम्बी नींद आ गयी है, यह मुझे क्या पता?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थोड़ी देर बाद एक खंभे से उन्हें बांध दिया गया। मैं रोया, दादाजी को खोलने गया। क्या कहूं उस भोलेपन की बात ?

बैकुंठी तैयार हुई। पूछने पर बताया गया—दादाजी को इसमें बिठाएंगे। खुशी हुई। दादाजी को नये कपड़े पहनाये। मैं भी नये कपड़े पहनने को अड़ा। बदले में एक चद्दर मेरे सिर पर लपेट दी गयी, 'पोतिया' कहा गया। मैं पोता था, पोतिया बांध लिया।

दादाजी को बैकुंठी में बिठाया गया। मैं अब इसलिए रोया—मैं भी दादाजी के साथ बैकुंठी में बैठूंगा। मुझे समझाया गया। पास ले जाकर दिखाया गया। इसमें बैठने को और जगह नहीं है, अपन आगे-आगे दंडोत करते चलेंगे, दादाजी राजी होंगे, चीजें दिलाएंगे।

'सोचूं आज हंसी आवै, वो भी हो कुछ टाबरपण।
रोयो, दादाजी रै सागै, बैकुंठी में बैठण॥'

अंततः अन्त्येष्टि यात्रा-जुलूस सझा। आगे-आगे बाजे बज रहे थे। हम छोटे-बड़े बहुत सारे लोग, बैकुंठी के सामने साष्टांग दंडवत करते जोगीदड़े (श्मशान) तक पहुंचे। मन में एक खुशी थी, दादाजी की बरनोली निकल रही है। लोगों के कंधों पर दादाजी चढ़े हुए हैं। झालर बज रही है। लोग पीछे—'अरिहंत नाम सत है—सत बोल्यां गत है', बोल रहे हैं। पैसे उछाले जा रहे हैं।

हम श्मशान घाट में रुके। लकड़ियां जंचायी गयीं। उस पर बैकुंठी धरी और ज्योंही आग लगायी कि मेरे होश-हवाश उड़ गये। मैं जोर-जोर से चिल्लाया—अरे! मेरे दादाजी को मत जलाओ रे! पर मेरा वहां क्या बस चलता! मैं रो-रोकर थक गया।

मूथोसा (सदासुखजी वैद) ने मेरे सिर पर हाथ फेरकर कहा—'चम्पू! लाड़ी! दादोजी चलग्या। ई मरेड़ै शरीर री तो आही गति है' सुनकर मेरे मन में एक क्षणिक, अव्यक्त/अज्ञात/अपूर्व अनुभव हुआ।

हपड़-हपड़ कर चिता जली जद, पड्यो एक पलको-सो।
'चम्पक' चमक्यो चित्त, चेतना को अनुभव हलको-सो॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५

ललाट पर निशान

शारीरिक और मानसिक विकास के लिए खेल भी आवश्यक होते हैं। खेल-खेल में बच्चों के व्यायाम के साथ-साथ सहज प्राणायाम भी सधता है। दीर्घश्वास का अभ्यास और सम स्वांस-प्रयोग खेलों में अनायास ही हो जाता है। बच्चा गिरता है/उठता है/दौडता है/श्वास रोक कर खड़ा रहता है/प्रेक्षा करता है। खेल का खेल, योग का योग। हमारे युग में प्रमुख स्वास्थ्यप्रद खेल थे—कबड्डी, लुकमींचणी, मालदड़ी, गुल्ली-दंडा, लूंणा-घाटी, घोड़ीसवार, सिलियोभाटो, चोर-चोर, दड़बड़ी, डोटा-दड़ी और बोल मेरी मच्छी कित्ता पानी।

भाईजी महाराज फरमाया करते—हमारा मोहल्ला विशेष अनुशासित था। हम सब एक थे। हमारा एका गांव भर में नामी था। हमारी दूसरी पट्टी के लड़के तगड़े और लड़ाकू थे। बीच के तीन साल तक मैं अपने संगठन (बचाड़ी-पालटी) का प्रमुख रहा। हमारे बीच होने वाले खेल-विवाद को प्रमुख सुलटाया करता।

हम लोग रात को एक मोहल्ले से दूसरे मोहल्ले को चीरते हुए निकलते और बोलते—'बा० ची०-बा० ची०' हम तुम्हारे बास को चीर कर निकल रहे हैं, ताकत हो तो रोक लो। न रोकने पर बास-संगठन की हार मानी जाती। हमारी दूसरी पट्टी को चीरकर जाने की किसी की हिम्मत नहीं थी। दूसरी-दूसरी पट्टियों को चीरकर हम आ जाते और नुक्कड़ पर खड़े रहकर नारे लगाते—'हिपि-हिपि हुर्रे' 'हिपि-हिपि हुर्रे।'

मुहल्ला चीरते समय कभी-कभी भिड़ंत हो जाती। पहले हाथा-पाई और फिर तकरार बढ़ जाने पर पत्थर भी चल पड़ते। चोटें भी लगतीं, पर उन दिनों गिनता कौन था सामान्य चोट को। पत्थर लगता, खून निकल आता, और हम गली की मिट्टी उठाकर, उसे लगा देते। बारीक-बारीक मिट्टी घाव भर देती। ऐसी ही एक भिड़न्त में मेरे सिर पर पत्थर लगा। उसका निशान आज भी मेरे ललाट पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है।

हमारे साथी लड़के को कोई दूसरे मोहल्ले वाला पीट देता तो फिर उसका बदला भी पूरा मजा चखाकर लेते। हम अपने संगठन के लिए पूरे ईमानदार और वफादार थे।

'म्हे लड़-पड़ता शान मैं, पत्थर फेंक अजाण।
अखी प्रमाण लिलाड मैं (औ) 'चम्पक' पड्यो निशाण ।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६

मेरी शरारत, लाडांजी की मुसीबत

बच्चे शरारती तो होते ही हैं। वह उमर भी वैसी ही हुआ करती है। फिर लाडले बच्चे का तो कहना ही क्या? श्री भाईजी महाराज, बचपन में सबके मुंहलगे थे। अतः शैतान होना सहज था। दादा राजरूपजी के होते उन्हें कोई होंठ का फटकारा भी नहीं दे सकता था। दादाजी के देहान्त के बाद भी वह पुराना रीति-रिवाज वैसा ही रहा। तूफानी आदतें उमर के साथ-साथ बढ़े जा रही थीं। एक बार अपनी शरारतों का विवरण करते हुए श्री भाईजी महाराज ने स्वयं फरमाया।

बहन लाडकुंवर बाई चुहिया से बहुत डरती थीं। कोई चूहा रसोई घर में दिख जाता तो वह ऐसे चिल्लाकर भागती मानो कोई काला सांप निकल आया हो। उनकी चिल्लाहट सुनकर घर के सब लोग इकट्ठे हो जाते। मुझे अनायास ही एक कौतुक हाथ लग गया। मैं झूठ-मूठ ही कह दिया करता—

'बाई! बाई! उंदरी, उंदरी' और बाइसा घुघाकर गली में जा बोलती। चुहिया हमारे लिए तमाशा बन गया।

मैं कई बार औरे (कोठे) में से चुहिया की पूंछ पकड़कर ले आता और फिर देखो नाटक। तमाशा तो हमारे होता, लाडांजी को तो जी की बन जाती। वे ही जानतीं जो उनमें बीता करती। वे आगे-आगे दौड़तीं, और मैं पूंछ पकड़ी चुहिया लिये, पीछे हो जाता। खूब छकाता। अंत वे मां की शरण में जा पहुंचतीं और जब मां जी की दाकल—डांट पड़ती तब मैं मानता।

'पकड़ पूंछडी उंदरड़ी, मैं ल्यातो मन-मोद।
डर लाडांजी भाजता, बड़ता मां की गोद॥'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७

एक चनपट में चोरी छूटी

बालक सहज-स्वभावी होता है। उसमें अच्छे-बुरे संस्कार अड़ोस-पड़ोस से आते हैं। बच्चे को भले-बुरे का परिणामी-ज्ञान नहीं होता। वह दूसरे के कहे-कहे कर डालता है। सोचने की अपनी शक्ति नहीं होती। परिणाम उसके समझ से बाहर होती है। सिखाये-सिखाये वह बुरी आदत में पड़ जाता है और वह ना-समझ, बुरे जीवन का रास्ता पकड़ लेता है।

यों तो हर बच्चा जानता है, अच्छा क्या होता है, बुरा क्या होता है ? तभी तो वह बुरा काम छुपकर करता है। छुपकर करने का अर्थ है बुरा काम। पाप और क्या होता है ? जो चोरी-छिपे किया जाए वही तो है पाप।

किसी की सिखावट, फुसलाहट, प्रभाव या प्रलोभन से बच्चा घर का सामान चुराने लगता है। आंख बचाकर वह चोरी करता भी है और अपने आपको होशियार भी मानता है। उसका कोमल मानस अनभिज्ञ होता है। यदि समय रहते मां-बांप संभाल सकें तो उसकी आदत बदल भी सकती है, अन्यथा एक बुराई हजार बुराई पैदा करती है। लापरवाह अभिभावक इसके जुम्मेदार होते हैं। बच्चों का जीवन बनाना भी एक कला है।

तुच्छ स्वार्थ-पोषण के लिए अपने कहलाने वाले लोग बच्चों को कैसे बिगाड़ते हैं। अपना एक संस्मरण सुनाते हुए श्री भाईजी महाराज फरमाया करते थे—

उन दिनों मेरे में एक नयी आदत शुरू हो रही थी। मेरे एक निकटतम सम्बन्धी मुझे प्रोत्साहित कर रहे थे। हमारे घर में माताजी की ओर से सभी खाद्य पदार्थ खुले रहा करते थे। हम बच्चे जब भी जी चाहता, उनका स्वतंत्र उपयोग करते, किसी को कोई रोक-टोक नहीं थी।

हमारी शाल के टोडियाले में एक भांड में सुपारियां भरी रहा करतीं। अब वह खाली होने लगी। मैं कभी मुट्ठी भर, कभी कम-बेसी सुपारियां चुराने लगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चुपके से इधर-उधर देख, सुपारी ले जाता और उन्हें दे आता, जिन्होंने मुझे यह सब करना सिखाया था। वे शाबासी देते और मैं फूल जाता।

कई दिनों तक माताजी सोचती रहीं, भांड खाली हो रहा है, इतनी सुपारी तो खर्च नहीं होती, क्या बात है? पर बहम भी करे तो किस पर?

'चोर की दाढ़ी में तिनका'—एक दिन मैं पकड़ा गया। सुपारियां लेकर दौड़ रहा था। माताजी रसोई घर से बाहर निकलीं। मैं घबराया। एक सुपारी का टुकड़ा मेरी मुट्ठी में से नीचे गिरा। बस, फिर क्या था, रंगे हाथों चोर पकड़ा गया। एक चनपट पड़ी। हाथ पकड़कर मां मुझे ओरे में ले गयीं। मैंने सच-सच बता दिया।

सब कुछ साफ-साफ पता लगने के बाद भी मांजी की गंभीरता ने उन्हें (जिनका नाम चोड़े हुआ था) दरसाया तक नहीं। हां, उस दिन के बाद मांजी हम बच्चों पर आंख अवश्य रखने लगीं, बच्चे कहां जाते हैं, कहां बैठते हैं। बस एक चनपट के मूल्य में मेरी चोरी की आदत छूट गयी।

"किरचा रोज चुरावतो, लुक-छिप भर-भर मुट्ठी।
ल्हापां मैं चनपट पड़ी 'चम्पक' चोरी छूटी।।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८

वैराग्य की पहली किरण

आज जहां उच्छृंखलता की एक उद्दंड लहर चारों ओर दौड़ रही है, वहां उस युग में बड़ों के प्रति आदर-सम्मान और सहज श्रद्धाभाव था। उन दिनों गृहपति-अभिभावक का ही बहुमान / संकोच-शर्म पर्याप्त नहीं था, अड़ोस-पड़ोस के बुजुर्गों का भी रोब-रवाब और लाज-लिहाज था।

अपने लड़के और पड़ोसी के लड़के में उस समय भेद जैसा नहीं था। उस अपनत्व भरे माहौल में एक आम धारणा थी — बच्चा-बच्चा है। जितने हम अपने बच्चे के लिए जिम्मेदार हैं, उससे कहीं अधिक पड़ोसी के बच्चे की भी हम पर जिम्मेदारी है।

श्री भाईजी महाराज फरमाया करते—जब हम खेलते, चालीस-चालीस, पचास-पचास बच्चे मिलकर गली में गोधम / धूम मचाया करते। मुझे याद है सेठ मोतीलाल जी बरमेचा जब भी गली की मोड़ मुड़ते, खांसते (खांसना उनका सहज स्वभाव था)। खंखारा सुनते ही हम सबको जाने क्या हो जाता, चिड़ियों के झुंड में पत्थर की तरह हम सब भाग-भागकर अड़ोस-पड़ोस के घरों में छुप जाया करते। म्याऊं-म्याऊं हो जाते। उनका इतना डर क्यों लगता, पता नहीं, पर उनका मुहल्ले भर में सामूहिक प्रभाव था।

एक बार हम कुछ साथी चले। जेठ की मध्य दुपहरी। राणावजी के कुएं पहुंचे (वर्तमान में जो जैन विश्वभारती में है)। कुएं का कोठा (टांका) पानी से भरा था। हमने कपड़े उतारे। मैं नहाने कोठे के छज्जों पर उतरा। तैरना जानता नहीं था। किसी मित्र ने कहा—इस छज्जे से उस छज्जे तक ऊपर की कंगार (दासा) पकड़े-पकड़े पहुंचो तो जानूं। मैं बिना सोचे चल पड़ा। मेरा सीने तक शरीर पानी में था। दोनों हाथों से दीवार की कंगार पकड़े-पकड़े मैं चल रहा था। आधी दूर गया कि ऊपर से हाथ छूट गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मेरा राम पानी में डुबकियां खाने लगा। आज भी उस दिन की याद आते ही सारा शरीर सिहर उठता है। मैं मौत के मुंह में था। सांस घुटने लगी। एक बार ऊपर आया, फिर पानी में। गुटर-गुटर घुंघाट होने लगा। सारे साथी हक्के-बक्के थे। दूसरी बार फिर ऊपर आने का प्रयत्न किया, पर विफल। तीसरी बार जोर मारकर हाथ ऊपर की ओर निकाले कि किसी साथी ने हाथ थाम लिया। बस, अब क्या था, क्षण भर में पानी से बाहर। डूबते को तिनके का सहारा यों होता है। अब नहाना-धोना किसे सूझे। पर, डर था किसी को पता लग गया तो? हम सबने कपड़े पहने और घर की राह ली।

हम कुएं से उतरे ही थे कि पूनमचंद जी गोलछा आ गये। हमें काटो तो खून नहीं। उन्होंने दूर से जूता निकाला और धमकाया। 'छोरां! कुमाणसां! कठैई कालो मुंडो कराओ। कोई डूब'र मरग्यो तो? चालो घरे।' एक-दो के जूते की पड़ी भी, पर किसी की क्या मजाल, जो उनके सामने चूं भी करे। हम सबके पांव चिपक गये। भविष्य में बे-वक्त कुएं पर नहीं आने का वचन लेकर, हमें छोड़ दिया।

रास्ते में हम सबने तय किया, इस घटना का किसी को पता नहीं चले। बात हम सब पी गये।

उस दिन मैंने नया जन्म पाया। पानी से इतना डर बैठ गया जो आज तक भी नहीं निकल पा रहा है। आज भी जब उस दिन की याद करता हूं, मन भयभीत हो उठता है।

मेरे वैराग्य का मूल दिन वह था। मैंने उस रात बहुत चिन्तन किया, मुझे जीवन की नश्वरता पानी में तैरती-डूबती दिखने लगी।

मैं राणावजी रै कुवै, डूब्यो जद कोठा मै।
उगी किरण वैराग्य री, मौत दीसगी सामै॥"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९

कुआं डाकने की शर्त

उमर का भी एक अलग रंग है। बच्चे से किशोर होते ही उसकी गतिविधि मोड़ लेने लगती है। वह गुण-दोष को इतना महत्त्व नहीं देता, जितना मनचाही कर लेने को देता है। ज्यों-ज्यों वह बड़ा होता है, उसके शारीरिक विकास के साथ-साथ मानसिक और बौद्धिक विकास भी बढ़ता है। खान-पान, रहन-सहन और खेल-कूद के साथ बोलचाल की भाषा में विस्तार आता है।

अभिभावक उसे थोड़ी-सी छूट दे दें तो वह निश्चित भाव से अभिवृद्धि करता है, छूट के साथ थोड़ा-सा स्नेह प्यार भी मिलता रहे तो उसकी विकास-ग्रन्थियां और अधिक तेजी से रस-स्राव करने लगती हैं। कुंठित वातावरण ग्रंथि-विकास में अवरोध पैदा करता है, ग्रंथि-स्राव कभी-कभी रुक भी जाता है।

उस उमर में किशोर कितना दुस्साहसी हो जाता है, एक अनुभव सुनाते हुए श्री भाईजी महाराज ने बताया—

दादा राजरूपजी का हाथ बहुत उदार था। रईसी रहन-सहन, लाड-बाई का विवाह, और आले-दोले घर-खर्च से आर्थिक स्थिति डगमगा गई। दादाजी के देहान्त के बाद उनके ओसर ने कर्जदारी बढ़ा दी। पिता झूमरमल जी शरमालू थे। इज्जत के प्रश्न ने उनको चिन्ताग्रस्त बना दिया। अब क्या होगा? इसी सोच में वे बीमार हुए और वि० सं० १९७६ जेठ शुक्ला १२ को उन्होंने प्राण दे दिए। घर-खर्च की चिन्ता, बड़ा परिवार, कर्जदारी और काम-धन्धा चौपट। भाई मोहनलालजी अकेले कमाऊ।

मैं उन दिनों १२ वर्ष का हो रहा था। मुझे भी घर की चिन्ता सताने लगी। मैं वि० सं० १९७७ में दिसावर गया। 'खुशालचन्द लिछमणदास' के यहां सिराजगंज (वर्तमात बंगलादेश) में काम सीखने लगा। वह भी एक लगन थी, छह-सात महीनों में ही मैं एक दुकानदार के रूप में उभरा। प्रारम्भ से ही हिसाब-किताब

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और काम का मुझे शौक था।

लाडनूं निवासी बोरड डालमचन्दजी 'कमलपुर' रहा करते थे। वे धर्म-ध्यान और तत्त्व-चर्चा के रसिक थे। खुशदिल, सज्जन-स्वभावी, साहसी, कुशल व्यवसायी और विनोदप्रिय। वे सिराजगंज आये। मेरी ग्राहक पटाने की कला ने उन्हें आकर्षित किया। वे मुझे मांग कर कमलपुर ले गये।

डालमचन्द जी का बड़ा पुत्र बालचन्द उन दिनों कमलपुर में ही था। हम दोनों बराबरी की-सी उमर के थे। घरेलू व्यवहार में बालचन्द और चम्पालाल में कोई भेद नहीं था काम-काज पूरा कर लेने के बाद हम दोनों साथ-साथ खेलते।

हम दोनों एक दिन खेल रहे थे। लगने-पड़ने का डर था ही नहीं। कभी दरखतों पर चढ़ते, कभी दीवार फांदते। आज न जाने हमें क्यों सूझी, वहीं पिछवाड़े एक कुआं था। हमने शर्त लगायी—भागते-भागते आओ और छलांग लगाकर कुएं को डाको। पहल मैंने की। मैं छलांग मारकर कुआं डाक गया। बालचन्द कुआं डाक रहा था, पैर सही नहीं जमा। वह फिसल गया। कुएं में गिर ही रहा था कि मैंने दौड़कर थाम लिया। वह गिरते-गिरते बचा। थोड़ी-सी रगड़ आयी। दोनों के मुंह सफेद पड़ गये। हमने किसी को पता नहीं लगने दिया।

बालचन्द आजकल नयी-पुरानी धारणा में उलझा हुआ है। अच्छा समझदार, तत्त्व-ज्ञाता, बोल-थोकड़ों का माहिर और समझने,-समझाने की हटौती (अभ्यास-शक्ति) वाला होकर भी नहीं समझ रहा है। मैंने कई बार प्रयत्न भी किया है। मित्रता के नाते कड़ा भी कहा है, पर अभी उसके गले बात उतर नहीं रही है। हर बार वह कहता है—मुनिश्री ! आपने उस कुएं से तो हाथ पकड़कर उबार लिया, पर इस कुएं से बचाना मुश्किल है। क्योंकि मेरी धारणा अभी इसे कुआं मानने को भी तैयार नहीं है। और मैं उसे कहता हूं—यह भयंकर कुआं है बालू। अनन्त जन्म-मरण बढ़ाने वाला कुआं, और वह यह कहकर टाल देता है—

'बी कुएं पड़तां नै राख्यो, हाथ झाल प्रेमालू।
अबै पकड़ काढ़ौ तो जाणूं, रोज कहै औ बालू।।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०

दोस्ती का चिन्ह

बचपन बचपन ही तो होता है। उसमें गम्भीरता कहां से आयेगी ? अनुभव छुटपन से परे की बात है। बड़प्पन और शिष्टता, यों तो वंशगत संस्कारों की देन हैं, पर उनका विकास और ह्रास अभिभावकों पर निर्भर करता है। यदि अभिनियन्ता बार-बार बच्चों को सभ्यता की ओर संकेत देता रहता है, तो सहज ही बच्चों के समझ में आने लगता है कि मुझे ऐसा व्यवहार करना चाहिए जिससे मैं भी अच्छा, प्यारा लड़का बन सकता हूं। किसी भी गलती के बाद बच्चे को भूल का अहसास कराना भी एक योग्य शिक्षक की कला है।

श्री भाईजी महाराज ने एक अनुभव सुनाते हुए इस ओर इंगित किया—

कमलपुर में मैं और बालचन्द बोरड़ एक दिन पिछवाड़े बाड़े में खेल रहे थे। आज हममें राजपूती जागी थी। दोनों के हाथों में बांस की लम्बी-लम्बी खापटियां थीं। हम बहादुर योद्धा बनकर पट्टा खेलने चले थे। बांस की खापटियां हमारी बनावटी तलवारें थी। हम उछल-उछलकर एक-दूसरे पर वार कर रहे थे। सामने वाले का घातक वार बचाकर अपना कौशल दिखाते-दिखाते अचानक मेरी तलवार (खापटी) असावधानी से बालचन्द के हाथ में जा चुभी। बस, अब क्या था खून ही खून। कुएं पर जाकर हमने पानी से हाथ धोया पर खून नहीं रुका। पट्टी बांधी तो खून अधिक चमकने लगा। हम घबराये। दोषी यों तो दोनों ही थे, पर मेरी गलती बड़ी थी।

मैं डालचन्दजी के पास गया और सच्ची-सच्ची बात कह दी। वे सत्य को बहुत पसंद करते थे। उपालंभ के बदले उन्होंने मुझे थप-थपाया और कहा—कोई बात नहीं, लग गई तो लग गयी। बहादुर योद्धा क्या खून देखकर घबराते हैं। चम्पू ! पर आगे ध्यान रखना, ऐसा खेल कभी नहीं खेलना चाहिए। नहीं तो आंख में लग जाए तो ? देख ! बालू के लगी कोई चिन्ता नहीं, पर अभी तेरे लग जाती तो भाई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोहनलाल का ओलंभा मुझे आता न ?

मैं शरमाया-शरमाया, सकुंचाया-सा बोला 'खून बंद नहीं हो रहा है, अब क्या होगा ?' वे बोले, 'चलो, अभी उसे भी बंद करते हैं। वे आये। पानी टपकाया पर खून नहीं रुका। लगता है किसी रक्तवाहिनी नस पर चोट लगी है। डालचन्दजी अनुभवी व्यक्ति थे। उन्होंने रामू (नौकर)को आवाज दी। सरसों का तेल मंगाया, एक रुई का फोहा बनाकर हाथ पर बांधा। बहता हुआ लोहू थोड़ी देर में बंद हो गया। अब मेरे जी में जी आया। घाव भरते तो कई दिन लगे। आज भी डालचंद-जी का बड़प्पन मुझे अभिभूत करता है।

बालचन्द की बांह पर अभी भी वह निशान है। मेरी दीक्षा के बाद जब भी वह आता है, वह अपने हाथ का निशान दिखाया करता है और कहा करता है—यह है मित्रता की अमिट निशानी। पर मुनिश्री ! यह निशान तो शरीर के साथ मिट जाएगा। कोई ऐसा दोस्ती का निशान बनाओ जो सदा-सदा के लिए अमिट हो जाए। आप तो तर गये और मैं संसार में फंस गया। मैं उसे कहा करत—

'बालू ! हाल के बीगड्यो, कर हिम्मत अविखिन्न।
असल मित्रता को अमिट, 'चम्पक' मांडें चिन्ह ॥''

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११

सुधार का नया तरीका

लाडनूं की बात है। मामा नेमीचन्द कोठारी उन दिनों पलासबाड़ी (बंगाल) में रहा करते थे। उनकी दुकान (फर्म) का नाम सुखलाल नेमीचंद पड़ता था। वे अपनी बहन (मां वदना जी) से मिलने आये। बालक चम्पालाल से बातचीत हुई। उनका मन भर आया। वे चाहते थे, ऐसे योग्य लड़के को मैं अपने पास रखूं। उन्होंने अपना अभिप्राय बहन को जताया। मांजी ने कहा—भाई! मुणू (मोहनलाल) जाणै। मामाजी ने भानेज मोहनलाल जी को पत्र दिया। स्वीकृति आई। कोठारी-जी लाडनूं से भानेज चम्पालाल को पलासबाड़ी ले गये। पलासबाड़ी काम-धंधे के लिए अच्छा स्थान था। भाईजी महाराज का वहां खूब मन लगा। खुली छूट—खाओ-पीओ और काम के समय मन लगाकर काम करो। वहीं एक नयी आदत शुरू हुई। भाईजी महाराज फरमाया करते—

मेरा उन दिनों बाबूगिरी का नया दौर प्रारम्भ हुआ। फिट-फाट कपड़े पहनना और धुआं निकालना। मैं नया बाबू था। मुझे सभी बंगाली, 'खोखा बाबू' कहते। खोखा वहां छोटे को कहते हैं। मैं अब 'खोखा बाबू' जो बन गया था, अतः बाबूगिरी के सभी लक्षण आवश्यक थे। मैं बीड़ी पीने लगा। पर पीता था छिपे-छिपे। कभी-कभी बीड़ी पीकर धुआं फेंकता और शीशे में देखता, देखें, कैसा लगता हूं। अब मुझे बीड़ी का रस लग गया था। मामाजी का डर भी लगता था। एक दिन कोठे की खिड़की में बैठा मस्ती से बीड़ी पी रहा था। कोई आयेगा, यह बहम ही नहीं था। निश्चित धुआं फेंक रहा था। बाबूगिरी का अहं धुएं के साथ गोटे बना रहा था। मैं बस खींचकर ज्योंही धुआं फेंकने लगा कि अचानक मामाजी कोठे में आ गये। उन्हें देखते ही मैंने सुलगती बीड़ी फुर्ती से पांव तले दबा ली, पर धुआं कहां दबता? बहुत सावधानी बरती। झट से, खिड़की बंद कर अंधेरा करने की नाकाम कोशिश की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मामाजी बड़े गम्भीर थे। उन्होंने देखा, अनदेखा कर दिया। मानो उन्हें पता ही न चला हो। मुझे पानी का गिलास लाने को कहा। मैं पानी लाया। वे पानी पीकर दुकान के काम में लग गये। मैं भी दुकान में आया तो सही, पर दिल धड़क रहा था। मन के भीतर चोर जो बैठा था। हर क्षण वही सन्देह था—मामाजी क्या कहेंगे ? उनकी प्रकृति से मैं खूब वाकिफ था। जब वे कहने लगते, छींट नहीं छोड़ते। मैं मन ही मन सोच रहा था—चंपला ! आज खैरियत नहीं है। जब भी वे बोलते, मुझे वे ही स्वर फूटते नजर आते। आज क्या होगा ? हे भगवान ! आज बच जाऊं तो लाखों पाये। दिन भर कोई चर्चा नहीं चली। मेरे में विश्वास हो गया—सचमुच मामाजी को पता ही नहीं चला।

सदा की भांति सायंकाल मजलिस जुड़ी। मैं भी वहीं बैठा था। अड़ोसी-पड़ोसी सभी लोग जमा थे। बातें चल रही थीं—देश की, दिशावर की, बाजार की, समाज की। अब मैं तो बे-फिकर था। इतने में मामा नेमीचन्द जी ने मेरी ओर देख चुटकी भरते हुए कहा—'अबै बाबू पास हो गया है।' वे आगे कुछ नहीं बोले, केवल जमीन पर एक सांकेतिक लकीर खींची। दूसरे लोग तो कुछ नहीं समझे, पर मेरा चेहरा फक। काटो तो खून नहीं। मैं अवाक्, जैसा था वैसा ही रह गया। फटी-फटी आंखें। पसीना-पसीना। जाऊं तो जाऊं कहां ? शर्म से सिर झुक गया। ऊपर आकाश, नीचे धरती, बीच में अधर झूलता मेरा मन। लगा वह लकीर मुझे कुछ कह रही थी।

मैंने भीतर ही भीतर दृढ़ संकल्प किया आज से बीड़ी पिऊं तो त्याग। मैंने भी जमीन कुरेदकर एक लकीर खींची। मामाजी समझ गये। बात का रुख बदल गया। दूसरी चर्चा छिड़ी और मैं निश्चिन्त हुआ। मामाजी की वह युक्ति आज भी मैं सोचता हूं, हम सभी लोग अपना लें तो सुधार का एक नया आयाम न खुल जाए ? बस, उस दिन से सदा-सदा के लिए मेरी बीड़ी छूट गयी—

'बाबू अबे पास होग्या, मामाजी मार्‌यो तीर।
आई शरम, छोड़ दी बीड़ी, चम्पो खांच लकीर ॥'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२

तिलचटा : एक उद्‌बोधन

वि०सं० २००६ की बात है। हम दिल्ली नया बाजार वृद्धिचन्द जैन स्मृति भवन में बैठें थे। वहां एक तिलचटा निकल आया। श्री भाईजी महाराज आसण छोड़ उठ खड़े हुए। मैंने ऐसा पहले-पहल देखा। पास ही बैठे थे कोठारी सागरमलजी राखेचा (लाडनूं)। उन्हें एक पुरानी बचपन की स्मृति याद आ गई। वे बोले—क्यों भाईजी महाराज, याद है तिलचटा ?

भाईजी महाराज ने फरमाया—हां, याद है। इसी तिलचटे ने ही तो लाडांजी का चुहिया से पीछा छुड़ाया था। हमने जब जानना चाहा, यह तिलचटा फिर क्या बला है? भाईजी महाराज ने स्मृतियों के बंडल में से एक गठड़ी खोली—

वि० सं० १९८० की बात है। मैं उन दिनों कलकत्ता में था। मामाजी हमीरमलजी कोठारी अपने समय के सम्मान्य व्यक्ति थे। बारह नम्बर पोचागली में निवास और गणेश भगत कटले में दुकान (गद्दी) थी। अब वे निवास-स्थान का परिवर्तन कर क्लाइव स्ट्रीट विलायती कोठी में चले गए थे। पूजा की बिक्री सामने थी। उन्हें एक आदमी की और अपेक्षा थी, अतः उन्होंने मुझे पलासबाड़ी से कलकत्ता बुला लिया। मैं कलकत्ता पहुंचकर बहुत खुश इसलिए था—शहरी वातावरण, मौज, शौक, और मनोरंजन का वहां रंग ही न्यारा था।

वहां मैंने पहले-पहल तिलचटा देखा। देश में तिलचटा होता नहीं। मैं घबराया। उसका आकार ही ऐसा था। मैं चिल्लाकर भागा। भाई सागरमल कोठारी के हाथ एक मसाला लग गया। हम दोनों एक ही उमर के थे। मुझे छकाने का दूसरा उपाय नहीं दीखता तो सागर तिलचठा पकड़ लाता और मैं दोनों हाथ ऊपर कर हार मान लिया करता।

गणपत महाराज रसोई किया करते। मेरी आदत शुरू से ही इस माने में खराब थी। मैं रसोई में कमियां निकालता। खाना खाते समय कई नखरे करता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जब ज्यादा तंग करता तो गणपत महाराज सागर को आवाज देते और वह भला आदमी तिलचटा उठा लाता। तिलचटा देखते ही मैं मैदान छोड़ भाग खड़ा होता।

कई बार सागर मुझे सुख से खाना भी नहीं खाने देता। ज्योंही यह आवाज देता 'चम्पू भाईजी ! तिलचटो' और मेरा राम थाली फेंक दौड़ पड़ता।

भय ही तो आदमी को मारता है। कई बार मैं तिलचटे के बहम में रात को नींद में ही घुघा पड़ता। मामाजी बहुत समझाते, पर भय नहीं निकला सो आज तक नहीं निकला।

वहां मैं रह-रहकर याद करता बहन लाडांजी को। जब मैं चुहिया पकड़कर उन्हें डराता था तब उनमें क्या बीतती होगी ? जो डराता है, वह डरता है। जो मारता है, वह मरता है। चम्पा ! वह औरों के लिए भी मत कर, जो अपने को नहीं सुहाता। जब मैं कलकत्ता से देश आया, मेरी चुहिया वाली आदत छूट गयी थी। मेरी आत्मा रह-रहकर कहती—

'अपणो-सो पर-दुख हुवै, जाण्यो पहलां-पेल।
तिलचटे स्यूं छूटगी, लाडांजी की गेल ॥'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३

मैंने अक्ल सीखी एक रुपये में

फिसलन भरे शहरी वातावरण का उल्लेख करते हुए श्री भाईजी महाराज ने अपना एक निजी अनुभव सुनाया। उन्होंने कहा—'शहरों में पग-पग पर पतन की खाइयां खुदी पड़ी हैं। ऐसे लोगों की आज कोई कमी नहीं है, जो अपना कहलाकर अपनों का ही जीवन बरबाद करने में तुले हुए हैं। जब बड़ा भाई ही छोटे भाई को गलत रास्ते ले जाए, औरों से क्या आशा की जा सकती है। मैं भी एक दिन फंस गया था जंजाल में। कलकत्ते की बात है।

बिना किसी नामोल्लेख के श्री भाईजी महाराज बता रहे थे—मैं तकादा लेकर आ रहा था। मेरे अत्यन्त निकट के भाई साहब मिल गये। वे सब बातों में पास थे। सर्वगुण सम्पन्न। मैं जानता था उनकी गतिविधि। पर नया-नया था, लिहाजन मैं उनके साथ हो गया। बात-बात में उन्होंने कहा—चम्पा! चल इधर से चलें। मैं संकोचवश इनकार नहीं कर सका। आगे जाकर वे कहने लगे—'आव! आव, एक गाना सुनकर चलेंगे। यहां गायक मंडली शानदार है।' मैंने आना-कानी की, पर फंस गया था, निकल नहीं सका। यह मेरी अपनी दुर्बलता थी। साथ-साथ मैं रास्तों से अनजान था, करता भी तो क्या?

हम गायन में बैठ गए। मैं वहां न रुक सकता था, न वहां से उठ ही सकता था। मन में भय था। मामाजी क्या कहेंगे? देर जो हो रही है। वहां वे इन्तजार कर रहे होंगे। मुझे तब तक यह पता नहीं था, यह देह-व्यापार केन्द्र है।

घंटा भर के बाद जब हम उठकर चलने लगे। सवाल आया पैसों का। भाई साहब तो भूखे फकीर थे। उन्होंने मुझे आदेश की भाषा में कहा—'चम्पा! एक रुपया दे दो।'

हुकुम करते उन्हें क्या जोर आया? मैंने पूछा—'रुपया कैसा?' वे तड़ककर बोले—'कैसा? कैसा? गाने-बजाने का।' उन्होंने रोब गांठा। पर मैं देता कहां से?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रुपये तो तकादे के थे, पूरे आना-पाई सहित गिने-गिनाये। दूं तो कहां से? न दूं तो खतरा था। बिना कुछ बोले मैंने रुपया निकालकर दे दिया।

सवाल तो अब था एक रुपये का हिसाब क्या दूंगा? उन्होंने रास्ते भर मुझे तरकीबें समझायीं। मैं गद्दी (दुकान) आया। चेहरा उड़ा हुआ था। मन में रुपये घटने की चिन्ता थी। उसे तो घटना ही था। इतनी हथफेरी जानता नहीं था। नया-नया शिकारी जो था। तकादे की थैली रोकड़िये को पकड़ा दी। रुपया घटा। मैंने उसकी कमी को पूरा बताने दुबारा गिने। थैली को उलटाकर झटकाया। इधर-उधर देखने का नाटक रचा। पर रुपया थैली में तो था नहीं जो झटकाने से निकल आये। अपनी अनभिज्ञता बतायी। झूठ का आश्रय लिया, गिनती में फर्क रह गया होगा? पर भीतर से आत्मा रह-रहकर बोल रही थी—चम्पा! अब? मैं उदास-हताश, खोया-खोया-सा, मामाजी के पास आया।

मामाजी हमीरमलजी कोठारी देखते ही समझ गए, मेरी परेशानी। उन्होंने अपने पास बिठाया और पूछा। मैंने सच-सच सब कुछ बता दिया। वे बड़े विज्ञ थे। उन्होंने मुझे आश्वासन दिया, 'घबराओ मत, यह कलकत्ता है, यहां जाने ऐसे कितने ही लोग मिलेंगे। बच-बचकर चलना सीखो। सावधान रहो। कुछ भी नहीं बिगड़ा, एक रुपये में ही निपट गया। यहां तो तकादे की थैली भी छीनी जाती है और जान भी खतरे में होती है। जो हुआ, भूल जाओ। पर आगे सचेत रहना। किसी की बातों में मत आना।

मेरा मन भीतर ही भीतर कसमसा रहा था। रात को नींद नहीं आई। मैंने दृढ़ निश्चय किया, एक निर्णय लिया। फिर जब कभी भाई साहब सामने आते दिख जाते, तो मैं अपना रास्ता ही बदल लेता। मैंने एक रुपये में अक्ल यों सीखी—

कहो! करणियो के करै, जद बाड खेत नै खाय।
एक रुपैये में टली, 'चम्पक' कुसंग बलाय॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४

आत्माभिमुख

तब एक सामान्य-सी घटना भी व्यक्ति के लिए विशेष बोधक बन जाती है जब जन्मांतर के संस्कार परिपाक लेकर उभरते हैं। मन बदल जाता है। एक घटना-प्रसंग पर भाईजी महाराज के साथ भी ऐसा ही हुआ। संसार का प्रत्येक पदार्थ उन्हें हिलता-सा नजर आने लगा। इसी चिन्तन ने उन्हें आत्मदर्शी बना दिया।

कोठारी चैनरूप जी तकादे गये थे। उनके साथ बारदानेवाला जमादार था। सामने एक गुण्डा मिला। पड़ोस से निकलते हुए उसने चैनरूपजी के कन्धे पर टक्कर मारी। चैनरूपजी शरीर से मजबूत काठी वाले थे। थे भी साहसी, बहादुर। गुंडा पुनः लौटा। उसने तकादे के पैसों वाली लाल थैली छीननी चाही। झपट मारी। चैनरूप के बगल में दबी थैली जब उसके हाथ न लगी तो उसने उनके दाहिने कन्धे पर छुरा मारा। सावधान चैनरूपजी उसके वार को नाकाम कर गए। वे बाल-बाल बचे। उसने सीने पर हाथ मारा। चैनरूप ने दूसरे हाथ से उसे रोक दिया। वह भाग छूटा। भीड़ इकट्ठी हो गयी। इस हाथापायी में चैनरूपी के कोट का गिन्नी वाला बोताम (बटन) टूटकर कहीं गिर पड़ा। जमादार ने ढूंढ़ा वह भी मिल गया। घर आये। किसी से कुछ नहीं कहा। सो गए।

प्रातः मुन्ना सनावत (गुंडों का सरदार) आया। चौकीदार बहादुर सिंह से बोला—बाबू का क्या हाल है? ठीक-ठाक तो है चैनू बाबू? बहादुर सिंह ऊपर आया। सब कुछ सामान्य था। मुन्ना चला गया।

चैनरूपजी उठे, नहाए। कन्धे पर चरमराहट लगा। विशेष ध्यान नहीं दिया, कपड़े पहनने लगे। जाकेट फटी हुई थी। कोट भी फटा था। कमीज संभाला, बनियान देखा। अब गया ध्यान कन्धे पर, छुरे की नोक का जरा-सा निशान कन्धे पर था।

कोठारी हमीरमल जी को पता चला। रात की सारी घटना सुनी। दुपहरी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में मुन्ना पुनः आया। कोठारी जी के पांव छूकर कहने लगा—बाबाजी ! नमस्ते।

हमीरमलजी बोले—'मुन्ना ! मरवा देता न, तेरे रहते यह हाल ?' मुन्ने ने माफी मांगते हुए कहा—'बाबाजी ! आपका दिनमान सिकन्दर था। वरना आज हम नीमतलाघाट (कलकत्ता का श्मशान) ही मिलते। बाबाजी ! जो कुछ हुआ भूल जाइये।'

वह सायंकाल अपने साथी को लेकर आया। माफी मंगवाकर हम सभी बच्चों की पहचान करवायी। भाईजी महाराज फरमाया करते थे। उस दिन के बाद मेरा मन बदल गया। जीवन की नश्वरता का एक बोध हुआ।

मैं खोया-खोया-सा उदास-उदास रहने लगा। मेरी आत्मा किसी अचिंत्य के चिन्तन की गहराई में मन ही मन कुछ नया निर्णय कर चुकी थी।

चैनरूपजी री घटी, घटना घड़गी इतिहास।
इं अनित्य संसार स्यूं 'चम्पक' बण्यो उदास॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५

लाडनूं में कांटा-भाटा

लाडनूं का मीठा और गहरा स्वास्थ्यप्रद पानी, खुली आबो-हवा, ऊंचाई पर बसी बस्ती, आत्ममुखी दृष्टि वाले लोग, कुल मिलाकर अलभ्य विशेषताओं का धनी लाडनूं नगर अपने आपमें अनौपम्य कहा जा सकता है। श्री भाईजी महाराज को बचपन से ही अपनी मातृभूमि पर सात्विक अभिमान था। वे सदा लाडनूं की गौरव-गाथा मुक्तकंठ से गाया करते।

वि० सं० १६८२ का चातुर्मास बीदासर सम्पन्न कर श्री कालूगणीराज लाडनूं पधार रहे थे। 'खानपुर' के पास की कंकरीली धरती, नंगे पांव चलने वालों को अक्सर परेशान करती ही है। उस दिन चांदमलजी स्वामी अधिक परेशान हुए होंगे। उनका कवि हृदय उकता गया। सरदी के दिन। कंकरों पर चलना कठिन पड़ रहा था। इधर-उधर बाड़ के कांटे थे। इतने में पीछे से आए चम्पक मुनि (श्री भाईजी महाराज)। चांदमलजी स्वामी और चम्पक मुनि अभयराजजी स्वामी के साझ—मंडल में साथ-साथ रहते थे। चम्पक मुनि को देख चांदमलजी स्वामी बोले—'चम्पा! यह क्या तेरा लाडनूं है? कांटों और कांकरों से पग फूट गए—

'लाडनूं में कांटा-भाटा, सुजानगढ़ में सी,
बीदासर में दूध मिसरी, घोल-घोल पी।

चम्पक मुनि से नहीं रहा गया। उन्होंने भी लाडनूं की प्रशस्ति में एक पद्य बनाया और जब-जब संत कहते—'लाडनूं में कांटा-भाटा' तो भाईजी महाराज जवाब में कहते—संतो! यह लाडनूं है, इसकी होड कोई कर सकता है? यह हो न, औरों का काम चले! इस धरती का क्या कहना!

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संता ! गरज दूधरी पालै, लाडनूं रो पाणी,
हर मौसम मैं साताकारी, हेल्यां बड़ी सुहाणी ।।
इर्या समिति देख'र चालो, चेतावै अै कांटा,
आसपास रा गांव बसावै, लाडनूं रा भाटा ।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६

लाडनू-लंदन

१९८६ लाडनूं चातुर्मास में एक बार कविवर मुनिश्री चांदमल जी स्वामी के पैर में पुरानी बाड़ का कांटा चुभ गया। कोशिश की, पर वह नहीं निकला। उस युग के कांटा-विशेषज्ञ चौथ मुनि, सोहन मुनि (चूरू) आदि कई संतों ने खूब मेहनत की, पर कांटा भुरता (टूटता) गया, आखिर पुरानी बाड़ का जो था। सभी ने परामर्श दिया—'अब इसे छोड़ दो, फाबे (पंजे) में बेढब चुभा कांटा अड़ गया है, खोदते-खोदते पांव बींध गया है, अब यह अभी नहीं निकलेगा।

चांदमलजी स्वामी की पीड़ा देख चम्पक मुनि से नहीं रहा गया। वे बोले, एक बार मुझे दो। वे बैठे। सबने मना किया, पर देखते-देखते गहरा शूल का सांता दिया कि कांटा नोक सहित एक ही सपाके में ऊपर आ गया।

पास खड़े सोहन मुनि (चूरू) ने कहा—'वाह रे ! लाडनूं का पानी' सुनते ही वेदना-व्यथा भरा चांद मुनि का कवित्व जाग उठा, उन्होंने कहा—

कांटा भाटा कांकरा, और लोह का पात।
चम्पा ! थांरी चंदेरी री, च्यारूं बातां ख्यात ।।

भला, लाडनूं की हल्की बात चम्पक मुनि को कब सुहाती। उन्होंने भी प्रतिवादी पद्य बनाया और उत्तर दिया—

सीधी पट्यां सांतरो, और दूध सो पाणी,
सन्तां ! म्हारो लाडनूं, लन्दन री सहनाणी।

सुनते ही सारा वातावरण स्मित हास्य से मुखरित हो उठा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७

लाडनूं की बाड्यां

चांदमलजी स्वामी (जयपुर) एक अल्हड़ कवि संत थे। उनकी कविताओं की शानी तेरापंथ के इतिहास में नहीं मिलती। प्रकृति में अवश्य उफान था, पर थे बड़े सरस और विनोदी। चम्पक मुनि से वे बहुधा विनोद किया करते—चम्पा! तुम्हारे लाडनूं में क्या पड़ा है?

उस दिन चांदमलजी स्वामी देरी से आए। शायद उस समय भी पंचमी समिति के स्थान की दुविधा ही थी। चातुर्मास में और भी संकडाई हो जाती हो। लाडनूं यों ही ऊंचाई पर बसा है। वहां धोरे—रेत के टीले नहीं के बराबर हैं। चांदमलजी स्वामी को स्थान सुलभ नहीं हुआ होगा। देरी से आने पर संतों ने देरी का कारण पूछा। वे तो भरे हुए आये थे। आते ही उन्होंने कहा—लाडनूं में स्थान है कहां जो झट से आ जाता?

नहिं कोई धोरा, नहीं कोई ओला, नहीं कोई बोझा-झाड्यां।
लाडनूं में काम निकालण, आगैं पाछैं बाड्यां॥

यह तो सीधा लाडनूं पर व्यंग्य था। भाईजी महाराज इसे नहीं सुन सके, वे गुनगुनाए और बोले—'महाराज! लाडनूं जैसा साताकारी क्षेत्र है कहां? आप देखो तो सही—

धोरा तपैं-ठरै कट, ज्यावै, ओला-बोझा-झाड्यां।
बारह ही पून्यूं सुखदायी, (अें) लाडनूं री बाड्यां॥

अब चांदमुनि के पास इसका कोई जबाव नहीं था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८

कादापट्टी ? नहिं, नहिं, हरिसन-रोड

यों तो लाडनूं का भौगोलिक ढांचा ही ऐसा है—वहां पानी रुकता नहीं। ढलाऊ जमीन के कारण बरसाती पानी बहकर निकल जाता है, पर चालू बारिस में जिधर से पानी का बहाव होता है वहां कीचड़ होना स्वाभाविक है। अक्सर बैंगानियों के रास्ते से गांव के ऊपरी भाग का सारा पानी निकलता है। वहां रास्ता मुश्किल से मिले, यह सहज बात है। आज चांदमलजी स्वामी का उधर जाना था। कीचड़ ज्यादा था। वे उकता गए। ज्योंही ठिकाने आये, आते ही उन्होंने चम्पक मुनि से कहा—'चम्पा !

सुन्दर हेल्यां रंग रंगील्यां, और गोचरी कट्ठी।
(पर) बैंगाण्यां रो रस्तो के है ? सागी कादापट्टी॥

भाईजी महाराज प्रारंभ से ही बैंगानियों के महाराज कहलाते रहे हैं। कुछ जन्मगत संस्कार ही कहें। सेठ जीवणमलजी बैंगानी तो भाईजी महाराज को देखते ही झूम उठते थे। कभी-कभी तो वे भावावेश में चम्पक मुनि को बांहों में भरकर उठा लेते। सारे बैंगानी परिवार के बच्चे भाईजी महाराज के पास ही बैठते। उन्हीं से सीखते-नमोकार-तिक्खुतो, सामायिक-पाठ, पच्चीस बोल, चर्चा।

भला, भाईजी महाराज उस परिवार के मोहल्ले के संबंध में और फिर लाडनूं के एक प्रतिष्ठा प्राप्त घर-घराने के लिए ऐसी बात कैसे सुनते ? उन्होंने जवाबी पद्य में कहा—

'पूनू-सागर -सुमेर- जस्सू- रणजीतो- हनुमान,
पेहर्‌या ओढ्या देवकुंवर-सा, अै टाबर पुनवान।
बैंगाणी परिवार अनोखो, देखो ! मन रो कोड।
दगग-दगग रस्तो बेहवै है, जाणै हरिसन रोड॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६

राम-चरित्र, एक रहस्य, एक हेतु

वि०सं० १९८६ लाडनूं चातुर्मास में श्री भाईजी महाराज ने रामचरित्र कंठस्थ करना प्रारम्भ किया। वे रामायण सीखते तो थे पर सन्तों से छुपे-छुपे। उन दिनों सोहन मुनि (चूरू) और चम्पक मुनि में अच्छा खासा विनोद चला करता। दोनों मगन-लालजी स्वामी (दीवान जी) के साझ-मंडल में पात्री-जोड़ी करने के काम में नियुक्त थे। सोहन मुनि को राम-रास सीखने की भनक लगी। पात्री जोड़ी करते-करते सोहन लाल जी स्वामी ने रहस्योद्घाटन करते हुए कहा—सन्तो! सुनो। सुनो। एक नयी बात। तुम्हें पता है, चम्पक मुनि राम-चरित्र क्यों सीख रहे हैं? उन्होंने एक पद्य रचा और गाते हुए कहने लगे—

'रामायण मुहड़े करस्यूं
मैं आगेवाण विचरस्यूं
खांधे पर ओघो धरस्यूं
कर अभिमान, मान-मान
छांनै, चम्पक मुनि रामायण सीखे
जाण-जाण-जाण'।

यह व्यंग्य, चम्पक-मुनि को अच्छा नहीं लगा। न उनके मन में अग्रगण्य विचरने की हूंस थी, न अभिमान का भाव ही था, पर उस युग में रामचरित्र सीखने का सीधा कोण यही माना जाता रहा। सन्तों में नयी चर्चा छिड़ी, क्योंकि एक नया रहस्य संतों के हाथ लग गया था।

भाईजी महाराज ने भी एक उत्तर पद्य बनाया और दूसरे दिन जब सोहन मुनि ने वही पद्य फिर संत-मंडली में उथला, तो चम्पक मुनि बोल पड़े—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संतां ! मैं रामायण इसलिए सीख रहा हूं—

जद राम चरित्र मंडासी,
गणिवर ढालां फरमासी।
चम्पो भी कंठ मिलासी,
मधुरी तान, तान, तान।
सोहन मुनि ! मत करो मसकरी,
संत सुजान जान जान।

यह सुनते ही पूरा वातावरण मुखरित हो उठा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०

लाडनूं की रेल

उन दिनों लाडनूं रेल की मुख्य लाइन से जुड़ा हुआ नहीं था। केवल सुजानगढ़ से लाडनूं तक एक टुकड़ा-अद्धा चला करता। वह भी टेम-बेटेम। न स्टेशन था, न सिगनल था। एक बार सुजानगढ़-लडनूं के बीच कविवर चांदमल जी स्वामी ने रेल देखी, वह धीरे-धीरे चल रही थी। उन्होंने चम्पक मुनि से कहा—चम्पा! देख! देख!

टूट्या भांग्या तीन डबलिया, इंजन बूढ़ो बैल!
देख, सिसकती चाले चम्पा! लाडनूं री रेल॥

सच, वह चलती तो ऐसे ही थी, जैसा चांद-मुनि ने कहा, पर लाडनूं की हर बात सदा चम्पक मुनि को सुहावनी ही लगती। मातृभूमि का गौरव उनकी नस-नस में रमा हुआ था।

भाईजी महाराज ने कहा—महाराज! आपका कहना तो सही है, पर यह लाडनूं की रेल है। देखिये! कैसी मस्ती से चलती है। मस्ती से चलना भी किसी-किसी को आता है। जरा दृष्टिकोण बदलकर देखो—सिसकती नहीं, मलकती कहो महाराज! मलकती। साधन सामग्री के अभाव में भी जो संतुष्ट और मस्त रहता है, यही तो साधना का सार है, देखिये—

'तार नहीं, टैम नहीं, नहि दियै में तेल।
तो ही चाल मलकती चालै, म्हारै लाडनूं री रेल॥

है न इस रेल की भी विशेषता। क्योंकि यह लाडनूं की है, लाडनूं की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१

तीर्थभूमि लाडनूं

आचार्यश्री तुलसी ने अपने ज्येष्ठ बन्धु स्वर्गीय भाईजी महाराज को अंतिम श्रद्धांजलि चढ़ाते हुए कहा था—

> शहर लाडनूं रो तो बो हो सारां सिरे सपूत,
> जन्म-भूमि रो गौरव गातो दे दे बड़ी सबूत।
> इणनें इण खातर मत छेड़ो, श्री कालू फरमायोः
> आयो, चम्पक मुनिवर चांदज्यूं, हो चांद ज्यूं।'

यदा-कदा सन्त लाडनूं के बहाने चम्पक-मुनि से चुटकी लेते और उन्हें प्रतिवाद में लाडनूं की गौरव-गाथाएं सुनने को मिलतीं।

कभी-कभी विनोद, विवाद का रूप ले लेता तो श्रद्धेय कालूगणी जी फरमाते—चम्पा ! तेरा क्या लेता है, कह लेने दे इन संतो को, तू क्यों बोलता है? और भाईजी महाराज अर्ज करते—गुरुदेव ! आप ही फरमायें, लाडनूं है न विशेष सानी रखने वाला क्षेत्र? इसकी जोड़ी का है कोई दूसरा गांव ?

कालूगणी फरमाते—हां, हां, तेरे लाडनूं की होड़ कौन कर सकता है। लाडनूं तो लाडनूं है। सुनते ही चम्पक मुनि का सेर खून बढ़ जाता और वे कहते—देखो, सन्तों ! पूजी महाराज ने क्या फरमाया—लाडनूं की बराबरी कोई नहीं कर सकता। यह तीर्थ-भूमि है, तीर्थ-भूमि। पुण्य भूमि, सिद्ध-भूमि। तपोभूमि, साधना-भूमि।

विवाद को विनोद में बदलते हुए श्रीमद् कालूगणी फरमाते—संतों ! चम्पालाल को लाडनूं के लिए मत छेड़ा करो। इसके मन में मातृ-भूमि के लिए अगाध स्नेह है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक बार ओघड़ कवि चांदमलजी स्वामी ने किसी ऐसे ही प्रसंग पर कह दिया—

'दूध-दही तो रह्यो कठे ही, मिले न पूरी रोटी।
चाटां के चन्देरी री अै, हेल्या मोटी-मोटी।'

और चम्पक मुनि ने कहा, बताते हैं—

द्रव्य घणा, दाता घणा, (पर) अंतराय अगवाणी,
ढंढण रिषि ने राजग्रही में, मिल्यो न भोजन-पाणी॥'

यह दोष राजग्रही या लाडनूं का नहीं, करमों का है—महाराज !
चांदमल जी स्वामी को ढंढ़ण मुनि की उपमा बुरी लगी।
वे नाराज हुए और कई दिनों तक अनबोल रहे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सावधानी का संकेत

सर्व सम्पन्न ओसवाल समाज में श्रीसंघ और विलायती का एक विवाद बंगाल से उठा। इन्द्र बाबू दुधोड़िया विलायत जाकर आये। समाज ने उन्हें जाति-बहिष्कृत किया। सबसे पहली पंचायत वि० सं० १९४६ मिगसर शुक्ला १० दिनांक २-१२-१८८९ कलकत्ता में बैठी। विवाद ने तूल पकड़ा। भाई-भाई बंट गये। कितने सगपन टूटे। कितनी बेटियां मां-बाप के स्नेह से वंचित हुईं। गांव-गांव और घर-घर में दो पक्ष खड़े हो गये। आपसी खान-पान, लेन-देन और बेटी-व्यवहार बंद हो गया।

श्री भाईजी महाराज के दादा राजरूपजी खटेड़ ने उसी प्रसंग पर नौकरी छोड़ी। वे नेमचन्द हरखचन्द दुधोड़िया—सिराजगंज के करतम-धरता मुनीम थे। राजरूपजी श्रीसंघी थे और मालिक दुधोड़िया जी विलायती जाति-बहिष्कृत।

वही झगड़ा थली में देशी-विलायती के नाम से उठा। चूरू उसका मुख-केन्द्र बना। सुराणा शुभकरण जी (तेजपाल वृद्धीचंद) की बारात अजमेर लोढ़ों के यहां गयी। वहां राजा विजयसिंहजी (विलायती) पहुंचे। एक ओर चूरू के कोठारी दूसरी ओर सुराणा, दोनों ही दिग्गज। देशी-विलायती के नाम पर परचेबाजी चली। कितने विवाह-मंडप उजड़े। कितने बिरादरी के भोज बिगड़े। बढ़ते-बढ़ते उस विवाद ने धर्म-संघ पर भी हाथ डालने का असफल प्रयत्न किया। श्रावक समाज के दो गुट धीरे-धीरे साधु-समाज को भी घेरने लगे। भीतर ही भीतर कुछ साधु देशी और कुछ विलायती माने जा रहे थे। उनका आपसी वार्तालाप भी एक-दूसरे पक्ष को हीन-श्रेष्ठ कहते नहीं चूक रहा था। यद्यपि आचार्य कालूगणी जी बहुत सजग और निष्पक्ष नीति से माध्यस्थ भाव बरतते रहे। स्थिति पर उनकी अच्छी नजर थी।

वि० सं० १९८६ पूज्य प्रवर राजलदेसर पधारे। व्याख्यान के बाद

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वींजराजजी वैद गुरुदेव की सेवा में पहुंचे। उन्होंने बड़े विनय से निवेदन किया—खमा घणी! क्या सन्तों को भी देशी-विलायती के झंझट में पड़ना चाहिए? मैं शिकायत नहीं, संघीयता के नाते ध्यान खींचना चाहता हूं। अमुक अमुक साधु अमुक-अमुक पार्टी का पक्ष ले रहे हैं। कुछ मुनिजनों के पास परस्पर विरोधी छापे—पैम्पलेट भी हैं। कहीं यह विष-बेल का अंकुर अहित न कर दे।

संत गोचरी गये हुए थे। मुनि शिवराज जी स्वामी (कोटवाल) को आदेश मिला। संतो के पुट्ठे मंगवाये गये। निरीक्षण हुआ। बात सही निकली। पूज्य कालूगणी का रंग बदला। ज्यों-ज्यों संत गोचरी से आते गये, एक-एक कर पेशियां पड़ीं। उपालंभ तो मिलना ही था। पैम्पलेट रखने का प्रायश्चित्त दिया गया। मुख्यरूप से मुनि सकतमल जी, कानमल जी स्वामी, सोहनलाल जी स्वामी (चूरू) आदि सन्त उस में पात्र थे। उसी लपेट में श्री भाईजी महाराज भी आये। पूठे से एक छापा निकला। सबके बाद श्री कालूगणी ने फरमाया—चम्पा! तू कहां उलझा? भाई! यह काम हमारा नहीं है। आगे से सावधान रहना! जाओ।

इस सारी घटना को श्री भाईजी महाराज ने एक पद्य के माध्यम से हमें बताया—

'किती कहूं कालू कृपा, कृत-मुख करुणा-धाम।
चम्पा! तूं उलझ्यो कठे?, (ओ) नहीं आपणों काम।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३

एक शब्द में पानी-पानी

गुरु गुरु होते हैं। वे अपनी गरिमा के धनी होते ही हैं, साथ-साथ वत्सलता के सागर भी होते हैं। उनकी उदारता उन्हीं में होती है। शिष्य की छोटी-बड़ी गलती की ओर वे नहीं देखते। वे देखते हैं जीवन-परिष्कार की मौलिकता।

श्री भाईजी महाराज ने अपने अनुभवों के बीच फरमाया—

छापर की बात है। नाहटा रेंवतमल जी की महफिल में पूज्य गुरुदेव कालूगणी का विराजना था। मंत्री-मुनि मगनलाल जी स्वामी के साथ मैं गोचरी जाया करता। उनकी गोचरी-कला, द्रव्यों की परख, खपत का अनुमान, दाता का अभिप्राय और समयज्ञता सीखने-धारने जैसी थी। दूसरी बार किसी छोड़े हुए द्रव्य को लाना उन दिनों मेरा काम था। मुझे भेजा गया। मैं चने की दाल अधिक ले आया। ले क्या आया, दाता ने भावावेश में अधिक डाल दी।

कालूगणी ने मुस्कराकर फरमाया—इतनी कैसे लाया? मैंने निवेदन किया, लाया नहीं गुरुदेव! बहराते समय ज्यादा डाल दी।

मगनमुनि बोले—'थारै तो गोबर ही न्हाख देई? है भभेक? मूरख कठैइं को, जा लेजा, आपां रै रीत है—'बत्ती ल्यावै बीनै सूंप देणी।'

उपालंभ के तेज-स्वरों में कही गई बात मुझे चुभ गयी। कुछ उन्मने भाव से मैं दाल की पात्री ले साझ-मंडल में आया। किसी को बिना कुछ कहे दाल पीने बैठ गया। संतों ने पूछा—क्या बात है? मैं कुछ नहीं बोला। सोहन मुनि चूरू, तपस्वी सुखलाल जी स्वामी और मुनि जसकरण जी ने टोकते हुए कहा—करते क्या हो? कोई खराबी हो गई तो? पर मैं कब सुनने वाला था। दाल पीता गया। जब संतों ने पात्री पकड़ी तो मैंने अपनी लय में कहा—नहीं-नहीं, कुछ नहीं होगा, मगनलाल जी स्वामी ने बख्शाइ है। मंत्री-मुनि आहार-मंडली में पधारे। संतों ने शिकायत की। मगन मुनि ने 'वज्र मूर्ख है' कहकर बात टाल दी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कालूगणी को पता चला—मुझे नजदीक बुलाकर वात्सल्य उंडेलते हुए फरमाया—चम्पालाल ! ऐसा नहीं करते, वह तुझे अकेले को थोड़े ही सौंपी थी। मगनलाल जी स्वामी तो तुम्हारी गंभीरता परखते थे। जाओ, आइन्दा ध्यान रखना। बस, एक शब्द में मेरा जहर उतर गया। मैंने मंत्री मुनि से सविनय क्षमा मांगी।

'गुरु की गुरुता गजब की, वत्सलता अनपार।
एक शब्द में ही दियो, म्हारो जहर उतार ॥'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४

जीवन का एक सौभाग्य : सेवा

सेवा सेवा है। उसमें विनिमय नहीं होता। तुम करो तो मैं करूं, यह तो गधा खाज है। एक गधा दूसरे गधे की खाज तब तक करता है, जब तक वह करे, एक छोड़ता है दूसरा भी छोड़ देता है। हम सेवाव्रती हैं। संघ हमारा है, हम संघ के हैं। संघ का हर सदस्य अपना है। छोटा-बड़ा, कामल-बेकाम, अपना-पराया—यह भेद संघीयता में खटता है। हमारा कलेजा सवा हाथ का हो। विचार उदार रहे। सेवा में न आदेश का इंतजार होता है और न विनय की प्रतीक्षा। जो कुछ भी हम करें निर्जरा के लिए करें। प्रशंसा लोकैषणा-से परे हमारा हर सेवा-कार्य संघीय गौरव के लिए हो। इसी का नाम तेरापंथ है, जहां सबके लिए हम और हमारे लिए सब हैं।

वि० सं० १९८९ का मर्यादा-महोत्सव श्री डूंगरगढ़ में हुआ। होली बीदासर की फरमायी गयी। श्रद्धेय कालूगणी जी महाराज का ससंघ रीडीगांव से विहार हुआ। रीड़ी और धर्मास के बीच पांच कोस का लम्बा रास्ता था। रास्ता भी रेगिस्तानी धोरों का। मुनि सम्पतमल (डूंगरगढ़) नये-नये दीक्षित थे। उमर भी क्या थी ? कुल नौ वर्ष। पहला-पहला विहार। सर्दी का मौसम। नये मुनि ठिठुरा गये। शरीर कांपने लगा। बेचारे चले भी कब थे ? जब उनसे चला नहीं गया, वे बैठ गये। मैं (श्री भाईजी महाराज) पीछे से आया। देखा, बाल मुनि परेशान हैं। पांव ठर गये हैं।

मेरा कर्तव्य-बोध मुझे कुछ सहयोग करने को कह रहा था। और मैं क्या योग्य था जो कुछ कर सकूं। मैंने सम्पत मुनि को अपने कंधे पर उठाया और लगभग तीन कोस सकुशल धर्मास पहुंचाया। बीच में मिलने वाले संतों ने मेरा सहयोग किया। उस दिन मेरे मन में एक अचिन्त्य खुशी थी। लगता था आज मैंने कुछ किया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य गुरुदेव कालूगणीजी ने सब संतों के बीच संघीय भावना की शिक्षा देते हुए मुझे इक्कीस कल्याण से पुरस्कृत किया। संघपति सदा सेवा को प्रोत्साहन देते रहे हैं।

समय पर संघसेवा का ऐसा अवसर मिले यह जीवन का सौभाग्य होता है। संतों! अवसर मत चूको। उत्साहपूर्वक की गई सेवा निर्जरा—महाकल्याण का हेतु है। संघ का काम संघ से चलता है, संघ से बड़ा और कोई नहीं।

'संतां! शासन में सदा, सेवाधर्म अतुल्य।
श्रीकाल करुणा करी, आंक्यो सेवा-मुल्य॥'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५

सुमिरन अचिन्त्य शक्ति है

भय आदमी के मन की संज्ञा ही है। उसे डर लगता है, पर डर कुछ है तो नहीं। सामान्यतया कोई किसी का कुछ बिगाड़ता नहीं जब तक सामने वाला हमसे आहत नहीं होता। हम भी डरते हैं और वह भी डरता है। कष्ट सबको अप्रिय है। जानवर भी प्रेम चाहता है, प्रेम करता है, यदि हम उसे अभय कर दें।

भाईजी महाराज ने फरमाया—मैं प्रारम्भ से ही निडर था। आज भी आमने-सामने मुझे डर कम ही लगता है। हां, बहम से तो कई बार रात-रात भर मुझे भी नींद नहीं आती। किसी भी विषैले जानवर को देख लेने के बाद मैं प्रायः नहीं डरता। सांप, बिच्छू और कांसलाव को मैं बिना झिझक के कपड़े से ही पकड़ लेता हूं। क्षुद्र जंतुओं से ग्लानि-सी होती है। ग्लानि, केवल यह कि बेचारा चिगदा न जाये, मर न जाये।

वि० सं० १९९० की बात है। आचार्य कालूगणीजी महाराज ईडवा पधारे। पुराने उपाश्रय की चबूतरी पर अभयराज जी चोरड़िया और मैं थोकड़े चितार रहे थे। बाल-मुनियों का अध्ययनशील-दल भीतर सीखने-चितारणे में व्यस्त था। मेरे पांव पैड़ियों पर लटके हुए थे। रात का समय था, अंधेर गुप्प। वह भी एक युग था। मेरे पैर पर कुछ गीला-गीला निकलता-सा प्रतीत हुआ। भिक्खू स्वाम। भिक्खू स्वाम, करता मैं क्षण भर स्थिर रहा। झटका देकर उठा कि चोरड़िया जी ने पूछा—क्यों। क्या बात है? महाराज! मैंने कहा—कोई जानवर-सा है। उन्होंने प्रकाश लाकर देखा तो दो-अढ़ाई हाथ लम्बा काला मोटा सांप था। जब तक मेरे पैरों पर से वह पूरा नहीं निकल गया, मैं नहीं हिला। आज सोचता हूं, गुरुदेव की कृपा ही थी, मैं निडर होकर स्थिर रह सका। यदि हिला होता तो शायद वह भी डरता और छिड़ जाने के बाद मुझे काटता भी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संतों ! जब कभी ऐसा अवसर आये, स्वामीजी का स्मरण करो। वह नाम अचिन्त्यमहामंत्र है।

सुमिरन शक्ति अचिन्त्य है, परखो धर अनुराग।
निकल्यो निबियै ईडवें (जद) पैरां पर स्यूं नाग॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६

सेवार्थी की पहचान

पूज्य-पाद श्रद्धेय कालूगणी फरमाया करते थे—कठिन श्रमवाली सेवा औरों पर मत डालो। अकेले स्वयं से वह पार न पड़े तो किसी सहयोगी को चुनो, पर जी मत चुराओ, मुंह मत लुकाओ। 'अहं प्रथमः' का उत्साह ही सेवार्थी की असल पहचान है।

श्रीभाई जी महाराज ने अपना एक उदाहरण देते हुए बताया, मुसालिया (मारवाड़) की बात है। भयंकर गरमी के दिन। मध्य दुपहरी में बाल-मुनि सम्पत, पंचमी समिति के लिए बाहर गये। सरदार नाहरसिंह साथ में था। अनजान संपत मुनि नदी में चले तो गये। वह गरम-गरम तपी हुई बालू। अब लगे पैर जलने। वे वापस नहीं आ सके। पैरों में फफोले पड़ गए। रोने लगे। सरदार नाहरसिंह ने दौड़-दौड़े ठिकाने आकर गुरुदेव से निवेदन किया। उस समय कालूगणी महाराज की सेवा में मैं बैठा था। आचार्य देव ने फरमाया—चम्पा! सुखलाल को बुला तो। मैंने निवेदन किया—क्यों गुरुदेव? आचार्यवर ने कहा—नानक्या ने ल्याणों है रे?

मैंने निवेदन किया—सुखलाल जी स्वामी क्या करेंगे? मैं ही ले आता हूं।

श्री जी ने फरमाया—पैर बहुत जलते हैं, तेरे से पार नहीं पड़ेगा। उसी को बुला।

मैंने गुरुदेव के चरण पकड़ लिये—'यह अवसर तो मुझे ही बख्शाइये, विश्वास कीजिए, आपकी दया से सब पार पड़ जाएगा।'

गुरुदेव ने कंबल साथ लेकर जाने का आदेश फरमाया। गुरु गुरु होते हैं। उनकी महानता उन्हीं में होती है। आचार्य हर समस्या का समाधान भी जानते हैं। यदि उस दिन कंबल लेकर नहीं गया होता, तो नदी की रेत पार कर आना मुश्किल था। संपत को उठाकर लाना पड़ा। उसके पैरों में छाले पड़ गये थे, उसके क्या मेरे पैरों में भी छाले पड़े। चेहरा लाल-लाल हो गया। ज्यों ही संपत को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेकर मैं आया, गुरुदेव ने मुझे शाबासी के साथ ३१ कल्याणक से पुरस्कृत किया। सन्तों ने मेरी हिम्मत सराई। मगन-मुनि ने दाद दी और मुनि जीवराज जी (संपत के संसार पक्षीय पिता) ने कृतज्ञता व्यक्त की।

आचार्य प्रवर ने फरमाया—सेवा भावना का पता ऐसे मौके पर लगता है। 'सेवा री शोख इंरो नांव'।

'संतां ! कठिन-कठिन सेवा को, अवसर जद कद आवै।
सब स्यूं आगे रह सेवार्थी, 'चम्पक' भाग्य सरावै ॥'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७

वीरमती

बीकानेर लाल कोठरी से निकलते ही उनका पहला मकान है। वैसे तो वे जैन हैं, उन पर दिनों साम्प्रदायिक वैमनस्य के कारण आपस में खूब तनाव रहा करता था। वहां भी वही हाल था। पड़ोसी और विरोध में रस लेने वाला फिर तो क्या पूछना? उस घर की माजी का असल नाम क्या था, मैं नहीं जानता पर साधारणतया सब लोग उन्हें 'वीरमती मां' कहा करते थे।

वीरमती आभानगरी के महाराजा चन्द की सौतेली मां थी। वह बड़ी कौतुक-कर्मी, जादू-टोनों में माहिर और कड़क स्वभावी थी। उसके चंड-स्वभाव से सभी कांपते थे। चंड-चरित्र की वह वीरमती कथा-प्राण थी। वही हाल हमारी इस मांजी का भी था। सारा परिवार कांपे, इसमें कोई बड़ी बात नहीं, पर पूरा मोहल्ला मांजी की धाक से धूजता था। कोई भी परिचित मांजी की प्रकृति से अपरिचित नहीं था। मांजी जब राजी होती, सात हाथ की सोड़ में सोवो, पर नाराज होने के बाद वह छींट नहीं छोड़ती। पर, न जाने क्यों ऐसे लोगों से भाईजी महाराज की खूब पटती थी।

वि० सं० २००२ के जेठ की बात है। उन दिनों वीरमती मांजी के घर कमठा (चुनाई का काम) चल रहा था। पिरोल दरवाजे के ऊपर मालिया बन तो गया था, पर अभी लिपाई हो रही थी। बाहरी लिपाई के लिए ऊपर से एक खाट लटकाई। खाट के उस मंचान पर चढ़े कारीगर लिपाई कर रहे थे। तीन आदमी मंची पर बैठे काम कर रहे थे। ऊपर से एक व्यक्ति और उतरने लगा। संयोगवश भाई जी महाराज उसी समय उधर से निकले।

मुनिश्री ने मिस्तरी को आवाज देते हुए कहा—अरे भाई! देखना जरा, हमें तो निकल जाने दो। कहीं ऊपर से दीवार न खिसक जाये?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'गोली गार दिवार थे, चढ़ग्या लड़दा च्यार।
ढहणै रा 'चम्पक' ढचक, ए साहमा आसार॥'

नयी चुनी हुई गीली दीवार है। तुम तीन तो इस मंची पर बैठे ही हो, चौथा और उतर रहा है।

उनमें से एक ने बीकानेरी बोली में कहा—'भीतो ढह्या करै है क्या? थों ढूंढिया क्या जाणो' ?

भाई जी महाराज शीघ्र गति से लाल कोठड़ी के चौक में पहुंचे। अडडडड···। एक आवाज आई, मंचान पर बैठे लोग चिल्लाए। घूमकर देखा, एक ओर की दीवार खिसक गयी थी। मंचान का एक भाग झुक गया। एक आदमी लटक गया। दो जन कूदकर खिड़कियों के रास्ते से भीतर पहुंच गये। एक व्यक्ति बेचारा रस्सी के बल अब भी अधबिच में झूल रहा था। पर चोट किसी के नहीं आई। सभी बाल-बाल बचे।

आवाज सुनते ही मांजी वीरमती दौड़कर बाहर आई। चारों आदमियों को नीचे बुलाया। दो-पांच गालियां डांटी। उन्हें लेकर लाल कोठड़ी के चौक में आई और भाईजी महाराज के चरणस्पर्श करवाकर बोली—रोंड़रा! थों क्या जाणीस महारासा ने?'

मांजी उन्हें समझा रही थी—सन्तों का प्रताप था, आज तुम बच गये। सन्तों को अनुभव होता है। देखा! भाईजी महारासा की बात कितनी सच निकली।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८

पाणी लारै लहताण

श्री भाईजी महाराज की २००६ की दिल्ली यात्रा में हरियाणा आया। सैकड़ों-सैकड़ों लोग पैदल यात्रा में साथ थे। हरियाणा का अग्रवाल समाज भक्ति-प्रधान और संघीय भावना से ओत-प्रोत है। भाईजी महाराज का अपना निर्णय था—यथासंभव हर गांव को परसा जाए, जहां तक हो कोई खेड़ा भी न छूटे। तीन रात टोहाना बिराजकर 'लौन' के लिए विहार हुआ। २००५ चैत्र-कृष्णा त्रयोदशी का दिन था। वह हरियाणा का कच्चा मिट्टीदार रास्ता। धूप इतनी तेज निकली कि सन्तों को प्यास लग गई। रास्ते में 'धमताण' गांव आया। जमींदारों की बस्ती। छग्गु-बा बोले—मैं पानी ले आता हूं, आप रुको। वे पानी की गवेषणा में गए। एक जमींदार के घर गर्म उबला पानी मिला। छोगालाल जी स्वामी आधा पानी लाए, आधा छोड़ आए। यह सन्तों की विधि है। हमें आवश्यकता है पर गृहस्थ को भी आवश्यकता हो सकती है। सन्तों को देने के बाद पानी और बनाए, यह पश्चात् कर्मदोष है। उस गर्म पानी को ठंडा करने हमने गरणा (कपड़ा) लगाया, पानी ठर रहा था कि एक बूढ़ा जमींदार हाथ में लाठी लिये बकता-बकता आया—'कहां है वह सुसरी का साधु जो अभी-अभी पानी लाया है? कहते-कहते उसने छग्गु-बा का हाथ पकड़ा और बोला—पानी तू लाया? बता! वह पानी कहां है? मुंह बांधकर लोगों को ठगता फिरता है? बहुत देखे हैं तेरे जैसे मुंह-पटिये ठगों को। छटांक पानी से, तेरा घींटवा गीला होवै था। मैं जानता हूं तू मेरी बहू पर कामण (जादू-टोना) करके आया है? बता-बता! वह पानी कहां है? कहते-कहते उसने लकड़ी से पानी का पात्र उलटा कर दिया। वह उछल-उछलकर लट्ठ तान रहा था। आज मैं नहीं छोड़ता। बहुत दिन हुए हैं तेरे को टोहते।

भाई लाजपतराय (टुहाना) और दुलीचंद (भिवानी) गर्म हो गये, बूढ़े से भिड़

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पड़े। गांव के सैंकड़ों और साथ के लोग बीच-बचाव कर रहे थे। वह बूढ़ा वेग में था। अंट-संट ग्रामीण भाषा में गालियां दे रहा था। आज मैं देख लूंगा, इन मोड़ों को। यह आधा पानी लाया और आधा क्यों छोड़ आया? इसने टोंणा किया है टोंणा। मेरे में बीती है, मैं जानता हूं। मैं रोऊं तेरे उस बहनोइये को, जिसने मेरी गृहस्थी बरबाद कर दी। उसके हाथ-पांव पूरा शरीर गुस्से में थर-थर कांप रहे थे।

श्री भाईजी महाराज कमरे से बाहर पधारे। सबको शांत किया और उससे पूछा—भाई पटेल! क्या बात है? पहले तुम्हें यह बताऊं। हम वे ढोंगी नहीं हैं। तेरापंथी साधु हैं। त्यागी हैं। इधर गांव के कुछ मुखिया आये। एक साधु के साथ अभद्र व्यवहार पर सबको खेद था। मुनिश्री ने कहा—पहले इसे अपने मन की बात कहने दो। हां, भाई बाबा! बता, क्या हुआ? हम नाराज नहीं हैं? संत का लाया पानी ढोल देना अपराध है, पर मैं तुम्हें माफ करता हूं। पर तेरे हुवा क्या, यह तो बता?

वह अब थोड़ा ठंडा पड़ा। बोला—बैठ लेने दो तो बताऊं। भाईजी महाराज बाहर चबूतरे पर बिराजे। वह भी बैठा। लोगों का मजमा सुन रहा था। उसने कहा – तेरे जैसा ही एक मुंहपटिया आया था, दो साल पहले। वह भी इसी तरह पानी लाया था जैसे यह बूढ़लिया लाया। मैं नहीं जानता यही था कि और कोई। आधा पानी लाया, आधा पीछे छोड़ आया। उसने लाए हुए पानी में कुछ पढ़ा। मेरी बहू पर कामण-टूमण किया। मैंने न करने जितने इलाज कराए, पर वह ठीक नहीं हुई। मैं पैसों से बरबाद हुआ। वह भी नहीं बची। मेरी आत्मा रो रही है! बोल! अब मैं के करूं? वैसा ही इसने भी किया? मन्नै बता तो सही एक घूंट पानी से इसका के घींटवा (गला) गीला होवै था?

भाईजी महाराज ने कहा—ले बाबा! अब मेरी भी सुन। अब तो तेरा बहम निकला न, तैंने पानी ढोल दिया। अब तो इस पानी पर कोई कुछ नहीं पढ़ सकेगा? देख! हम वे कामण पढ़ने वाले संत नहीं हैं। तू टोहाने के लाला रणजीतसिंह चौधरी को जानता है?

बूढ़ा बोला—हां-हां खूब, बड़ा मातवर आदमी है चौधरी, के पूछना उसका। भाई जी महाराज ने कहा—और भगत मानसिंह को? बूढ़ा बोला – अरे वाह! वो तो धर्मात्मा है, महाराज! साक्षात् भगत, सांचा भगत। तुम उसनै कैसे जाण दे हो?

भाईजी महाराज ने फरमाया—बाबा! हम चौधरी रणजीतसिंह और भगत मानसिंह के गुरु हैं। उन्हीं से पूछ लेना, हम कैसे हैं? यह देख, ये रहा लाजपतराय, चौधरी रणजीत का बेटा है, बेटा।

बूढ़े ने पैर पकड़ लिये। महाराज माफ करना, मैं तो तेरी इज्जत बिगाड़ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आया था। पर संत, तेरी शांति ने मेरा गुस्सा खा लिया। माफ करिए मेरा कसूर। चल ईब पानी गरम करवा दूं ? बूढ़े ने आग्रह किया।

और मेरे जैसे लोग सोच रहे थे—हो गया पानी गरम ? गरम क्या ? गरम होकर ठंडा भी हो गया।

लगभग एक घंटे से ऊपर समय इसी झक-झोड़ में बीता। धूप तेज हो गई थी। संतों को प्यास सता रही थी। हमें अभी 'लौन' पहुंचना था। लोगों ने जय बोली। विहार हुआ। पर छग्गू-बा अभी तक कहे जा रहे थे—आसरे हैं क नीं ? ओ मूरखो ! म्हारैऊं ऊं करै, लकड़ीऊं डरावै मनै, ओरी म्हूं-पाणी। छग्गू-बा को देख श्री भाईजी महाराज हंसे और बोले—

छग्गू-बा ! आ के ल्याया, पाणी लारै लहताण।
रह्या तिसाया, चढ्यो तावड़ो, वाह रे ! वाह ! धमताण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६

नये मकान और आज के जवान

वि० सं० २००६ में श्री भाईजी महाराज सर्वप्रथम दिल्ली यात्रा को पधारे। हरियाणा (पंजाब-पेपसू) का स्पर्श करते हुए हम नांगलोई पहुंचे। नांगलोई दिल्ली से कोई १० मील इधर है। सड़क के किनारे बनी एक पुरानी सराय में हम रुके। सराय बराये-नाम है। किसी युग में आने-जाने वाले यात्री-वाहन यहां विश्राम करते होंगे। वहां एक विशाल बरगद (बड़) का पुराना पेड़ है। उसके नीचे एक तिबारी और साथ ही एक छोटी-सी कोठरी। पास ही एक कुआं। हम उसी सराय में ठहरे। सहवर्ती यात्री भी वहीं थे। आकाश बादलों से घिरा था। सायंकाल स्थानाभाव देख यात्री लोग आगे दिल्ली चले गए। हमें तो वहीं रहना था। हमारे पास रतन कहार (दिल्ली) और पूसाराम सेवग (राजलदेसर)—दो व्यक्ति रहे।

कोई घंटा भर दिन रहा होगा, बारिस प्रारंभ हुई। अचानक तीव्र वेग से तूफान (बातूल) आया। एक साथ बिजली कड़की और जोर-से एक धमाका हुआ। हम सब जिस कोठरी में बैठे थे, उसी की छत पर बड़ की एक विशाल शाखा टूटकर गिरी। पूरा मकान हिल उठा, मानो कोई भूकम्प आया हो। धमाके के साथ ही कोठरी की छत और दीवार में एक मोटी तरेड़—दरार आ गयी।

श्री भाईजी महाराज दोनों कोनों में अंगुलियां दबाए, आंखें मूंदे—'भिक्खू स्वाम, भिक्खू स्वाम' 'शांतिनाथ प्रभो, शांतिनाथ प्रभो' रटे जा रहे थे। मुनिश्री को कड़कने और गर्जने का अतिशय भय लगता था। ज्यों ही मकान फटा कि आंखें खुलीं। हम सभी संत भयभीत थे। बाहर निकलने का रास्ता टूटी शाखा ने रोक लिया था।

रतन और पूसाराम तिबारी में से चिल्ला-चिल्लाकर कह रहे थे—क्या हुआ? महाराज! क्या हुआ? श्री भाई जी महाराज ने फरमाया कुछ नहीं हुआ, डरो मत, जो होना था हो गया। अब कोई भय नहीं है। जो मकान पुराना है, उसकी नींव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मजबूत है। गिरता तो अब तक गिर गया होता। यही तो हाल है, पुराने मकानों और पुराने आदमियों की नींवें मजबूत होती हैं। आज का नया मकान इतने में कब का गिर गया होता। न तो आज के मकानों की गहरी स्थिति है और न आज के जवानों की।

थोड़ी ही देर में वह चहका (तूफान) निकल गया। बारिश बन्द हुई। हम बड़ी कठिनता से बाहर निकले। देखा, चारों ओर वृक्षों के ढेर हो गए हैं। हमारे ऊपर जो बड़ की शाखा गिरी थी, वह कोई बाथ में भरे इतनी मोटी और कम-से-कम ४०-४५ फीट लंबी थी। छत पर चढ़कर जब देखा अभी वह कोठरी की छत पर अधर झूल रही थी।

श्री भाईजी महाराज ने फरमाया—आज का हमारा सही-सलामत रहना स्वामीजी का प्रताप है, आचार्यप्रवर की कृपा का फल है, संघ का प्रभाव है और बडेरों की पुण्याई है। भला, इतना बोझा गिरने के बाद भी मकान खड़ा रहे, बड़ा आजुबा और अनोखी बात है। पुरानी सभी चीजों की पुस्तें मजबूत होती हैं—कहते-कहते मुनिश्री ने एक पद्य कहा—

'पुस्त पुरांणा री पकी, मुचै न मिनख मकान।
अस्थिर 'चम्पक' आजरा (ऐ) नुवां मकान जवान॥'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०

चहके का चक्कर

प्रातःकाल ज्यों ही हम दिल्ली की ओर बढ़े, देखा सड़क अवरुद्ध है। सैंकड़ों-सैंकड़ों वृक्ष इस तरह छिन्न-भिन्न हुए पड़े हैं मानो कोई प्रलय का झोंका आया हो। पांच मील तक का रास्ता वृक्षों की टूटी डालियों ने रोक रखा है। जिधर देखो उधर वृक्षों का बेहाल है। कई-कई वृक्ष तो एकदम उलटे हो गये हैं, जड़ें ऊपर हैं और टहनियां नीचे। रात भर से दिल्ली रोहतक रोड ठप्प है। न कोई कार आ-जा सकती है और न कोई ट्रक। सुनसान वीरान-सी सड़क पर हम कभी चढ़ते हैं, कभी उतरते हैं।

एक पीपल के पेड़ को उलटा पड़ा देख श्री भाईजी महाराज के पांव बरबस थम गये। चिन्तन की मुद्रा में कुछ क्षण रुककर मुनिश्री ने फरमाया—

जब चहका आता है ऐसा ही होता है। कौन उथल जाए, कौन खड़ा रहे, यह निर्णय करना कठिन है। उसी का खड़ा रहना, खड़ा रहना है, जो तूफानी झोंके में अडिग रहता है। कितने ऐसे आदमी हैं जो झोले में न डोले। भाई! यह तो चक्कर ही ऐसा है—देखो! इतना बड़ा देववृक्ष, जिसमें कोई कांटा नहीं, बांक नहीं, बुराई नहीं, कड़वाहट नहीं, शांत, कोमल, सुहावना, सर्वप्रिय और इतना विस्तृत। कोई चाहे कितना भी बड़ा हो, कितना भी विस्तृत हो, विद्वान हो, कितना ही लोक-प्रिय हो, जिसने जड़ें छोड़ दीं, वह उथल जाएगा। संघ धरती है। संघ में जो जितना गहरा और मजबूती से गड़ा हुआ है। वही खड़ा रहेगा। वातावरण के चहके में जिसके पांव उखड़ गए, वह गया समझो। बातूल का सहना कोई के वश की बात नहीं है—जो उखड़ जाता है, उसकी यही गति होती है।

'चम्पक चहकैं रो चकर, सह नहि सकैं हरेक।
टहण्यां तो नीचै टिकी ऊपर जड़्यां उवेख॥'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१

मूरख कोचवान

भाईजी महाराज का २००६ का वर्षावास पुरानी दिल्ली नया बाजार में था। उस वर्ष आचार्यप्रवर जयपुर विराज रहे थे। मुनिश्री का यह आचार्यप्रवर से अलग दूसरा चातुर्मास था। एक दिन सायंकाल तीस हजारी पुल उतरकर हम अजीतगढ़ जाने वाले राजपुर मार्ग की मोड़ पर मुड़े। एक तांगेवाला हमारे पास-पास निकल रहा था। हम देख रहे थे उसका घोड़ा बार-बार रुकता था। कोचवान चाबुक मार-मारकर उसे आगे बढ़ने को बाध्य किए जा रहा था। भाईजी महाराज ने एक बार, दो बार, तीन बार देखा। घोड़ा हमसे आठ-दस कदम आगे निकलता है फिर रुक जाता है। उसका यों बार-बार मार्ग में आड़े आ-आकर रुकना मुनिश्री को सर्वथा असुहावना लग रहा था।

भाईजी महाराज के चेहरे पर करुणार्द्रता के भाव झलक उठे। ज्यों ही चौथी बार घोड़ा रुका, कोचवान ने चाबुक सड़काया कि घोड़े ने दुलत्ती चलाई। 'पड़ाक' तांगा बोला। भाईजी महाराज से न रहा गया। माथा ठोकते हुए मुनिश्री ने कहा—डफोल ! मेरे सिर पर ही आकर रोयेगा क्या ? फिर रोयेगा तो पहले ही सोच ले।

मैंने पूछा—'क्यों ?'

भाईजी महाराज ने फरमाया—क्यों क्या ?

'कशा मार, खेंचैं कुशा, ओ बे-अकल अजाण।
करमां नै रोसी कुशी ! प्रोथी तजसी प्राण ॥'

लगता है, घोड़े का पिशाब रुक गया है। यह बार-बार पिशाब करने की चेष्टा करता है। कोचवान अनभिज्ञ है। पहचानता नहीं। घोड़ा हांफ गया है। संभव है यह मूरख कोचवान घोड़े से हाथ धो बैठेगा, फिर रोएगा कर्म पर हाथ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धर कर।

कोई दस ही कदम आगे चर्च की नुक्कड़ पर हटात् घोड़ा गिर पड़ा। लोगों की भीड़ जमा हो गयी। जब हम शौच निवृत्ति कर पुनः लौटे तो देखा, हट्टा-कट्टा मजबूत जवान घोड़ा मरा पड़ा है और एक ओर तांगे के पास खड़ा कोचवान रो रहा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२

यह कैसा है, बताऊं ?

मैं 'श्रमण-सागर' जैसा आज दिखता हूं, पहले नहीं था। प्रकृति में ऊफान इतना था—क्षण-भर में आपे से बाहर। मुझे सुधारने में भाईजी महाराज को बड़ी खेवट खानी पड़ी। वे, वे ही थे, जिन्होंने मेरा उचित, अनुचित सब कुछ सहा। मैं महीनों-महीनों भाईजी महाराज से अनबोल रह जाता। हां, गुण मेरे में एक था—मैंने कभी अपना स्थान नहीं छोड़ा। उनकी प्रकृति भी बड़ी कड़ी थी। यों स्वभाव सरल और स्नेहार्द्र भी हद से पार था, पर कड़ाई जब करते, वहां भी बेहद।

दिल्ली की बात है। एक दिन मेरा मूड बिगड़ा हुआ था। पटक-झटक उस समय सहज थी। जान-बूझकर नहीं किन्तु असावधानी से सफेद-पात्री सूखी करते हाथ से गिरी और टूट गयी। कोई लोहे का बर्तन तो था नहीं, थी तो आखिर लकड़ी की पात्री ही। अब होश आया। भाईजी महाराज ने देख तो लिया पर कुछ नहीं बोले। मैं गया और असावधानीवश हुए प्रमाद की माफी मांगने लगा। उनकी उदारता भी उन्हीं में थी। मुस्कराकर फरमाने लगे—कुमाणस ! अब तो हुआ गुस्सा ठंडा ? 'पतली पाड़ पतली', अब तू बच्चा नहीं है, स्याणा हो गया है। तोड़ना था तो पात्री क्या, इस अहं को तोड़ता न ? इतने में आ गई साध्वी गोरांजी। उन्होंने आते ही कहा, भाईजी महाराज ! सागरमलजी स्वामी आपके बड़े विनीत-साताकारी संत हैं। इन्हें देखती हूं तो मेरा जी सोरा हो जाता है। ये मुझे अपने छोटे भाई-से लगते हैं।

सुनते ही भाईजी महाराज ने फरमाया—हां-हां, तुम्हें तो ऐसा ही लगता है, पर मुझे लगे तब न। यह अक्कल का सागर कैसा है, बताऊं ?

'बड़ो कुमाणस सागरियो, गोरांजी ! थारो भाई,
बाई ! ई नै समझाओ तो, मनै हुवै सुखदाई

देखो, फोड़ी नुई पातरी, थोड़ो सो चिमठाओ
भले आदमी मैं कद आसी, अक्कल मनै बताओ ?'

साध्वी गौरांजी ने मेरी ओर से नरमाई करते हुए कहा—भाईजी महाराज ! ये टाबर है, टाबर तो गलती किया ही करते हैं। आप महान हैं, कृपा कर यह पात्री मुझे दिरावो। मैं सांध लाऊंगी।

साध्वी गौरांजी की विनम्रता और मेरे प्रति सहानुभूति तथा श्री भाईजी महाराज की वत्सलता और उदारता मुझे अभिभूत कर गयी। उस दिन से मेरे में एक परिवर्तन प्रारम्भ हुआ। श्री भाईजी महाराज उसी दिन से मुझे गौरांजी का भाई और साध्वी गौरांजी को मेरी बहन फरमाने लगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३

रजपूती का रंग

वि० सं० २००६ का दिल्ली चातुर्मास सम्पन्न कर भाईजी महाराज जयपुर पधार रहे थे। मिगसर कृष्णा ६ को हम पन्द्रह मील का विहार कर मांडीखेड़ा पहुंचे। मांडीखेड़ा सड़क के एक ओर ५०-६० घरों की बस्ती है, चारों ओर जंगल, सुनसान। हम गांव के बाहर छोटे-से स्कूल में रुके।

रात को कोई ६ बजे होंगे। गांव के ८-१० मुखिया आये और बोले—मुनिश्री आपके साथ बहनें-बच्चे हैं। यह स्थान जरा ऐसा ही है। चोरी-डकैती का भय रहता है। पीछे भी दो-तीन बार गांव लूटा गया है, अतः निवेदन है—महिलाओं को गांव में भेज दें, हमारी जिम्मेदारी है, ठीक रहेगा। उन्हें यह कहकर समझा दिया गया—हमें क्या डर है, कौन-सी जोखिम है हमारे पास? ठीक है, हम सावधान रहेंगे।

सुनते ही बहनें तो घबरा गयीं। पर भाईजी महाराज को गांव में बहनों का जाना नहीं जंचा। कमरे में बहनों की अपनी व्यवस्था थी। भाईजी महाराज ने बाहर बरामदे में अपना बिस्तर लगवाया। सर्दी तो थी पर मैं और भाईजी महाराज बाहर में सोये। संतों ने दूसरी कोठरी में बिस्तर जमाये। शेष लोग दूसरे कमरे में थे, पर ठाकुर प्रतापसिंहजी ने अपना बिस्तर बाहर लगाया और बन्दूक सिरहाने रखकर सो गये।

रात को एक बजे। अचानक बन्दूक का भड़ाका हुआ। एक के बाद दूसरा, तीसरा। गांव में हो-हल्ला मच गया। 'डाकू-डाकू' आवाजें सुन हम सभी सावधान हो गये। लोग भागे आ रहे थे। सड़क हमसे कोई २-३ फर्लांग दूर है। वहां कुछ जलता-सा दीख रहा है। भड़ाके पर भड़ाके हो रहे हैं। प्रतापजी बन्दूक ताने रास्ते पर खड़े हैं। वे कह रहे हैं—डरो मत, आराम से अपने-अपने घरों में जाकर सोओ। यह राजपूत जब तक जिन्दा है और इसके हाथ में जब तक बन्दूक है, कोई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

डाकू नहीं आ सकता। पर, लोगों का जी कहां टिकता ?

औरतें-बच्चे बिलबिला रहे हैं, इतने में तीन-चार आदमी आते दीखे। ठाकुर प्रतापजी ने बन्दूक ताने हुए ललकारा—'रुक जाओ, हाथ खड़े कर दो।'

प्रतापसिंहजी एक फौजी आदमी हैं। राजपूती उनके रग-रग में चू रही है। आने वाले रुके और बोले, हम यात्री हैं, हमारे ट्रक में आग लग गयी है, आश्रय चाहते हैं, सोने का स्थान दे दें तो बड़ी कृपा होगी। बहम निकला। लोग घरों को गये। प्रतापजी ने ट्रक वालों को अपने पास सुलाया।

सुबह बिहार करते समय हमने देखा, ट्रक जला पड़ा है। उसके पहिये एक-एक कर ज्यों फटे, गोली की-सी आवाजें आयीं, लोगों को डाकुओं के आने का बहम हो गया। दूध का जला छाछ को भी फूंककर पीता है।

भाईजी महाराज ने फरमाया—

'मांडीखेड़ा ! तू बड़ो, बहमी भी बेढंग।
(पर) दिखा दियो परतापजी, रजपूती रो रंग।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४

हाथी टिचकारी से हांकते हैं ?

वनस्थली विद्या-पीठ, राजस्थान का प्रसिद्ध शिक्षा-संस्थान है। २००६ के जयपुर चातुर्मास के बाद आचार्यप्रवर ढूंडा यात्रा पर पधारे। भाईजी महाराज ने दिल्ली चातुर्मास सम्पन्न कर जयपुर में आचार्यवर के दर्शन किये। भाईजी महाराज को सवाई माधोपुर यात्रा में साथ रखा गया। पिछली बार डेढ़ वर्ष पहले भाईजी महाराज ने ढूंढाड़-यात्रा की थी। हर श्रद्धा के क्षेत्र को संभाला था। गांव-गांव के जमींदारों में खूब काम किया था। इस इलाके में कोई पांच सौ से अधिक नयी गुरुधारणाएं करवायी थीं। आज यात्रा के बीच आचार्यप्रवर वनस्थली पधारे।

वनस्थली विद्यापीठ के प्रिंसिपल श्री प्रवीणचंद जैन ने आचार्यप्रवर का हार्दिक स्वागत किया। शांति निकेतन में गुरुदेव का प्रवचन हुआ। दिन-भर स्थानीय शैक्षणिक कार्यक्रमों का अवलोकन चला। दूसरे दिन प्रातः विहार से पूर्व राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री हीरालालजी शास्त्री तथा गृहमंत्री प्रेमनारायणजी माथुर पहुंचे। आधा घंटा आचार्यप्रवर से वार्तालाप हुआ। विहार में लगभग आधा-मील दोनों मंत्री साथ-साथ पैदल चले। जब वे लौट रहे थे, श्री भाईजी महाराज ने फरमाया—

'शास्त्रीजी ! अबकी बार आपने यह क्या किया ? आचार्यश्री जयपुर पधारे और आप बिना सोचे विरोधी-स्वर में मिल गये।'

शास्त्रीजी जोबनेरी बोली मैं बोले—अजी ! बाबाजी ! आपने कांई केहवां म्हे तो जोबनेर की रोही में ऊंठ चराया छा ऊंठ। (महाराज ! आपसे क्या कहूं हमने तो जोबनरे के जंगलों में ऊंट चराये हैं) और भाईजी महाराज ने तपाक से कहा—शास्त्रीजी !

'हाथी के हांक्यां करै, ऊंटां ज्यूं टिचकार।
(आ) जाणै एक गिंवार भी (थें) कियां चलाओ सरकार ?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह तो एक गांवड़िये का गिवार भी जानता है कि क्या हाथी को ऊंटों की तरह टिचकारी मारकर हांका करते हैं ? आप सरकार ऐसे ही चलाते हैं ?

हम सब लोग देखते ही रह गये। शास्त्रीजी ठहाका मारकर हंसे और बोले—जो हुआ सो हुआ महाराज ! हमने आचार्यश्री जी से माफी मांग ली है। शास्त्रीजी क्षण भर रुके और कहने लगे—भाईजी महाराज ! चातुर्मास में आप जैसे फक्कड़, साफ कहने वाले संत यदि जयपुर में होते तो कितना अच्छा रहता।

छूटते ही भाईजी महाराज बोले—नहीं था, यही अच्छा रहा, शास्त्रीजी ! वरना आपसे तो मेरा जरूर-जरूर झगड़ा होता ही होता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५

एक अबूझ पहेली

वि० सं० २००७ भिवानी चातुर्मास में एक आनुप्रासंगिक संस्मरण सुनाते हुए श्री भाईजी महाराज ने फरमाया, वह—पहला-पहला दिन था, जिस दिन श्रद्धेय पूज्यपाद आचार्य कालूगणीजी ने मुनि तुलसी को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया। नया-नया माहौल, नया परिवेश, सारा संघ प्रमुदित था। मेरी खुशी का क्या ठिकाना? सैकड़ों-सैकड़ों गृहस्थ और साधु-सतियों ने मुझे बधाइयां दीं। मन करता था मैं भी इन्हें कुछ दूं, पर मेरे पास देने को था क्या? मेरे पैर धरती पर नहीं टिक रहे थे। एक अलौकिक आनंद की अनुभूति में मैं जी रहा था। कल के मुनि तुलसी आज युवाचार्य श्री तुलसी हो गये थे। उनके सारे वस्त्र-पात्र बदल दिये गये। पुराने उपकरणों को कितने ही संतों ने स्मृति स्वरूप मांग-मांगकर बड़े चाव से लिया। जब मुनि तुलसी का सिरहाना (तकिया) खोला गया, उसमें एक कागज की स्लिप (परची) निकली। उस पर लिखा था—'मां वदना।' मैं नहीं जानता था—यह क्या है? क्यों है? कई सन्तों ने मुझसे उसका रहस्य पूछा, पर मैं बताऊं भी तो क्या? मुझे सबसे बड़ी हैरानी तो यह थी—'मुनि तुलसी के पास और मेरी जानकारी के बिना यह चिट।' अब तक मैं उनका संरक्षक रहा। मुझे पूछे बिना, न उन्होंने कुछ खाया-पिया, न पहना-ओढ़ा, न कभी आज तक कहीं बैठे-सोये, न किसी से कुछ लिया-दिया, अनुशासन का पर्याय-मेरा छोटा भाई, आंख की पलक के इशारे चलने वाला, उसके पास यह चिट और उसमें 'मां-वदना का नाम।' जान तो लूं मेरे से प्रच्छन्न यह कब से? पर अब वे संघ-पति के दायित्व पर थे। मेरा संरक्षणत्व दबकर रह गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मैं उस रहस्यमयी चिट के बारे में आज तक नहीं पूछ सका और शायद जिन्दगी भर न पूछ सकूं। कभी-कभी मन करता है पूछूं तो सही—

'छानै सिरहाणै छिपा, चिट कद स्यूं क्यूं मेली ?
तुलसी ! 'चम्पक' चिमठियो, बणी अबूझ पहेली ।।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६

इसे कहते हैं भ्रातृत्व

श्री भाईजी महाराज ने अपनी आपबीती बताते हुए कहा—कल तक सांयकालीन प्रतिक्रमण के पश्चात् मुनि तुलसी मुझे नित्य वन्दना करने आते। हम भाई-भाई दो-चार मिनट बात भी करते। वे इतना संकोच रखते, कभी आंख उठाकर बोले भी हों, याद नहीं आता। मेरे जैसा कठोर अनुशासन करने वाला नहीं मिलेगा, तो तुलसी-मुनि जैसा विनीत आज्ञापालक भी इरला-बिरला ही होगा।

आज वे युवाचार्य थे। रंगभवन (गंगापुर) के हाल की भीतरी कोठरी में युवाचार्यश्री का आसन लगा। सन्तों की भीड़ उनको घेरे हुए थी। मैं दूर खड़ा इंतजार कर रहा था, अपने प्रिय अनुज, नयनाभिराम युवाचार्यश्री से मिलने की। भीड़ छंटी, मैं पहुंचा। युवाचार्य तुलसी के सामने समस्या थी, अब वे क्या करें। इतने दिन मुझे देखते ही वे आसन छोड़ उठ खड़े होते थे। जितना सम्मान वे मुनिकाल में मुझे दिया करते, क्या देगा कोई अनुज अग्रज को? लाज-लिहाज, संकोच-शर्म, आदर सम्मान और कांण-कायदा उनकी विवेक-बुद्धि का नमूना था। काम-काज उनसे मैं कम ही करवाता। उनका पूरा समय ज्ञानार्जन के लिए था। आज सारी स्थितियां बदल गयी थीं। उनकी अवसरज्ञता और तत्काल समस्या का हल निकाल लेने की क्षमता उस समय देखी, तत्काल युवाचार्य तुलसी थोड़े से पीछे की ओर खिसके और अपना आधा आसन खाली कर, मुझे संकेत करते हुए बोले—पधारो, चम्पालालजी स्वामी! बिराजो। मैं अभिभूत किन्तु किंकर्तव्यविमूढ था। निर्णय नहीं ले सका, अब मुझे क्या करना चाहिए। मैंने घुटने टेक, पंचाग मुद्रा में गुणानुवाद किये। नवीन युवाचार्यश्री ने वंदना के साथ मेरे पैर छूने का यत्न करते हुए पुनः बैठने का आग्रह किया। पर मैं—

विनय मान-सम्मान में, मैं स्नेहार्द्र अखूट।
के ठा भाई! बैठणो' क नहीं, कह चल्यो ऊठ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७

पहला-पहला कविसम्मेलन

२००८ कार्तिक शुक्ला छठ को दिल्ली सब्जीमंडी घंटा-घर, चंद्रावल रोड में कठोतिया मोहनलालजी की कोठी पर एक कवि-सम्मेलन रखा गया। आचार्यप्रवर परिषद में विराजे थे। राजधानी के आमंत्रित कविजन कठोतियाजी के कमरे में आ-आकर बैठते गये। वे झिझक रहे थे, कहां आ गये। समय हो गया पर कोई भी कवि बाहर मंच पर नहीं आया। कहने पर भी कवि लोग बाहर आते टाल-मटोल कर रहे थे। भाईजी महाराज के निवेदन पर आचार्यप्रवर ने प्राग् वक्तव्य फरमाया। संतों की कविताएं प्रारम्भ हुईं। जनकवि फिर भी बाहर नहीं पहुंचे। संयोजक देवेन्द्रजी करणावट भी हैरान थे। भाईजी महाराज से नहीं रहा गया। वे भीतर पधारे और कवियों से बोले—

'बुरा न मानें, पूछ रहा हूं, झिझक है कि, कुछ उलझन ?
कवि बैठे कमरे के भीतर, (और) बाहर कवि-सम्मेलन ?'

क्या यह भी कोई तरीका है ? कवि भी डरता है, वेश-भूषा देखकर ? ये संत साहित्यकार हैं, कवि हैं। सुना है कवि-बिरादरी अभेद होती है, फिर यह भेद कैसा ? एक फक्कड़ संत की ललकार पर कवियों की हिचक टूटी। शरमाते-सकुचाते कुछेक कवि उठे, बाहर आये। संत-काव्य का रस भी कुछ भिन्न था। धीरे-धीरे एक-एक कर कवि परिषद् में आते गये। उस दिन लगभग बीस दिल्ली के मंजे हुए कवियों ने तेरापंथ साहित्य सृजन को परखा। कुछ कवि बोले, कुछ न बोले। अब जमा कविसम्मेलन। मन का संशय हटा। कवि लोग खुले। वाह ! वाह ! की कवि-दाद में तेरापंथ संत कवियों की कविताओं ने एक छाप जमायी। तेरापंथ संघ का यह शायद सबसे पहला कविसम्मेलन था। भाई देवेन्द्रजी ने भाईजी महाराज की युक्ति का लोहा माना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८

मुझसे नहीं, परिषद् से पूछो

२००८ पौष शुक्ला नवमी सरसा, पंजाब की बात है। संत-साहित्य परिषद् की सांयकालीन गोष्ठी में श्री भाईजी महाराज को वक्तव्य देने के लिए कुछ संतों ने मिलकर निवेदन किया। मुनिश्री ने यह कहते हुए टाल दिया—भाई! मैं क्या बोलूंगा। सुनो किसी साहित्यकार को। सन्तों ने आचार्यप्रवर से स्वीकृति ली और विज्ञप्ति प्रकाशित कर दी—'आज सांयकाल साढ़े सात बजे विचार गोष्ठी में श्रद्धेय भाईजी महाराज का शिक्षा और विनय पर विशेष उल्लेखनीय वक्तव्य होगा।'

साहित्य परिषद् के संयोजक मुनि सुखलालजी ने विचार-गोष्ठी के विषय को छूते हुए भाईजी महाराज का परिचय देकर भाषण प्रारंभ करने की प्रार्थना की।

भाईजी महाराज ने मातृ-भाषा राजस्थानी में अपने पैंतालीस मिनट के भाषण में शिक्षा और विनय का बेजोड़ संबंध बताते हुए कुछ ऐतिहासिक उदाहरणों से विनय-अविनय की लाभ-हानि बताकर आज की शिक्षा में अविनय के प्रवेश की ओर संकेत किया तथा समय पर आचार्य के नाराज होने पर उन्हें रिझाने की कला, बड़ों के प्रति आदर और छोटों के प्रति वात्सल्य पर जोर दिया।

प्रश्नोत्तर काल में अनेकों प्रश्न आये—क्या विनय चापलूसी नहीं है? स्वार्थ-युक्त विनय से क्या अविनय अच्छा नहीं? एक मुंह पर कह देता है और एक जी-हजूरी करता है, दोनों में कौन-सा ठीक है? आज अविनीत कहे जाने वाले विद्यार्थी भी उत्तीर्ण हो जाते हैं, तो फिर विनय से लाभ? ऐसा विनय क्या काम का जहां पात्री ही फूट जाए? एक बचपन में कसूर कर लेता है तो क्या बड़े को भी आंखें गरम करके बात करनी चाहिए? विनय आखिर कहते किसे हैं? क्या प्रतिदान में विनय मांगने वाला विद्या गुरु, अपने आपमें विनीत है? यह विनय-संहिता छोटों के लिए ही है या बड़ों के लिए भी? शिक्षा शिक्षा है, उसे विनय-अविनय के साथ क्यों जोड़ा जाता है? क्रमशः भाईजी महाराज सबका उत्तर संक्षिप्त किन्तु गाम्भीर्ययुक्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फरमाते रहे। अंतिम एक प्रश्न व्यक्तिगत आक्षेप करने वाला भी आया। प्रश्नकर्ता ने पूछा—क्या आपने भी कभी किसी को विनीत कहा है ?

भाईजी महाराज ने विनोद में बात टालते हुए कहा—मेरे कहने से ही यदि कोई विनीत बन जाता हो, तो लो मैं तुम्हें 'परम-विनीत' का तुकमा दे दूं, पर मेरे कहने से कोई विनीत या अविनीत नहीं होता। वह तो होता है अपने व्यवहारों से, आचरणों से, आत्म-संवेदनाओं से। विनीत अविनीत की कसौटी तो है जनता। तुम कितने विनीत हो ,यह पूछो इस मजलिस से, अभी पता चल जाएगा है।

'म्हारै कहणै स्यूं हुवै, कद विनीत अविनीत।
(इं) मजलिस नै पूछो जरा, तुम कितनेक विनीत॥'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१

इच्छा तो हमारी भी होती है

नोहर संतोष-निवास में पिछली रात्रि को विहार की मंजिलों पर चिन्तन चल रहा था।

आचार्यप्रवर ने बीच में ही फरमाया—अगर सरदारशहर संतों को पहले भेजें तो कितनी मंजिलों में पहुंच सकते हैं ?

भाईजी महाराज ने अर्ज की—संत तो आपकी कृपा से पांच ही मंजिल में पहुंच जायेंगे।

आचार्यप्रवर ने फरमाया—तो आप ही चले जाओ न, मंत्रि मुनि आपको बुला रहे हैं।

भाईजी महाराज ने कहा—तहत ! यह तो मंत्री मुनि की कृपा है। जैसी आपकी मरजी हो मैं हाजिर हूं।

आचार्यश्री ने निर्णय की भाषा में फरमाया—हीरालाल को छोड़कर आप सभी संत तैयार हो जाओ, आज ही विहार करना है। वयोवृद्ध मुनि चौथमलजी स्वामी खड़े होकर निवेदन करने लगे—हुजूर ! एक अर्ज है। भाईजी महाराज के साथ मुझे भी कृपा करायें, आज तक कभी मोटे पुरुषों के साथ जाने का काम ही नहीं पड़ा, बड़ी इच्छा होती है, कभी साथ रहने का अवसर आये, आप मेहरबानी फरमायें।

आचार्यवर ने विनोद में मुस्कान बिखेरते हुए फरमाया—अजी ! आपकी ही क्या इच्छा होती है। इच्छा तो कभी-कभी हमारी भी होती है चम्पालालजी स्वामी के मधुर सहवास का आनन्द लेने को। पर क्या करें…।

पिघलते-पिघलते से श्री भाईजी महाराज ने निवेदन किया—महाराज !

'कृपा गुरांरी है जठै, वठै मधुर मधुमास।
संघ गुणी, 'चम्पक' रिणी, कृपा-कृपा-सहवास ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०

मेरे पास कोई उत्तर नहीं था

नोहर २००८ माघ कृष्णा ४। भाईजी महाराज आहार-मंडल में विराजे ही थे। आहार प्रारम्भ किया कि एक सन्त ने आकर कहा—आचार्य प्रवर याद फरमा रहे हैं। मुनिश्री ने भोजन के बीच हाथ धोये और आचार्यश्री की सेवा में पधार गये। कुछ आवश्यक परामर्श के बाद ज्यों ही वापस पधार रहे थे, मार्ग में एक सन्त ने निवेदन किया—भाईजी महाराज ! औजार तैयार हैं, मेरा दांत···।

भाईजी महाराज ने 'हां भाई !' कहा और दांत निकालने पधार गये। पांच सात दिनों से उन्हें दांत की बड़ी तकलीफ थी। भाईजी महाराज का हाथ बहुत साफ और अनुभव डॉक्टरों जैसे थे। सेवा के ऐसे अवसरों पर उनकी आत्मा बहुत प्रसन्न होती। मुझे तो वहां पहुंचना ही था। दांत निकाल, हाथ धो, अब पधारे भोजन मंडल पर। मैंने कहा—परोसा भोजन सब ठंडा हो गया। भाईजी महाराज ने जरा आंखें गर्म की और फरमाया—क्या कहा ? है तुम्हारे में अकल ? पहले गुरुदेव की आज्ञा है कि भोजन ? पगले ! आराम बीमार की सेवा में जो रस है वह खाने में नहीं है। खाना तो खाना है शरीर को निभाने। ठंडा गरम कुछ नहीं—'उतरा घाटी हुवा माटी'। भीतर की जठराग्नि गरम चाहिए। बता···।

'अकलदार ! पहली बता, आज्ञा है कि आहार ?
खाना प्रथम कि सेवा प्रथम, सागर ! जरा विचार ।।

अब मेरे पास तहत के सिवाय कोई उत्तर नहीं था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१

कविता कब से ?

२००८ माघ शुक्ला अष्टमी को सरदारशहर की विशाल जनसभा में 'धर्म और समाज' विषय पर वक्ताओं के भाषण हुए। मर्यादा-महोत्सव की वह भारी भीड़। दूर-दूर से आने वाले हजारों-हजारों यात्री। आचार्यप्रवर के उपसंहारात्मक प्रवचन के तुरंत बाद भाईजी महाराज खड़े हुए और बोले एक बात मैं भी कह दूं। इन मंजे हुए विचारकों के चिन्तन के बाद मेरा बोलना है तो अटपटा-सा, पर जहां संघ मिलता है, विचार करता है, वहां हर सदस्य को अधिकार होता है अपनी बात कहने का। मैं ज्यादा कुछ नहीं जानता। मैंने तो इतना ही समझा है—धर्म के बिना समाज केवल भीड़ है और समाज के बिना धर्म केवल पुलिन्दा है। समाज शरीर है, तो धर्म प्राण है। प्राण के बिना शरीर सड़ जाता है और शरीर के बिना प्राण टिकते नहीं। जब धर्म और समाज दोनों मिलते हैं तब बनता है धर्म-समाज। धर्म-समाज में क्या होता है, क्या होना है, यह चिन्तन का विषय है आचार्यों का, धर्म-समाज के नेताओं का। मेरी तो सलाह है सभी वक्ताओं और श्रोताओं से, उलझो मत—

'अणहोणी होसी नहीं, होसी जो होणी,
मनमानी ताणो मती, सुगुरु दृष्टि जोणी।।
धर्म-विहीन समाज के, ठप समाज बिन धर्म
स्वर-व्यंजन-सी एकता, 'चम्पक' समझ्यो मर्म।।

तत्काल छन्दों में बांधे हुए ये दो तुक्के तीर का-सा काम कर गए। आचार्य प्रवर ने फरमाया—सारे सिद्धान्तों का सार बता दिया चम्पालालजी स्वामी ने। अच्छा, आशु कविता भी करते हैं आप ? यह कब से ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२

मटकी पटकी

वि० सं० २०१० भाद्रव कृष्णा अमावस्या, जोधपुर की बात है। मुनि हीरालालजी (बीदासर) आचार्यश्री और नवदीक्षित बाल मुनियों के लिए पानी की व्यवस्था करते थे। उन्होंने सायंकाल पानी छानकर, खाली मटकी ऊपर रखने के लिए बाल मुनि मणिलालजी को दी। वे सिंधी भवन की सीढ़ियां चढ़ रहे थे। न जाने क्यों अचानक एक धमाका हुआ। हमने देखा मणिलाल जी जीने में बेहोश पड़े हैं। मटकी की ठीकरियां बिखर गयीं। हम दो-तीन संतों ने मिलकर उन्हें ऊपर पहुंचाया।

दिन थोड़ा रह गया था। बाल मुनि बेहोश थे। श्री भाईजी महाराज उन्हें सचेत करने में व्यस्त थे। अनेक उपाय किए। आवाजें दीं। नांक बंद किया। पानी छिड़का। पर सब कुछ नाकाम। बिराजे-बिराजे भाईजी महाराज को न जाने क्या जंची, मणी-मुनि के दोनों कान पकड़कर ऊपर की ओर खींचे कि उन्होंने आंख खोली। चेतना आते ही मुनि मणिलाल जी ने अधहोशी में कहा—मटकी···।

श्री भाईजी महाराज मन ही मन मुस्कराए और बोले—भोले !—

> 'बा मटकी पटकी बठै, अटकी अठै अजेस।
> 'चम्पक' चटकी पण दकी ! भटकी मती मुनेश !'

भाईजी महाराज मुनि मणिलाल जी को परोक्ष में मुनेश ही फरमाया करते। यह प्यार का नाम था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३

अन्दाजा सही उतरा

स्वभावगत भाईजी महाराज के कुछ अंदाजे अलग ही थे। आदमी की पहचान में उन्होंने शायद ही कभी गलती खायी हो। अकसर चाल के आधार पर वे व्यक्ति की प्रकृति पहचाना करते थे। इस अर्थ में उनके अलग ही अनुभव थे। इसलिए कई लोगों से तो उनकी कभी पटी ही नहीं। वैसे सभी तरह के लोग उनके इर्द-गिर्द आते बैठते। किससे कितनी बात करना, यह भी उनका अपना एक ढंग था। वे मेल-जोल सभी से रखते थे। गांव के उन नामी-नामी नम्बरी आदमियों से उनका अपनत्व घरेलू-जैसा होता। वे फरमाया करते—'समाज में सब शक्तियों की आवश्यकता है। जहां नागाई काम आती है, वहां ये ही काम के हैं। शरीफी वहां क्या करेगी? अनादर किसी का भी मत करो। दुश्मन को भी आदर से जीतो। रबाब से भी लिहाज ज्यादा काम करता है।' ये कुछ आदर्श-सूत्र थे भाईजी महाराज की लोकप्रियता के।

वि० सं० २०१० सोजत रोड की बात है। आचार्यप्रवर की भोजन-व्यवस्था सम्पन्न कर भाईजी महाराज उठने लगे। आचार्यश्री ने फरमाया—चम्पालाल जी स्वामी! मोहनलाल (लाडनूं) को थली भेजने का सोचा है।

भाईजी महाराज हाथ जोड़कर बोले—बड़ी कृपा की। साथ···?

आचार्यश्री—साथ तो भैंरुदान और चन्द्रकांत।

भाईजी महाराज क्षण भर रुककर बोले—होगा तो वही जो आपकी मरजी होगी, पर मेरे नहीं जंची।

आचार्यश्री—क्यों? मोहनलाल ठीक है। सयाना भी है। वह कहता है इन्हें साथ भेज दिया जाए तो मेरा मन लग जाएगा। अतः यह सोचा गया है। आप तो वहमी हो जी। विश्वास भी करना चाहिए आदमी का।

भाईजी महाराज कुछ क्षण चिन्तन की मुद्रा में रहे और जब आचार्यश्री ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहा, बोलो, तो मौन तोड़ते हुए बोले—

'आछो सोच्यो आप पण, म्हारै जची न हाल।
(अै) तीनूं टाबर एक-सा, 'चम्पक' लागै चाल ॥

इतना स्पष्ट कोई बिरला ही कह सकेगा। यह कटु सत्य आचार्यश्री को भी अप्रिय लगा। बात समाप्त हुई। ससंघ गुरुदेव बम्बई पधारे।

चातुर्मास सानन्द पूरा हुआ। चर्च गेट आचार्यश्री बिराज रहे थे। रतनगढ़ से समाचार मिला। आचार्यश्री स्वयं स्तब्ध रह गये। अन्तर गोष्ठी बुलायी गयी। रहस्योद्घाटन किया। आचार्यश्री का आज जैसा खिन्न चेहरा हमने पहले नहीं देखा। एक अन्तर आघात के साथ निःश्वास फेंकते हुए आचार्यश्री ने फरमाया—'अब बताओ! युवापीढ़ी का विश्वास कैसे हो? रतनगढ़ से मोहनलाल, भैंरुदान और चन्द्रकांत तीनों रात को लापता हो गये हैं। चम्पालालजी स्वामी की पहचान ठीक निकली। मेरे साथ ऐसा विश्वासघात पहली बार हुआ है।'

हमने सुना—भाईजी महाराज ने निवेदन किया। आप इतना क्या विचार करवाते हैं—उनकी गति, उनका कर्म। करेगा सो भरेगा। महाराज!

'कमी न राखी आपतो, कृपा करायी धाप।
'चम्पक' आगे आगलां रा अपणा पुन-पाप' ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४

गजब-जैसा क्या है

विक्रम सं० २०१२ का मर्यादा महोत्सव भीलवाड़ा (मेवाड़) में हुआ। वह तेरापंथ धर्म-संघ की परीक्षा का समय था। तेरापंथ का अनुशासन कसौटी पर कसा जा रहा था। कौन संघ में गड़ा हुआ है और कौन डिग्गू-पिच्चूं, लोग परख रहे थे। नयी और पुरानी विचारधारा की टक्कर में कई स्फुलिंग उछले। एक अन्तरद्वंद्व सभी को झकझोर गया। जिधर देखो मन को क्लान्त करने वाले संवाद उभार ले-लेकर आते। गृह-संघर्ष की-सी स्थिति। संघ में विघटन करने लगी। मानसिक दुराव, असंतोष और पकड़ ने दो पाले बना दिए। एक पांणा दूसरे पांणे को तोड़ने के चक्कर चला रहा था। कुछ बीच-बचाव वाले इस कार्य में दलाल थे। लोग अनुमान लगा रहे थे, अबकी बार तेरापंथ आधा-आधा बंट जाएगा। अफवाहों का जोर था। कभी हल्ला आता साधु गए, तो कभी आता पांच तैयार हैं। कोई कहता आचार्यश्री ने चार सन्तों को निकाल दिया है, तो कोई कहता, दस मुनियों ने मिलकर आचार्यजी को करारी चुनौती दे दी। कब क्या हो जाए, सभी संदिग्ध थे। कुछ शासन-भक्त श्रावक तो यहां तक कहने लगे—इन मोड़ों का कोई विश्वास नहीं, लिया झोलका और यै गए। कैसा जमाना आया है?

भीलवाड़ा मर्यादा-पांडाल के सामने ही धर्मशाला थी, जहां आचार्यप्रवर का प्रवास था। धर्मशाला के बरामदे में व्याख्यान के तुरन्त बाद कुछ विपक्षी समर्थक भाईजी महाराज से बातें कर रहे थे। खड़े-खड़े चर्चा छिड़ गयी। किसी ने कहा—शिष्टता तो दोनों ओर से रखने पर ही रहेगी। एक भाई ने कहा तो टालोकर शब्द ऐसा क्या घटिया है? इसी बीच भाई जीवणमल जी सुराणा (चूरू) जोश खा गए। उन्होंने कहा—कौन कहता है, वे साधु टालोकर हैं? असाधुत्व का उन्होंने कौन-सा काम किया? वे टालोकर कैसे हुए?

भाईजी महाराज ने फरमाया—कौन क्या कहता है, मैं कहता हूं। जीवणमल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जी बोले, आपको टालोकर कहना नहीं कल्पता। कैसे कहते हैं आप? उन्होंने तेरापंथ की कोई मर्यादा भंग नहीं की। भाईजी महाराज ने कहा—स्वामीजी ने फरमाया है जो आचार्य की आज्ञा का उल्लंघन करे, वह टालोकर। बोलो, वे किस की आज्ञा में हैं ?

भाईजी महाराज का कहना हुआ—'स्वामीजी फरमाते हैं' कि इतने में एक मुनि आये (मैं उनका नाम मौजूदगी में लिखना नहीं चाहता)। साधुजी अपना आपा खो बैठे। बड़ी उत्तेजनापूर्वक बोले—चुप, चुप, चुप, आपको बोलने का फहम ही नहीं है? कैसे बोल रहे हैं बिना···।

भाईजी महाराज ने उन्हें बीच में ही टोकते हुए, बड़े शांत भाव से कहा—देखो! तुम अभी मत बोलो। थोड़े ठंडे पड़ जाओ। गरमी में गरमी बढ़ती है। जाओ, जरा सुस्ता लो, फिर हम बात करेंगे।

सुनने वाले सोच रहे थे, आज इन मुनिजी ने अपने हाथों अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मार ली है। अब तो काम कठिन है। भाईजी महाराज आचार्यश्री को कहेंगे। आचार्यश्री इसे बर्दास्त नहीं कर सकते, क्या जाने क्या होगा ?

उनका भी चेहरा उतर गया। कह तो गये, उस समय आवेश था, ज्वार उतरा पश्चात्ताप भी हुआ। डर भी था। अहं भी था। सन्तों ने उन्हें भाईजी महाराज के पास जाकर माफी मांग लेने को कहा। पर उनका साहस नहीं पड़ा। वे आचार्यश्री के पास जा सकते थे, पर भाईजी महाराज के पास आना टेढ़ी खीर थी। वे इंतजार में थे। आचार्यश्री के दरबार में पेशी पड़े और वहीं मामला सलटे। सायं प्रतिक्रमण के पश्चात् एक सन्त भाईजी महाराज के पास आये और बोले—यह तो सरासर उद्दण्डता है। कोई भी संघ का साधु, किसी विशिष्ट सम्मान्य मुनि की यों अवहेलना करे, अक्षम्य अपराध है, संघीय शालीनता के विरुद्ध है। आपको यह घटना आचार्यश्री से निवेदन करनी चाहिए। आपकी मरजी हो तो मैं पहुंचा दूं।

भाईजी महाराज ने फरमाया—तुम्हारे कहे बिना ही मैं तो स्वयं ताती का असवार हूं। पर इस मौके पर गम खाने में मजा है। उसका क्या बिगड़ेगा? उसमें यदि इतना ही विवेक होता तो वह बोलता ही नहीं। मैं चाहूं तो अच्छी शिक्षा दे सकता हूं, पर उसने निर्विवेकता की, क्या मैं भी उसी के बराबर हो जाऊं? फिर क्या फर्क रहेगा उसमें और मेरे में। आचार्यश्री को तो और भी बहुत संक्लेश है। झंझट में एक और झंझट उनके गले डालूं? मेरा क्या बिगड़ गया? उसने कह दिया—'बे फहम' कह लेने दो। मैंने तो निर्णय लिया है, न तो आचार्यश्री तक जाऊंगा और अगर कहीं से आचार्यश्री तक बात गयी भी, तो मैं सारा दोष अपने पर ले लूंगा। आचार्यश्री को इस मौके चिंता-मुक्त रखना हमारा धर्म है। भाई! ये छोटे-छोटे बोलचाल के झगड़े उन तक मत पहुंचाओ।

रात को जीवणमलजी सुराणा आये। उन्होंने बड़ी नम्रतापूर्वक खमतखामणा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करते हुए कहा—भाईजी महाराज ! आज मेरे कारण आपकी असाता हुई, आप बड़े हैं, बड़े ही बड़ी विचारते हैं। उनकी भयंकर भूल थी। ऐसे शब्द-व्यवहार तो हम गृहस्थ भी नहीं करते, पर आप महान् हैं। आपने जो गम खाई, किसी को आशा नहीं थी। बढ़ने को तो काम बढ़ा ही पड़ा था। महाराज ! इसी का नाम बड़प्पन है। मेरे जैसा व्यक्ति आपके प्रति इसीलिए श्रद्धानत है। मैं जैसा हूं आप जानते हैं। आपकी सरलता से तो मैं परिचित था, पर समय पर आप गम भी खा सकते हैं, यह आज देखा। यों जहर का घूंट निगल जाना आसान बात नहीं है, भाईजी महाराज ! आपने तो गजब कर दिया, गजब।

भाईजी महाराज ने गंभीर होकर कहा—जीवण ! तुमने इसे जरूरत से अधिक आंका है, ऐसी गजब जैसी कुछ भी बात नहीं है। विरोधी तो इससे भी कटु और अभद्र व्यवहार कर लेता है। क्या हम उससे लड़ते हैं ?

उस दिन के बाद जब भी जीवनमल जी सुराणा (चूरू वाले) मिलते 'गजब' कहकर घटना की याद दिलाते और साथ ही साथ यह दोहा भी सुनाते—

'करे संघ-हित करणियां, प्राणार्पण प्रख्यात !
गम खालेणे में जिवण ! गजब जिसी के बात ?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५

कविता में दग्धाक्षर

आचार्यश्री तुलसी ने वि० सं० २०१२ का चातुर्मास उज्जैन में किया। वहां कार्तिक पूर्णिमा को मैंने एक कविता लिखी। कविता मन लगती बनी। मुझे बहुत पसन्द आयी। कविता को दूसरी-तीसरी बार पढ़कर मैं मन-ही-मन झूम उठा। शायद मेरी अब तक की कविताओं में वह सबसे पहली स्टेज की कविता थी। अनुप्रासों की झड़ी देखते ही बनती थी। अखरोट सहज आये थे। शब्दों की दृष्टि से, भावों की दृष्टि से और लय-छन्द-बन्ध की दृष्टि से भी उसे मेरी सर्वोत्तम कविता कहूं, तो भी अत्युक्ति नहीं होगी।

मैंने भाई सोहनलाल सेठिया (सरदारशहर) के सामने वह अपनी कृति रखी। सोहन की काव्य-छटा निराली थी। वह स्वयं प्रांजल कवि था और हिन्दी का आशु कवि भी। तत्काल दिये गये विषय पर वह मार्मिक भाषा में भावपूर्ण छन्द बोला करता। मेरी और उसकी पटड़ी भी खूब जमती थी। मैंने ज्योंही अपनी कविता कवि सोहन के सामने रखी, उसने एक बार खिलखिलाकर दाद दी। काश आज वह कविता होती।

मुझे उसी दिन सायंकाल बुखार हो गया। तबियत धीरे-धीरे बीगड़ती गयी ज्वर कभी कम, कभी अधिक, बढ़ता-घटता गया। हम प्रवासी एक गांव से दूसरे गांव पर्यटन करते हुए बड़नगर पहुंचे। मुझे कमजोरी का अहसास होने लगा बड़नगर से हमारा पड़ाव जावरा हुआ। जावरा पहुंचते-पहुंचते मुझे बुखार १०६ डिग्री पहुंच गया। बेहोशी आ गयी। घण्टों उपचार के बाद चेतना लौटी।

भाईजी महाराज के सामने बड़ी समस्या थी। एक ओर बुखार, दूसरी ओर विहार। मुनिश्री मुझे पीछे छोड़ना भी नहीं चाहते थे और बुखार में यों साथ ले जाना भी उचित नहीं था। दुहरे विचार ले, भाईजी महाराज आचार्यश्री के पास पहुंचे। विचार-विमर्श हुआ। मुझे जावरा ही छोड़ देने का निर्णय आया। भाईजी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाराज का जी बहुत टूटा। वे नहीं चाहते थे, मुझे अकेले पीछे छोड़ना और न ही चाहते थे आचार्यप्रवर से स्वयं पीछे रहना। मेरे प्रति उनका अगाध वात्सल्य था। विवश सेवाभावी मुनिश्री मेरे पास पधारे, विराजे। मेरी नब्ज देखी और पूछा, 'अब कैसे हो ?'

मैं कुछ बोलता इससे पहले ही मुनिश्री ने भूमिका बांधनी प्रारम्भ कर दी। मैं समझ गया, यह सब मुझे पीछे छोड़ने के उपक्रम हैं। मैं भी स्वयं अपने मन में निर्णय किये बैठा था—अब विहार करने की परिस्थिति नहीं है। मेरा अपना मनोबल टूट चुका था। शरीर का सामर्थ्य जवाब दे रहा था। मैंने भाईजी महाराज से अर्ज की—'आप तो सुखे-सुखे गुरुदेव की सेवा में पधारो। मैं यहां दो-पांच दिन रुककर, ठीक हो जाने पर आ जाऊंगा।'

भाईजी महाराज ने मेरे सिर पर हाथ फेरते हुए कहा—'भाई दो-पांच दिन से कुछ नहीं होगा। साफ-साफ बात है। डॉक्टर, वैद्यजी और जतीजी ने आंत्र-ज्वर बताया है। कम-से-कम २१ दिन तो टाइफायड लिया ही करता है। तेरे मोतीझरा उल्टा है। दाने पेट पर नजर आ रहे हैं। उलटा भाव सदा समय लिया करता है। तुम कोई विचार मत करना। तुम्हारे पास रहने के लिए सोहनलालजी (राजगढ़) और राजमलजी (आत्मा) को तो गुरुदेव ने आदेश फरमा दिया है। मेरी इच्छा है वसन्त या मणिलाल में से किसी एक को तुम्हारे पास और रख दूं। वे दोनों ही रहना चाहते हैं। जबसे सुना है दोनों ही आग्रह कर रहे हैं। वह कहता है, मुझे रख दो और वह कहता है नहीं, मैं रहूंगा। तुम्हें असुविधा न हो तो तुम मुनि मणिलाल को यहां रख लो। वह मन छोटा-छोटा करता है। तुम्हारे भी ठीक रहेगा।' अशक्ति अधिक थी। मैं कुछ बोलना चाहता था। इतने में भाईजी महाराज ने मुझे रोकते हुए कहा—'तुम बोलो मत। बोलने से जोर पड़ेगा। मैं जानता हूं तुम्हारी भावना। मेरा काम तो अकेले वसन्त से ही चल जाएगा। तुम मेरी फिकर छोड़ो।'

मुझे खूब-खूब आश्वासन दे, जतीजी को दवा-पानी की व्यवस्था सौंप, भाईजी महाराज ने विहार किया। हम चार सन्त जावरा रुके। जावरा जैनों का गढ़ है, पर तेरापंथ का कोई एक बच्चा भी नहीं है। जैनों की बस्ती जो है, लगभग विरोध-प्रधान है। उन दिनों मुनि सुशीलकुमारजी भी वहीं थे। वह भी एक युग था। परस्पर में जहां आंख भी नहीं मिलती थी। हमें रहने के लिए जैनों के यहां कोई स्थान उपलब्ध नहीं हुआ। कई स्थान खाली पड़े थे, पर वे तो कबूतरों के लिए थे। भला वहां एक परदेशी बीमार जैन-मुनि के लिए स्थान कहां था ? वैष्णव धर्मशाला में जहां हम रुके थे, उन पर भी बहुत दवाब आये। स्थान खाली करा लेने को कहा गया। पर उनसे तो हमारा कलकत्ता से सम्बन्ध था। वह धर्मशाला कलकतिया धर्मशाला कहलाती है। हम वहां रुके। रुके क्या, रुकना पड़ा। बड़ा अटपटा लगा, पर करते भी तो क्या ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बुखार में नित्य नये उतार-चढ़ाव आते। मानसिक अस्त-व्यस्तता और परेशानी बढ़ती। सन्त मेरा मन लगाने का यत्न करते। भाईजी महाराज का जी तो था जावरा और शरीर था आचार्यश्री के साथ यात्रा में। बार-बार आश्वासन के शब्द मिलते, पर मन नहीं लगा सो नहीं ही लगा। उद्विग्नता दिन-प्रति-दिन बढ़ती गयी। जैन युवक समरथमलजी आदि—जो सर्वोदयी विचारधारा के थे— घण्टों हमारे पास बैठते। वयोवृद्ध श्रावक जडावचन्दजी पगारिया बार-बार खबर लेते, पूछताछ करते। मुनि मणिलालजी एक तो छोटे थे, दूसरे शरीर-सम्पदा-सम्पन्न, अतः लोगों को उनसे बोलने का चाव रहता। भाई फकीरचन्दजी तो मणि-मुनि के पीछे लट्टू हो गये। गोचरी ले जाते। पानी को जाते तो वे साथ रहते।

एक दिन मैंने जाने की तैयारी कर ली। रात का समय था, अचानक बुखार १०५ से गिरा और ६५ आ गया। होश-हवाश गुम। हाथ-पांव ठण्डे बरफ-से। मुनि मणिलालजी दिलगीर हो गये। सत्तरह वर्ष के बच्चे तो थे ही। उस रात वे शायद मिनट-भर के लिए भी मुझे छोड़कर नहीं हटे। उन्हें वहम था कि मैं छोड़कर गया कि ये गये। रात को दस बजे के बाद वहां कहां डॉक्टर? कहां वैद्य? कौन संभाले? कासीद ख्यालीलाल गया। धर्मशाला के बाहर एक दांतों के डॉक्टर थे, सिन्धी भाई। वे पानी भरने भीतर आया-जाया करते थे। सन्तों ने उनसे परिचय बनाया था। बेचारे सज्जन थे। कभी कदाच दिन में आ जाया करते थे। सूचना मिलते ही वे आए। देखा, काम तो समाप्ति पर था। आखिर डॉक्टर तो थे ही। उन्होंने कहा—'जैन-मुनि रात को कुछ लेते नहीं, अब उपचार करूं भी तो क्या? एक काम करो सन्तो! कम्बल के टुकड़े से इनके हाथ-पैरों में गरमी पैदा करो।' वैसा ही किया। कोई दो घंटे बाद मुझे होश आया। उस रात मणिलालजी ने लगभग जागरण किया। सन्तों ने बहुत समझाया। जब मैं बोलने लायक हुआ, मैंने भी कहा—'मैं अब ठीक हूं, तुम सो जाओ। बात मणिमुनि के गले नहीं उतरी। पूरी रात उन्होंने मेरे बिछौने के पास बैठकर काटी।

मैं मरते-मरते बचा। अठारह दिन रुककर जब चलने-फिरने लायक हुआ, विहार किया। ज्यों-त्यों भीलवाड़ा-माघ-महोत्सव में हम सम्मिलित हो सके। स्वास्थ्य डिग-मिग डिग-मिग करता चला। सन्तों के सहयोग से मैं आचार्यप्रवर के साथ-साथ छापर पहुंचा।

सहसा रात को एक वॉमिट (कै) हुई। बेचैनी की परवाह न कर दूसरे दिन आठ मील 'रणधीसर' पहुंचे। दिन-भर जी घबराता रहा। लौंग-गोली के सहारे काम चलाया। सायंकाल चार-पांच बजे के बीच अचानक बेहोशी आ गयी। सन्तों ने सोचा, नींद आयी होगी। भाईजी महाराज आहार करने पधारे। मुझे आवाज दी। जवाब देता कौन? सन्त सोहनलालजी स्वामी (सरवालों) को भाईजी महाराज ने फरमाया—'जाओजी! उसे उठा लाओ।' 'कुमाणस अवार तो मिस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्यां पड्यो है, रात्यूं मरतो मरसी नी।' सोहन 'सर' आये। मुझे हाथ पकड़कर बिठा दिया। ज्यों ही हाथ छोड़ा कि मैं लुढ़क गया। अब सबको पता चला। सेठ सुमेरमलजी दूगड़ आये। नब्ज देखी। स्थिति नाजुक थी। भाई को भेजकर पता लगाया पर दवा का बक्सा गाड़ी में चढ़ा दिया था। असूजती दवा काम नहीं आती, अब क्या किया जाए। सन्त गये कहीं से सत्य-जीवन और कुछ अर्क लाये। लौंग-सौंठ का अर्क और सत्य-जीवन दुगुनी मात्रा में दिया गया। सूर्यास्त के आसपास मुझे चेत आया। सामने रात। वह जेठ की भयंकर गर्मी। सोहनलालजी स्वामी (चूरू) आदि सन्तों ने रात्रि-जागरण किया। सुबह तक मैं उठने लायक हुआ। काल-रात्रि को पार कर दूसरे दिन विहार हुआ। विहार केवल कहने मात्र का था। मैं दो सन्तों के कन्धों पर अपना पूरा शरीर का वजन डाले, घसीटते पैरों से वह रास्ता तय कर रहा था। बार-बार सत्य-जीवन और अर्क देते गये। आधी होशी-बेहोशी में पड़िहारा ले लिया।

सेठ सुमेरमलजी दूगड़ अपने नुक्शे आजमा रहे थे। सबकी सब दी जाने वाली ओषधियां बेकार। फिर एक उल्टी हुई। मैं बेहोश हो गया। सन्तों ने उठाकर मुझे बिस्तर पर लिटाया। मकरध्वज की मात्रा दी गयी, पर कोई असर नहीं। उपचार करते दिन बीता। रात आयी। अब बदला दौर। सन्निपात प्रारम्भ हुआ। हाथ-पांवों में वांइटे (ऐंठन) शुरू हुए। आचार्यप्रवर दर्शन देने पधारे। छोटे सन्तों को भक्तामर का पाठ सुनाने का आदेश हुआ। कुछ मुनि पाठ सुनाने लगे।

श्रावकों ने अपनी तैयारी प्रारम्भ की। विचार-विमर्श चला। मनोकामना अन्त्येष्टि-क्रिया का खाखा जमाया। सेठजी नाड़ी हाथ में लिये बैठे थे। एक ठबका आया है, अगला देखें कितनी देर बाद आता है, देख रहे थे। बीसों लोगों ने रात जगाई। पर प्रकृति को जो मंजूर होता है, वही होता है। रात बीती। प्रातः हुआ, उपचार फिर चालू हुए। सेठ सुमेरमलजी अनुभवी थे। उन्होंने मकरध्वज की चौगुनी मात्रा एक साथ दिलवाई। मानो बुझते दीपक में तेल उड़ेल दिया हो, ज्योति जल उठी। मुझे लगभग बारह घण्टे बाद होश आया। धीरे-धीरे मैं ठीक होने लगा।

गुरुदेव के साथ-साथ हम रतनगढ़ पहुंचे। वैद्य भगवतीप्रसाद को दिखाया। निदान उनका यथार्थ हुआ करता था। नवोदित वैद्य गोस्वामी धनाधीशजी की दवा प्रारम्भ हुई। न चाहते हुए भी भाईजी महाराज ने मुझे रतनगढ़ रखा। आचार्यप्रवर सरदारशहर पधारे। एक महीने के लम्बे उपचार के बाद चलने-फिरने लायक हुआ।

हम तीनों संत—मैं, वसंत और मणिमुनि, सरदार शहर पहुंचे। वि० सं० २०१३ का चातुर्मास प्रारम्भ होने के दिन से फिर अस्वस्थ हुआ। लगभग तीन महीने मैं परेशान रहा। परिचारक साथी और वैद्य-डॉक्टर प्रयत्न कर-करके थक गये। सेठ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भंवरलालजी दूगड़ ने लगभग सरदारशहर के सभी मान्य वैद्यों से परामर्श किया पर उपचार नहीं बैठा। बिगड़ते-बिगड़ते स्थिति नाजुक दौर पर चली गयी। एक रात मैं फिर पांच घण्टा बेहोश रहा। सभी ने आशा छोड़ दी। उस रात सेठ भंवरलालजी, वैद्य प्रभुदयालजी, पंच नेमीचन्दजी बोरड़ आदि दसों श्रावक, भाईजी महाराज के पास रात भर बैठे रहे। भिन्न-भिन्न चिंतन चले। सबसे खूबी की बात तो यह थी, अभी भाईजी महाराज ने आशा नहीं छोड़ी थी। उनका विश्वास था, यह भी एक झोंका है, निकल जाएगा।

मुझे होश आया। अब उठी पेट में शूल। वह स्थिति भी वही थी। मैं धरती पर टिक नहीं पा रहा था। उछल-उछलकर दर्द हैरान करता रहा। सभी साथी सन्त और दर्शक श्रावक द्रवित थे। भाईजी महाराज—भिक्षु स्वाम, भिक्षु स्वाम का जाप जप रहे थे। आचार्यप्रवर दर्शन देने पधारे। वयोवृद्ध मंत्रीमुनि मगनलालजी स्वामी 'कुरसी' में पधारे। रात बीती, अनुभवी उपचार चले। माजी महाराज, महासतियांजी लाडांजी तथा साध्वियां आयीं, सबने अपने-अपने उपचार बताए।

आशुकवि सोहनलाल सेठिया आया। उसने भाईजी महाराज के कान में कुछ अर्ज की। मुनिश्री ने सन्त वसन्त को आवाज दी और वह कविता जिसे मैंने उज्जैन में बनाया था, निकालकर लाने को कहा। मुनि वसन्त मेरे पास आये और संकेत किया। मैंने आंख खोली। पूछा। कविता कहां है?

मैं झेंप गया। अपनी पूरी शक्ति लगाकर भी मैं बोल नहीं पाया।

भाईजी महाराज ने फरमाया—उसे क्या पूछता है? ले आ उसकी कापियां-डायरियां।

वे कापियां ले गये। सोहन-सेठिया ने ढूंढ़कर वह कविता निकाली। भाईजी महाराज ने पढ़ा—उसकी पहली पंक्ति थी—

'जीने से मैं ऊब गया हूं, मुझे मृत्यु से मिल लेने दो।'

मुनिश्री को झुंझलाहट आयी बिना आगे की पंक्तियां पढ़े एक ही झटके में कविता फाड़ फेंकी।

मैं अभी भी अपने बिछौने पर पड़ा-पड़ा कह रहा था—मेरी कविता मत फाड़िए। मेरे मरने के बाद भी यह कविता मेरा परिचय देगी। मेरा जी बहुत तिलमिलाया। मेरे देखते-देखते कागज के उन टुकड़ों को पानी से गलाकर मुनिश्री ने अपने हाथ से कुट्टा बनाया और गांव बाहर जाकर धोरों में उन्हें गाड़ देने (परठने) का आदेश दे, भाईजी महाराज मेरे पास पधारे। कवि सोहनलाल साथ था। मुनिश्री जी ने आते ही फरमाया—बस, अब रोग कट गया। मुझे क्या पता—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तुमने रोग को तो भीतर बण्डल में बांधकर रख छोड़ा है। पगले ! एक बात कहूं ? सागर भाई ! ऐसी कविता भविष्य में कभी मत बनाना।

कविता कुदरत की कला, सागर ! मिल्यो सुयोग,
(पर) आइन्दा अपशब्द रो, फेर न करी प्रयोग।

और वह कविता फाड़ देने के बाद मैं क्रमशः ठीक होता गया। सरदारशहर चातुर्मास उतरते ही आचार्यप्रवर के साथ दस दिन में २०० मील की पदयात्रा कर दिल्ली-यूनेस्को सम्मेलन में सम्मिलित हो गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६

वे भाईजी महाराज थे

वि० सं० २०१३ का मर्यादा महोत्सव ! तेरापंथ द्विशताब्दी समारोह की योजनाएं बन रही थीं। एक अन्तर गोष्ठी में कलात्मक-पक्ष उजागर करने तेरापंथ-संघ के कलाप्रिय साधु-साध्वियों को बुलाया गया। दो सौ साल के तेरापंथ इतिहास को चित्रांकित करना निश्चित हुआ। मुनि दुलीचंद जी (पचपदरा) और मुझे (श्रमण-सागर) कार्य सौंपा। श्री भाईजी महाराज सहर्ष मुझे कार्य-मुक्त करने को राजी हुए। प्रोत्साहन दिया। मैं २०१४ का चातुर्मास चूरू करने मुनिश्री चम्पालालजी (मीठिया) के साथ गया। हमने रात-दिन एक कर चित्रकार खेमराज रघुनाथ शर्मा (नाथद्वारा) के सहयोग में भिक्षु-चित्रावली बनायी। मंगलचन्दजी सेठिया (चूरू) ने इस कार्य में पूरी दिलचस्पी ली। कुछ कारणों से कार्यविरोध आया। मैं फिर आचार्यप्रवर की बंगाल-यात्रा में साथ चला गया।

हमारा अपना लक्ष्य चालू था। गति भले ही मंद रही हो, पर नयी-नयी कल्पनाएं उठ रही थीं। तेरापंथ संघ का 'कला दर्शन' प्राणवान् बने हमारा ध्येय था। सुजानगढ़ की बात है। मैं शौचार्थ गया। वहां एक विशाल काले सांप की साबत कांचली देखी। मन इहितास के झूले में झूम उठा। मेवाड़ केलवे की अंधेरी ओरी के मंदिर में तत्कालिक मुनि भारीमालजी स्वामी के पैरों में सांप ने आंटे लगाये थे। स्वामीजी ने मंगल-मंत्र सुनाया, सांप ओरी छोड़ चला गया। क्या उस दृश्य को चित्रांकित करते इस सांप की कांचली को भारीमालजी स्वामी के पैरों में सांप के आंटों की जगह उपयोग में लिया जा सकता है? ऐसा हो सके तो एक जीवन्त दृश्य बन जायेगा। इसी परिकल्पना में मैं वह कांचली ले आया। छुपे-छुपे योजना की क्रियान्विति में उस सर्प-केंचुली में मैंने धीरे-धीरे सावधानीपूर्वक सूखा नरम-नरम घास भरा। फण में रुई जचायी। अब वह ठीक मोटे असली सांप की-सी शक्ल में दिखने लगा। मैंने कुतूहल-कलावश उसे एक काष्ठ-पात्र में कुंडली की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुद्रा में जचाया। सांप का फण जरा उठा-उठा-सा रखा और ऊपर एक पात्र उलटा ढंका।

आचार्यप्रवर भोजन-निवृत्त हो टहल रहे थे। दसों संत इर्द-गिर्द पर्युपासना में खड़े थे। मैं वह ढंका पात्र हाथ में लिये पहुंचा। नजदीक गया। श्री ने योंही सोचा होगा, गोचरी में आया हुआ द्रव्य दिखाने आया है। गुरुदेव ने पैर रोके। मैंने एक्टिंग करते हुए पात्र का ढकन हटाया और थोड़ा-सा हाथ हिलाया। हाथ के कंपन से सांप हिलता-सा प्रतीत हुआ, सचमुच जैसे असली सांप हो। श्री समेत सभी दर्शक सहम गये। मैंने अपनी कला को मन ही मन दाद दी। गुरुदेव से कला-दर्शन पर शाबासी ले, मैं भाईजी महाराज के पास पहुंचा।

उस समय छग्गू-बा भाईजी महाराज के पास बैठे आहार कर रहे थे। उनकी पीठ मेरी ओर थी। मैं गया और पीछे से वह असली जैसा सांप छग्गू-बा के गले में डाल दिया। सुना तो यों था छग्गू-बा मजबूत छाती के हैं पर मेरी इस हरकत ने उन्हें दहला दिया। वे घुंघाए। थर-थर कांपने लगे। मैंने अपनी गलती को ढांकने में खूब फुरती की। सांप गले से निकाल लिया। छग्गू-बा, सांप नहीं है, यह उसकी उतरी हुई निर्जीव कांचली है। उन्हें थामा, पर उनका कलेजा हिल गया था। छाती धग्-धग् कर रही थी। उसके होश-हवाश उड़ गये। वे पसीना-पसीना हो गए। मुझे अपनी जादूगिरी पर मलाल था। श्री भाईजी महाराज ने स्थिति संभाली, अपने हाथों से उन्हें पानी पिलाया। छाती मसली, बातों में लगाया। भय भुलाने का प्रयत्न किया।

छग्गू-बा का तो कुछ नहीं बिगड़ा लेकिन मेरा बिगड़ना सामने था। मैं सोच रहा था आज खैरियत नहीं है। मुंह सफेद पड़ गया। आंखें रुंआई-सी हो गयीं। वे भाईजी महाराज थे। मुनिश्री ने फरमाया—पगले ! तूं क्यों डरता है? हो गया सो हो गया। मैं तुझे डाटूंगा थोड़ा ही, पर देख !

'आगेसर करणी नहीं, सागर ! इसी मजाक।
धसके स्यूं फाटै हियो, हुवै अनर्थ हकनाक।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४७

घाव से घृणा

वि० सं० २०१७ माघ कृष्णा ६ लावा सरदारगढ़ (मेवाड़) में भाईजी महाराज आहार करने विराजे थे। हम कुछ मुनि आसपास बैठे थे। मुनिश्री को अकेले भोजन करना पसन्द नहीं था। जब तक उनके अगल-बगल में दो-चार सन्त नहीं होते, उन्हें खाना अटपटा-सा लगता। वे औरों को खिलाकर बहुत राजी रहते। अपने भोजन में से जब तक वे दो-पांच कवल (ग्रास) औरों को नहीं दे देते तब तक उन्हें चैन नहीं पड़ता, भोजन नहीं भाता। आवाजें दे देकर मुनियों को बुलाते। बुलावा भेज-भेज कर आमंत्रित करते। जो कोई मेरे जैसा संकोची या आदतन 'ना' कह देता तो उसे अव्यावहारिकता का तुकमा मिलता। मुनि बालचंदजी (गंगाशहर) या मुनि हीरालालजी (बीदासर) जैसे कभी-कभी उपवास पचख कर भाईजी महाराज के पास आते तो अक्सर मुनिश्री फरमाते—'कुमाणसां! म्हारै कनै इं टेम उपवास पचख'र आया मत करो, मन्ने को सुहावै नी।'

कभी-कभी मुनि दुलहराजजी विनोद करते आते और कहते—'आज मैं प्रतिज्ञा करके आया हूं, आपके यहां से कोई चीज नहीं खाऊंगा। उन्हें भी दो-चार कड़वी-मीठी सुननी पड़ती। पर उनकी प्रतिज्ञा तो विनोदी होती। दो-चार मिनट भाईजी महाराज मनुहारें करते और उनकी प्रतिज्ञा पूरी हो जाती। सेवाभावी मुनिश्री बड़े सरसजीवी व्यक्ति थे। इसीलिए तो आज भी सन्तों को आहार के समय भाईजी महाराज की याद खटकती है।

उस दिन सन्तों की मण्डली से घिरे भाईजी महाराज आहार कर रहे थे कि इतने में मुनि ताराचंदजी (चूरू) पहुंचे। उनके दायें हाथ की तर्जनी के नख की जड़ में फोड़ा था। फोड़ा फूट तो गया, पर फूटकर भी विस्तार खा गया। उफनकर मांस बाहर आ गया। अंगुली दुगुनी हो गयी। उन्होंने भाईजी महाराज को वन्दना कर हाथ दिखाते हुए कहा—मोटा पुरुषां! अंगुली की जड़ में एक ओर फूणसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उठी है, अबै के करस्यूं ?

हाथ के उस विकृत घाव को देखते ही मुझे घृणा-सी हुई। ग्लानि-भरी सिकुड़न के साथ मैंने कहा—'भाई ! जरा थोड़ी देर के लिए तुम इस घाव को ढक दो, आराम से बैठो, अभी आहार हो जाता है, बाद में दिखाना। भले आदमी ! यह भी कोई घाव दिखाने का समय है ?

यद्यपि मैंने शिष्टता से कहा था, पर मेरा यह कहना भाईजी महाराज को बुरा लगा। उन्होंने तुरन्त खाना बन्द कर दिया। पास पड़ी दूसरी पात्री में चुल्लू कर उठ खड़े हुए।

पास बैठे सभी सन्त सन्न थे, यह क्या ? पर मैं तो जानता था, मुनिश्री के स्वभाव को। मैं बिना कुछ बोले शूल, रुई, मलहम और पट्टी ले आया। मुनि मणिलाल को गरम पानी और डिटोल लेने भेजा। आहार बीच में ही धरा रहा। पहले उनका घाव धोया, साफ-सफाई की। थोड़ा-सा शूल का सहारा दे घाव को खोला कि सघन पीब बह पड़ी। कोई आधा छटांक मवाद निकली होगी। मलहम-पट्टी कर हमने हाथ धोये। अब तक मुनिश्री मन ही मन गुनगुनाते रहे। ज्यों ही पुनः आहार की मंडली जुड़ी कि भाईजी महाराज ने फरमाया—

घृणा न करणी घाव स्यूं, रोगी स्यूं अनुराग।
सागर ! सेवा संत री, मिले पुरबले भाग ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४८

बीमार को पहले

पौष का महीना था। बहिर-विहारी सन्तों का एक मेला। सहज समागम। हम सब एक-दूसरे को देखकर प्रफुल्लित थे। सैकड़ों ठाणों की भीड़ में स्वस्थ-अस्वस्थ, रोगी-ग्लानी, बाल-वृद्ध सभी तरह के होते हैं। भाईजी महाराज सबके केन्द्र थे। अस्वस्थ उनसे स्वास्थ्य का परामर्श लेते, रोगी दवा-पानी, पथ्य-परहेज पूछते, ग्लान अशक्त स्वयं के निर्वाह की याचना करते, बाल मुनि स्नेह लेने आते तो वृद्ध स्थविर आदर भावना से खिंचे पहुंचते। यही था भाईजी महाराज की जन-प्रियता का सूत्र-वे सबके थे। सब उनके थे। सेवा के अवसर पर उनकी दृष्टि में अपने-पराये का भेद नहीं रहता। बहुत बार तो निकटवर्ती—अपने साथ रहने वालों से भी औरों पर विशेष ध्यान दिया जाता।

मुनि अगरचंदजी स्वामी उन दिनों रक्त-विकार की व्याधि से पीड़ित थे। उनके लिए पथ्य-दूध और रोटी के अतिरिक्त सब कुछ बंद था। बहुत सारे ठाणों (सन्त-सतियों) का सहवास, गांव की सीमित गोचरी, उन्हें दूध उपलब्ध नहीं हुआ। उनके सहवर्ती मुनि चौथमलजी स्वामी (सरादार शहर) खाली पात्री लेकर आये। पीठ पीछे छुपाई पात्री देख भाईजी महाराज ने फरमाया—'चोथू! कियां आयो भाया! के चाहिजै है? बोल।'

उस समय भाईजी महाराज आहार करने विराजे ही थे। चौथमलजी स्वामी जरा सकुचाये। उन्होंने दबी आवाज में कहा——नहीं-नहीं, देखता था, महाराज! दूध आया हो तो उन्हें आहार करा देता। आज हमारे यहां दूध नहीं आया।

सेवाभावी मुनिश्री ने सन्त पृथ्वीराजजी से पूछा—पीथू। पय आयो है के?

उन्होंने सिर हिलाते हुए उत्तर दिया—मत्थेण वन्दामि! दूध तो आज कहीं गोचरी में नहीं धामा।

इतने में आहार लेकर मैं आया। भाईजी महाराज के लिए मैं आचार्यप्रवर के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यहां से (समुच्चय की गोचरी में से) भोजन लाया करता था। गुरुदेव को आहार करवा कर फिर भाईजी महाराज आहार लेते। मुनिश्री के शब्दों में—'ठाकुरजी कै भोग लाग्यां पछै ही पुजारां ने मिलै।' मैं ज्यों ही आया भाईजी महाराज ने पूछा—दूध ल्यायो है ?

मैंने कहा—हां।

'तो चोथू ने दूध घाल दे' मुनिश्री ने आदेश दिया।

मैंने ज्यों ही दूध की पात्री खोली मुनिश्री बोले, 'इत्तोई ल्यायो के ?'

मैं बोला—समुच्चय में इतना ही था।

मैं चौथ मुनि के पात्र में दूध डाल रहा था। मेरे सामने समस्या थी। दूध थोड़ा था और अब लेने वाले मुनि तीन थे। मैं अनुपात से तीसरा हिस्सा रुक-रुक कर उनके पात्र में डाल रहा था। मेरे देने की प्रक्रिया देख, भाईजी महाराज ने तत्काल एक दोहा कहा—

सागर ! मत कर सूमड़ा, कर काठो कंजूस।
दियां नहीं खूटे दरब, मत बण मक्खीचूस ॥

मैं धीमे से बोला—कंजूस नहीं। मैं सोचता हूं थोड़ा आपके उपयोग में आ जाये, थोड़ा सन्त बसन्त के बुखार है, उन्हें दे दू और थोड़े से अगरचंदजी स्वामी का काम भी चल जाये।

भाईजी महाराज ने मेरे हाथ से पात्री ली और सारा दूध उनकी पात्री में उंड़ेलते हुए कहा-–'लेजा चोथू। मेरा क्या है मैं तो रोटी खाकर भी पेट भर लूंगा। वे बीमार हैं उन्हें तो और कुछ खाना ही नहीं है। जा-जा, ले जा, भाई ! बीमार को पहले।'

पास बैठे एक सन्त ने कहा—और बसन्तीलालजी को ?

मुनिश्री ने हंसकर कहा—वाह ! वह तो जवान है और उसे बुखार भी है। बुखार को तो भूखा ही रखना चाहिए। अच्छा सागर ! एक काम करना, बन्सती-लाल को दुपहरे चाय मंगाकर पिला देना।

यह थी भाईजी महाराज की सेवा-भावना, आत्मीयता, अपना बनाने की कला और संघीय आर्तगवेषिणा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६

सेवा तप है

उन दिनों मुनि कुन्दनमलजी के हाथ में फोड़ा निकल आया था। वेदना भयंकर रूप ले चली। वे रात-रात भर जाग-जागकर निकालते। हाथ सूज गया। फोड़े के भीतर मवाद (रस्सी) कुलती। वे कराह-कराह कर सांसें लेते। क्षमता से अधिक बेचैनी थी। लूपरी, सेक और दवा नाना तरह से उपाय हो रहे थे, पर वह भी विष-कंटा था। उग्र रूप लेता ही गया। जलन बढ़ गयी। वे तो परेशान थे ही पर देखने वाले को भी सिहरन होती। फोड़ा ऊपर से गल गया था। उसमें छलनी की तरह अनेकों छोटे-छोटे छेद हो गये थे। भीतर की मवाद निकल सके, ऐसा कोई उपाय नहीं था। वह भीतर ही भीतर विस्तार खा रहा था।

श्रीभाईजी महाराज आहार (भोजन) करने विराजे ही थे। पहला ग्रास मुंह में था और दूसरा हाथ में। इतने में आये मुनि कुन्दनमलजी हाथ से हाथ को पकड़े। चेहरे पर खिन्नता। आंखों में तरलता। ओ भाईजी महाराज ! कोई उपाय करावो। अब पीड़ सहन कोनी हुवै।

मुनिश्री ने गरदन उठाकर उनकी ओर देखा। दयार्द्र हृदय पिघल गया। मुंह का कवल गले उतरना भारी हो गया। हाथ का ग्रास पुनः पात्र में छोड़ दिया। पानी का प्याला उठाया, हाथ धोये, पूरे हाथ पोंछे कि न पोंछे, हमने देखा—भाईजी महाराज का वात्सल्य भरा हाथ उनकी पीठ पर था। दूसरे हाथ से उनका सिर सहलाते हुए सेवाभावीजी ने कहा—'कुनणू। घबरा मत भाया। मैं पेहली थारों काम करस्यूं। देख, अबार ठीक करूं' कहते-कहते उनका हाथ पकड़े, कच्चे चौक में जा पहुंचे।

भाईजी महाराज का हाथ लगते ही फोड़ा फूट गया। एक चिपकारी चली, कपड़े रस्सी के छीटों से भर गये। थोड़ा-सा दबाया कि दूसरी चिपकारी छूटी और सीधी चेहरे पर आकर गिरी। मुनि कुन्दनमलजी घबरा गये। सकपकाते हुए बोले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

—'महाराज ! आपरै छांटा लागग्या ।' और भाईजी महाराज बिना छीटों की परवाह किए फरमा रहे थे—'तू सोच मत कर। कपड़ा को 'र शरीर को ? ऐ तो धोया' र साफ। पण थारै ठीक होणो चाहिजै ।'

मुझे (सागर) आवाज लगाई। मैं रुई, कपड़ा, पट्टी, पानी और डिटोल लेकर जब तक पहुंचा, इतने में तो न जाने कितने ही तुकमें मुझे मिल चुके थे। मैं पहुंचा, मैंने देखा—उनके फोड़े में से अच्छी-खासी मवाद, भाईजी महाराज पींच-पींचकर निकाल रहे थे और फरमा रहे थे—कुनणूं। थोड़ी-सी हिम्मत राख भाया ! आज तन्ने आछीतरियां नींद आ ज्यासी ।' धीरे-धीरे सारा भीतर का कचरा दबा-दबा कर निकाला। घाव धोया, मलहम लगाई, पट्टी बांधी और उन्हें यथास्थान सुलाया। भाईजी महाराज ने हाथों की सफाई की। 'सलफर' डाइजीन की एक टिकिया मंगाकर उन्हें खिलाई और फिर कपड़े बदले।

मैंने कहा—सारा आहार ठंडा हो गया है, क्या ही अच्छा होता हम पन्द्रह मिनट में यहां का काम समेटकर फिर उस काम में निश्चितता से लगते ?

भाईजी महाराज ने जरा-सी आंख लाल की ? क्या कहा ? पहले खाना खाऊं ? खबरदार ! आज के बाद ऐसा कभी मत कहना। पहले सेवा है, बाद में खाना। वह बेचारा बीमार साधु तो कराहे और मैं आराम से गिटूं ? तुम्हें मालूम होना चाहिए 'सेवाधर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः' सेवा परम गहन धर्म है, उसे योगी भी मुश्किल से पा सकते हैं। यह सेवा बार-बार नहीं मिलती। रोगी का काम तो मानवता का तकाजा है। तेरापंथ धर्मशासन सेवा-प्रधान है। हमारे यहां की सेवा-चाकरी की एक अद्वितीय मिशाल है। सुन —

'सागर ! सोहक्यूं सुलभ है, दुर्लभ सेवा-धर्म।
ओ तप 'चम्पक' गहनतम, मानवता रो मर्म ।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५०

छग्गू-बा

मुनि छोगालालजी स्वामी-बोराणा वाले सीधे-सादे पवित्र साधु थे, पुराणे युग की चाल-ढाल। यों कहना चाहिए वह मलीन-वस्त्रों में उज्ज्वल आत्मा थी। श्री भाईजी महाराज को ऐसे भले, भोले, स्नेहिल और सरल लोगों से बड़ा प्रेम था। उन्हें छग्गू-बा के नाम से हम संत लोग पुकारा करते थे। गांवड़ियों के निःस्वजनों से उन्हें लगाव था। वे सादे इतने थे——गांव के गरीब लोग के यहां की रोटी खाकर बहुत प्रसन्न रहते। स्वतंत्रता में उनकी तुलना किसके साथ करूं, समझ में नहीं आता। अपना काम औरों से करवाना उन्हें नहीं सुहाता था। औरों का काम वे बड़े चाव-भाव से किया करते। किसी को भी काम के लिए नाटना उन्हें आता ही नहीं था। वैराग्य उनकी वृत्ति में उतरा हुआ था। हमने बरसों से उन्हें दूध पीते नहीं देखा। उनका मनोज्ञ खाद्य था—मिरच, चटनी, लूखी-सूखी रोटी, छाछ, राबड़ी। गोचरी की शौख इतनी, वे तीसरे गांव जाते। वे तो ऐसे आदमी थे—बादाम की बरफी देकर बदले में लूखी रोटी लेना पसन्द करते। भाईजी महाराज के साझ-मंडल में आए बिना उन्हें रंगत नहीं होती। वे सचमुच ओलिये फकीर थे, आते और यों ही जमीन पर पसर जाते। हम कंबल देते पर वे नहीं लेते। कपड़े गंदे तो होने ही थे। इतने पर भी वे सबको प्यारे-प्यारे लगते। उनकी बोली भी अपने आप में निराली थी। सन्तजन जान-जानकर उन्हें बुलवाते। उनकी बोली के लहजे की प्रियता—आसरै 'थूं है क नी' औरी 'ऊं करे मती', 'मूरखो' आदि शब्द हर किसी को आकर्षित कर लेते। उनकी इस निश्छलता पर आचार्यश्री भी मुग्ध थे। तनाव, दुराव और खिचाव से दूर उनका जीवन रमझमता, मन-गमता-सा था।

वि० सं० २०१९ माघ कृष्णा दूसरी पांचम, दिनांक १५ जनवरी १९६३ की बात है। हम मेवाड़-गजपुर घाटा से आत्मा आ रहे थे। मध्याह्न का समय था। वह मेवाड़ी-पहाड़ी पथरीला रास्ता! भाईजी महाराज के पैरों में दर्द। छग्गू-बा उस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कंकरीले मार्ग पर हमें दो-तीन बार मिल गए। कभी पीछे से आगे निकलते तो कभी आगे से पीछे रह जाते। बार-बार यों आड़े-आड़े आते देख भाईजी महाराज ने फरमाया—हमें तो अभी साठ भी नहीं आये हैं, जिसमें यह हाल है और बाबा चौरासी में भी गाडा गुड़का रहा है—

'छग्गू-बा गमेती बावो, आवै आड़ो-आड़ो।
'चम्पक' बरस चौरासी आया, तोहि गुड़कावै गाड़ो।।'

दिनांक १७ जनवरी को आत्मा गांव में आचार्यप्रवर की सन्निधि में एक चिंतन गोष्ठी हुई। श्री भाईजी महाराज ने विशेष तौर से निवेदन प्रस्तुत किया—'जो संघीय सदस्य ८० वर्ष प्राप्त हो गए हैं उन्हें संघीय काम-काज से मुक्त किया जाना चाहिए। अस्सी वर्ष के बाद की उमर काम करने की नहीं होती। संघ के उन वयोवृद्धों का इतना सम्मान तो होना ही चाहिए। एक उमर के बाद हर क्षेत्र में कार्य-मुक्ति (रिटायरमेंट) मिलती ही है। छग्गू-बा का उदाहरण पेश करते हुए भाईजी महाराज ने जोर दिया। आचार्यप्रवर भाईजी महाराज की इस दयालुता पर पिघले और छग्गू-बा को आजीवन सामूहिक कार्य-भार से मुक्त किया। श्री भाईजी महाराज आदरणीय वृद्धों के प्रति उदार, दयालु तो थे ही, पर समय पर शास्ता को उचित निवेदन करने से भी नहीं चूकते थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५१

पूज्यता तक पहुचानें वाले तो गुरु हैं

उदयपुर से विहार कर श्री भाईजी महाराज राजनगर पधारे । मर्यादा-महोत्सव की व्यवस्थाओं का जायजा ले २०१६ पौष शुक्ला अष्टमी को बोरज होते हुए केलवा पहुंचे ।

केलवा से तेरापंथ का इतिहास जुड़ा पड़ा है । यहां का अन्धेरी ओरी वाला मंदिर तेरापंथ का उद्गम-स्थल है। आचार्य भिक्षु की कठोर, सत्य-परीक्षा और केलवा ठाकुर मोखमसिंहजी का प्रभावित होना जन-विश्रुत है । केलवा-ठिकाने की ख्यात-बही के अनुसार आचार्य भिक्षु का तेरापंथ भाव-दीक्षा के बाद पहला भोजन ग्रहण (गोचरी), तीन दिन के उपवास का पारणा भी रावले के अन्न से हुआ था । जयाचार्यश्री द्वारा अंकित लकड़ी की एक कामीं (फुट) जिस पर लिखा है— 'भिक्षु छतांरी छै' केलवे ठिकाने से ली गयी लकड़ी की है, जो आज भी लाडनूं पुस्तक भंडार में सुरक्षित है । केलवा तब से अब तक तेरापंथ-संघ के लिए श्रद्धानत है । इसका जीता-जागता प्रमाण तेरापंथ द्विशताब्दी समारोह में हमने अपनी आंखों से देखा है । श्री भाईजी महाराज का पधारना केलवा के लिए अमित उल्लास लेकर हुआ । सैकड़ों-सैकड़ों छात्रों और महिलाओं के साथ जन-समूह ने स्वागत किया ।

रावले के चौक में प्रधानाध्यापक श्री पुरी, केलवा ठाकुर श्री दौलतसिंहजी एवं चाचा ठाकुर रामसिंहजी के बाद कवि सेंसमलजी कोठारी ने कुछ प्रशस्ति पद्यों के बीच कहा—

इक चम्पा हरि सिर चढ़ें, इक मन हरत विकार ।
मनहर चम्पालाल को, बन्दूं बारम्बार ।।

कवि की युक्तियुक्त बात से जनता मुखातिब हो उठी ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री भाईजी महाराज ने प्रत्युत्तर में केलवे नगर की विशेषताएं, ठिकाने के अपने संघीय-संबंध बताते हुए फरमाया—

बेशक चम्पा मंदिरों में चढ़ता है, भक्तों की भक्ति का माध्यम बनता है। मनोहर होता है। उसकी बन्दनीयता भी सही है। पर यह सब चम्पा की विशेषताएं नहीं हैं। महानत तो है माली की, कृति है वृक्ष की, कीर्तना है भक्तों की और आदरणीयता है सुगन्धित सफेदी की।

पूज्यता तक पहुंचाने वाले गुरु होते हैं। महानता है पूज्य गुरुदेव कालूगणी की, जिन्होंने इस चम्पे को सींचा-रुखारा। प्रधानता है संघ-वृक्ष की तेरापंथ जैसे कल्पतरु की जिसने आश्रय दिया। प्रमुखता है भक्तों की, जिन्होंने ना-कुछ व्यक्ति को इतना आदर दिया, मान दिया और सबसे अधिक पूजनीयता है सुगन्ध-गुणयुक्त सफेद आचार की।

इसलिए कविराजजी यों कहिये—

'माली सींच्यो, तरु फिल्यो, चढ्यो भक्तजन हाथ।
चम्पे री आ पूज्यता, सदा सफेदी साथ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५२

हमारी लक्ष्मण-रेखा

वि० सं० २०१६ उदयपुर चातुर्मास के बाद भी श्री भाईजी महाराज को वहीं रुकना पड़ा। पर मन नहीं लगा। थोड़ा-सा स्वास्थ्य सुधरा कि विहार किया। राजनगर-केलवा होते हुए हम दिनांक ७-२-६३ रीछेड़ पहुंचे। समग्र साधु संघ को साथ ले आचार्यश्री ज्येष्ठ बन्धु की अगवानी में पधारे। कोई ड़ेढ़ मील दूर चारभुजा सड़क पर मिलन हुआ। समवसरण में पहुंचकर पुनः स्वागत-वन्दना हुई। साध्वियों ने मंगल गीत गाये। आचार्य देव ने यात्रा संस्मरणों के साथ भाईजी महाराज के लिए अनेकों शब्द फरमाये। मिलन के अवसर पर आचार्यप्रवर ने एक छप्पय-छन्द के माध्यम से फरमाया—

उदयापुर से आप हम, चले मिले रीछेड़
सरल सड़क ली आपने, हमने ली भटभेड़।
हमने ली भटभेड़, मोज-माणी मगरांरी,
पग-पग दृश्य निभाल चाल धीमी डगरांरी।
क्षेत्र-क्षेत्र संभाल मैं, लागी लम्बी गेड़,
उदयापुर से आप हम, चले मिले रीछेड़॥

उस दिन वि० सं० २०१६ पौष शुक्ला त्रयोदशी थी। सैकड़ों-सैकड़ों बहिर-विहारी साधु-साध्वियां एकत्रित थे। मध्याह्न में आचार्यप्रवर के सान्निध्य में एक साध्वी-समाज की संगोष्ठी हुई। आचार्यश्री सैकड़ों साध्वियों से घिरे हुए विराज रहे थे। चारों ओर साध्वियां ही साध्वियां। कहीं रास्ता नहीं। भाईजी महाराज आचार्यश्री के पास जाना चाहते थे। देखा, सभी रास्ते रुके हुए हैं। इधर पधारे रास्ता बन्द, उधर पधारे रास्ता बन्द। मुनिश्री ने जोर से कहा—'सगला ही रास्ता बन्द हैं, के म्हे भी आ सकां हां ?'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सबका ध्यान टूटा। आचार्यप्रवर ने जरा मुस्कराकर फरमाया—'आवो! आवो! सब रास्ते खुले हैं। भला! आपके रास्ते कौन बन्द कर सकता है?' भाईजी महाराज से नहीं रहा गया। वे बोले—'आपके सिवा और कौन बन्द कर सकता है?' आचार्यप्रवर के इशारे की देर थी। साध्वियों ने इधर-उधर खिसककर रास्ता बना दिया। मुनिश्री आचार्यप्रवर तक पहुंचे। पहुंचते-पहुंचते आपने एक पद्य बनाया और तत्काल सभा के समक्ष सुनाते हुए कहा—खमाघणी!

सिवा आपरे कुण सके, रस्ता म्हारा रोक,
आज्ञा लिछमण-रेख आ, 'चंपक' चौड़े चोक।'

आचार्य सहित पूरा साध्वी समाज हंस पड़ा। अवसर की वह सचोट बात और साथ-साथ शास्ता की आज्ञा का महत्त्व, समय की एक सूझ थी।

भाईजी महाराज ने अनायोजित ही एक लघु वक्तव्य देते हुए फरमाया—'मैं तो कुछ पढ़ा-लिखा नहीं हूं, पर इतना अवश्य जानता हूं कि आज्ञा हमारा परमधर्म है। 'जिन मारग में आज्ञा बड़ी' स्वामीजी का अमोघ वाक्य है। आज्ञा ही साधक का जीवन है। आज्ञा प्राण है। आज्ञा रक्षा है। आज्ञा त्राण है। आज्ञा ही हमारे लिए लक्ष्मण-रेखा है। जब तक सीता ने लक्ष्मण-रेखा का उल्लंघन नहीं किया, उसे कोई खतरा नहीं था। वह दुष्ट रावण की बातों में आ गयी। संन्यासी के धोखे में ज्योंही उसने रेखा को लांघा कि रावण का दांव लग गया। सीता को कितने कष्ट झेलने पड़े? हमारे लिए यह आज्ञा ढाल है। सुरक्षा की इस सीमा-रेखा में रहकर हम परम-आनन्द का अनुभव करते हैं। सात हाथ की सोड़ में सोते हैं। कोई हड़का है न धड़का। खुल्लम-खुल्ला बात है—हम तो आज्ञा के पुजारी हैं। आचार्य की आज्ञा ही हमारे लिए लक्ष्मण-रेखा है। आपके द्वारा निकाली गयी निषेध-लकीर हमारे लिए दीवार है, समुद्र की-सी खाई है। हम उस निषेध,रेखा का लंघन नहीं कर सकते। अतः गुरुदेव! मैंने कहने का साहस किया है।

सिवा आपरे कुण सके, रस्ता म्हारा रोक।
आज्ञा लिछमण-रेख आ 'चम्पक' चौड़े चोक'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५३

यश भी भाग्य से मिलता है

२०१६ माघ कृष्णा चतुर्दशी की बात है। आचार्यप्रवर केलवा राज-महलों में विराजे थे। मुनि खूबचन्दजी की आंत उतर गयी। गोसा उतर जाने के बाद पट्टा लगा लेना भी तो गलती थी, पर हो गयी। कटिबन्ध के दबाव से रास्ता सिकुड़ गया। भरसक प्रयत्न किये, पर आंत ऊपर नहीं चढ़ी। बेचैनी बढ़ गयी। वह तो बढ़नी ही थी। खूब मुनि जैसा रांगड़, प्रौढ़, साहसी और छाती के ठड्डे वाला आदमी भी हताश हो गया। हाय-हाय की उस स्थिति में अनेक जानकार लोगों की सभी करामातें असफल रहीं।

कोई चार घंटे के बाद राजनगर के सरकारी डॉक्टर रेउ साहब पहुंचे। उन्होंने देखा, प्रयत्न किया, ज्यों-त्यों आंत चढ़ जाए, अन्त में वे बोले—'अब ऑपरेशन के अतिरिक्त और कोई इलाज नहीं है। इन्हें राजनगर भेजो। मैं शल्य-क्रिया करूंगा। बचने का एकमात्र यही उपाय है।

श्री भाईजी महाराज आचार्यश्री जी की सेवा में पधारे। स्थिति निवेदन की, विचार-विमर्श हुआ, वापस लौटे और मुनि खूबचन्द जी से फरमाने लगे—'देखो, खूबचन्द जी! मरना तो सामने दीख रहा है। इसका कोई विचार भी नहीं है। अब दो रास्ते हैं—एक गृहस्थों का आश्रय लेना, यह शायद तुम्हें भी पसंद नहीं, मुझे भी पसन्द नहीं। दूसरा समभाव से कष्ट सहन करना। मैं भी इस वेदना की असह्यता को पहचानता हूं। इलाज विधि के अनुसार होगा, पर तुम्हें राजनगर जाना पड़ेगा, तुम पैदल जा सको संभव नहीं है। सन्त उठाकर पहुंचाएंगे। बोलो क्या इच्छा है?'

वे बोले—'मैं कहूं भी तो क्या? आप जैसी व्यवस्था करें, मुझे मंजूर है। गुरुदेव की जो मरजी हो। मरना तो है ही पर यों तड़प-तड़पकर मरना पड़ेगा यह नहीं जाना था। जो कुछ करना हो आप ही करें, मैं संघ की शरण में हूं।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री भाईजी महाराज आचार्य प्रवर से व्यवस्था देने का निवेदन करने पधारे। कोई दसेक कदम गये होंगे, स्वर देखा, वापस मुड़े।

डॉक्टर बोले—'क्यों साहब ! क्या सोचा ?'

भाईजी महाराज ने कहा—'डॉक्टर ! मेरे मन में आया, इन सबने प्रयत्न कर लिया, मैं भी देखूं तो सही यह आंत क्यों नहीं चढ़ती ?'

मुनिश्री विराजे। स्वामीजी का स्मरण किया और आंत पर हाथ का दबाव दिया। सहारा लगा कि आंत खट, ऊपर चढ़ गयी। मुनि खूबचन्द जी बोले—'जिला दिया।'

डॉक्टर रेउ अचंभित थे। उन्होंने कहा—भाईजी महाराज ! आप में तप का बल है। सन्तों ने कहा—पुन्यवान के हाथ में ही करामात होती है। भाईजी महाराज ! आपने क्या अटकल लगायी ? और भाईजी महाराज कह रहे थे—

'अटकल-पटकल कुछ नहीं, कल बाबैं को नांव।
जस जद मिलणैं रो हुए, (तो) 'चम्पक' लागैं दांव'

सुनते ही आचार्यप्रवर स्वयं पधारे और फरमाया—चम्पालालजी स्वामी ! 'यशः पुन्यैरवाप्यते'—'यश भी भाग्य से मिलता है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५४

भगत जीत गया

मेवाड़ में पहुंना के नजदीक ही ऊंचा एक छोटा-सा गांव है। वे लोग प्रार्थना कर रहे हैं पधारने की। पर श्री का मन कम-कम है। प्रातः पंचमी-समिति (शौच-निवृत्ति) पधारते समय रास्ते में श्री भाईजी महाराज ने निवेदन किया—महामहिम ! जरा गौर फरमाओ न, बेचारे ऊंचा वालों का इतना मन है, फिर कब-कब पधारना होगा, करवा दो न कृपा, आप तो तरन-तारन हैं।

आचार्यश्री ने मुस्कराकर फरमाया—उनका मन क्या देखें, मन तो देखना पड़ता है आपका।

इतने में ऊंचा कुंवर साहब पहुंच गए। श्री भाईजी महाराज ने कहा, कुंवर-सा! खूब मौके पर आए। उन्होंने पैर पकड़ लिये। भाईजी महाराज ने सहारा दिया। गुरुदेव ऊंचा पधारे।

ऊंचा से पहुंना, मरोली, जाड़ाणा होकर भीमगढ़ प्रवेश हुआ। यहीं से लांगच गांव का रास्ता है। भाई मांगीलाल बहुत दिनों से प्रयत्न में हैं—आचार्यश्री का लांगच पदार्पण हो, पर गुरुदेव अभी टालने में हैं। आज मांगीलाल रास्ता रोक, पैर पकड़कर बैठ गया। लगभग सभी संतजन भी ना में हैं। शास्ता के नाते खीज-बीज-भीज सब कुछ किया, पर वह बंदा टस-से-मस नहीं हुआ। अंत पसीजकर आचार्यवर रीझे और फरमाया — चम्पालालजी स्वामी ! बोलो, अब क्या करें ?

श्री भाईजी महाराज ने चुटकी लेते हुए कहा—महाराज ! यह भगत और भगवान का झगड़ा है, हम कौन होते हैं बीच में बोलने वाले, हम तो खड़े-खड़े देख रहे हैं, देखें ! आज कौन जीतता है—भगत या भगवान् ?

आचार्यश्री ने लांगच पधारने की घोषणा की और भाईजी महाराज ने कहा—वाह ! वाह ! वाह ! आज तो भगत जीत गया, भगत जीत गया। वि० सं०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०१६ चैत्र कृष्णा तेरह को लांगच की ग्रामीण सभा में बोलते हुए भाईजी महाराज ने फरमाया—

मांगी, मांग करी घणी, पर नहीं मानी एक
पड्यो गुरां नैं पिघलणी, रही भगत की टेक···१

भगत बड़ो संसार मैं, सब ली इकमति ठान,
(पर) भगता रैं लारै झुकै, देखो यूं भगवान···२

भगती मैं सगती विविध-जुगती करैं विनीत,
रीत प्रीत री देखल्यो, हुई भगत री जीत···३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५५

पगडंडी का रास्ता

गांव का नाम तो मैं भूल गया पर मेवाड़ की घटना है। हमने एक गांव से विहार किया। सड़क-सड़क चल रहे थे। सड़क भी कच्ची थी। रास्ता मगरी (पहाड़ियों) का था। थोड़ी दूर चले कि एक घुमाव पर हमने अपने आगे चलने वाली मुनि-मंडली को देखा। ऐसा लगा कि बहुत घुमाव है। इधर-उधर देखने पर एक पगडंडी दिख पड़ी। वह बहुत साफ तो नहीं थी, पर थी चालू। सन्तों ने भाईजी महाराज से कहा—मोटा पुरुषां ! सड़क तो बहुत घूम रही है। यह पगडंडी का रास्ता सीधा निकलेगा।

दो क्षण रुककर मुनिश्री ने फरमाया—ना भाई ! ना, शकुन रोक रहे हैं, यह रास्ता गलत होना चाहिए। हम सड़क-सड़क आगे बढ़े। कोई दस कदम भी नहीं चले होंगे, मुनिश्री ने फरमाया—लगता है पीछे वाले सन्त कहीं भटक जाएंगे, अतः पगडंडी पर निषेध चिह्न (क्रोस) तो कर दो। आपने अपने गेड़िये से क्रोस का चिह्न कर दिया। घुमाव के उस छोर पर जाकर हमने देखा तो पिछले सन्त हमारी उसी पगडंडी को देख रहे हैं। जो हमारे मन में आई उनके भी आई होगी। उन्होंने निषेध-चिह्न की परवाह न कर, पगडंडी ले ली। मुनिश्री ने दूर से बहुत संकेत किए पर वे उन्हें उलटा ही लेते गये।

उनके कदम शीघ्र गति से मार्ग तय कर रहे थे। दो मिनट के बाद तो वे हमें दीखने से ही रहे। वे चाहते थे, हम भाईजी महाराज को पीछे छोड़, आगे पहुंच जाएं। उन्होंने गति को और बढ़ा दिया। जवानी के दिन थे, पैरों में ताकत थी। बिना इधर-उधर देखे, वे अपनी धुन में चलते ही गये। मीलों का रास्ता तय कर लिया पर अभी मूल सड़क नहीं आयी। आती कैसे ? सड़क उस पहाड़ी से पूर्व की ओर मुड़ गई। वे भले आदमी अपनी मस्ती में पगडंडी पर चलते ही चले। पगडंडी पश्चिम की ओर घूमती गई। अगली टेकरी पार करने पर उनके सामने एक सूखी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बरसाती नदी आ गयी। बस, वहां जाकर पगडंडी समाप्त। अब जाएं भी तो किधर? पूछें भी तो किसे? वीरान जंगल। हिम्मत बहादुर वे दोनों सन्त उज्जड़ जंगल में रड़भड़ते दुपहरी में जाते एक छोटे से आदिवासी गांव में पहुंचे। दो घंटा विश्राम किया। ढलती दुपहरी में वे अगले गांव का रास्ता पूछते-पूछते सायंकाल हमसे आकर मिले।

वे खुद खिन्न हो गये थे। भाई जी महाराज तो दस बजे से उनकी चिन्ता में थे। न जाने कितने लोगों से पूछा। कितनों ने ही खोज-खबर के प्रयत्न किए, पर कहीं अता-पता नहीं लगा। जब सन्त सही-सलामत पहुंचे तब जाकर मुनिश्री को चैन पड़ा। ज्यों ही सन्त आए, उन्हें आश्वस्त किया। कुछ विश्राम कराकर, पास में बैठ आहार करवाया। दिन थोड़ा था। आहार-पानी कर चुकने के बाद उन्हें सारा हाल पूछा। वे पश्चात्ताप के स्वरों में अपनी आप-बीती बता रहे थे। इसी बीच भाईजी महाराज ने मधुर हास्य बिखेरते हुए कहा—

गफलत स्यूं गोता पडैं, खेद खिन्न हो ज्याय।
'चम्पक' जो पथ चूकज्या, (वो) पग-पग पर पिछताय॥'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५६

यह कैसी बुद्धिमानी

२०१६ चैत्र कृष्णा चतुर्दशी को आचार्यप्रवर रशमी से विहार कर मान्यास पधार रहे थे।। मुनि मांगीलाल जी सरदारशहर वाले आगे-आगे चल रहे थे। उनकी चाल यों ही ढीली-ढाली थी। तपत और मेवाड़ी रास्ता, भंडोपकरणों का अत्यधिक बोझ और शरीर भारी, वे परेशान हो, एक स्थान पर बैठ गए।

भाईजी महाराज दयालु हैं। किसी संत पर वे यों ही दयालु हो जाया करते। फिर असहाय और कमजोर पर तो वे प्रायः पिघल उठते थे। मुनि मांगीलाल जी शरीर से भारी, अपस, उट्ठाणा क्रिया में शिथिल, आलसी पर थे बहुश्रुत। बुद्धि तीव्र और याददास्त बजराट है। सात आगम उन्हें कंठस्थ हैं। हां, यदि थोड़ा-सा प्रमाद नहीं होता तो क्या कहना? वे अपने आपको 'मधुर' कहते थे। दोनों बाप-बेटों ने साथ दीक्षा ली थी। उनके पिताजी का नाम फूसराज जी स्वामी था। वे भी आगम-ज्ञाता, तत्त्वदर्शी सन्त थे। किसी साधु को बैठा देख दूर से भाईजी महाराज ने पूछा---यह कौन बैठा है?

सन्तों ने कहा—आलस-निकाय मधुर मुनि। वे काम करने में ढीले थे। प्रतिलेखन, प्रतिक्रमण भी सबके बाद पूरा होता था। मन के सरल थे पर आलस के कारण सन्त उन्हें आलस-निकाय कह देते।

श्री भाईजी महाराज उस सन्त की ओर मुड़कर बोले—ना भाई! ऐसा नहीं कहा करते। यह तो बहुश्रुत है। 'बहुश्रुत की आशातन मत करो।' भाईजी महाराज को नजदीक आते देख मुनि मांगीलाल जी स्वामी उठे। मुनिश्री ने हमदर्दी दिखायी। उनसे बोझ मांगा। थक गया क्या मांगू? ला! वजन दे दे, आराम से चला जाएगा। उनका झोलका बहुत भारी था, हाथ में उठाया तो पत्थर जैसा लगा। ठिकाने आकर मुनि हीरालाल जी से भाईजी महाराज ने फरमाया—हीरा! इसका बोझा कम कर दो भाई! हम कुछ सन्त बैठे। उनकी नेश्राय का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपना वजन १८ सेर लगभग निकला। हमने दिन में दो घंटा लगाकर आवश्यक-अनावश्यक पुस्तक पन्ने और कपड़ों-लत्तों को छांटा। पर उनका मन नहीं माना, एक-एक कर सांझ तक सभी उपकरण और पन्ने वापस ले गये। जब भाईजी महाराज के टोकने पर भी वे नहीं समझे, तो मुनिश्री ने फरमाया—

'मांगीलाल मतंग ज्यूं चालै, फूसराज रा पूत।
बिन मतलब ही खांधा तोड़ें, आ कुणासी आकूत ॥'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५७

गंगापुर में दो संवत्

वि० सं० २०१६ का राजनगर मर्यादा-महोत्सव सम्पन्न कर गुरुदेव भाणा, जैतपुरा होते हुए फाल्गुन शुक्ला १२ को गंगापुर पधारे। होली के बाद गंगापुर वालों का आग्रह था कि लम्बा विराजना हो। आचार्यप्रवर ने फरमाया—चम्पालाल जी स्वामी (भाईजी महाराज) को राजी करो। इन्होंने पहूने वालों को लगा दिया है। गणेश कूकड़े का समर्थन भाईजी कर रहे हैं। गंगापुर वालों ने भाईजी महाराज से कहा। मुनिश्री ने फरमाया—मैं तुम्हारे अंतराय नहीं देता, पर ये तुम्हारे, अड़ोस-पड़ोस में बसने वाले भी तो तुम्हारे ही छोटे भाई हैं, बड़ा भाई, भाई को न देखे, क्या यह ठीक है? कुछ संतोष करो, बांट-बांटकर खाना सीखो।

गणेश कूकड़े की आंखें भर आईं। आचार्यश्री जी पसीजे। पुर-पहुने पधारने का आदेश देते हुए फरमाया—'चम्पालालजी स्वामी जिसके पक्ष में खड़े हो जाते हैं, वह मुकदमा जीत जाता है। गणेश ने बड़ा वकील खड़ा कर लिया। मेरा मन बिलकुल नहीं था, पर विवशता भी एक होनहार है और सबकी बात टाल सकता हूं पर भाईजी महाराज का आग्रह तो मैं भी नहीं टाल सकता।'

चैत बदी पंचमी को विहार हुआ। नांदसा, स्योरती, महेन्द्रगढ़, कारोई, पुर, गाडरमाला होकर पहुना पधारे। गणेशजी कूकड़ा ने अभिनन्दन पत्र में पढ़ा—'इस अवसर पर हम ज्येष्ठ भ्राता सेवाभावी मुनिश्री चम्पालाल जी स्वामी का हार्दिक आभार मानते हैं जिनके अपूर्व सहयोग ने आपश्री के श्री चरणों को इस धरती की ओर आने के लिए बाध्य किया।'

ऊंचा, मरोली, जाडाणा, भीमगढ़, लांगच, चड़ावड़ी, रास्मी, मान्यास, रेवाड़ा, स्योनाणा, लाखोला होकर चैत कृष्णा अमावस्या को पुनः गंगापुर पधारना हुआ। भाईजी महाराज ने आते ही फरमाया—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'गंगापुर स्यूं गंगापुर तक, दिवस ग्यारह लाग्या,
पुर 'पहूंनो मिला, भाग अट्ठारह गांवा रा जाग्या।'

आचार्यप्रवर ने प्रसन्नतापूर्वक फरमाया—चम्पालाल जी स्वामी ! आपका सुझाव ठीक रहा। थोड़े समय में बहुत सारे गांव फरसे गये।

आज चैत्र शुक्ला प्रतिपदा है। नया सम्वत् २०२० प्रारम्भ होते ही भाईजी महाराज ने गुरुदेव को नये वर्ष की शुभकामनाएं एक आगम वाक्य के साथ निवेदित की—

'नाणेणं दंसणेणं च, चरित्तेण तहेव य।
खंतीए मुत्तीए, वड्ढमाणो भवाहि य ॥'

आर्य ! आपके लिए यह नया वर्ष ज्ञान से, दर्शन से, चरित्र से, क्षमा से, मुक्ति से प्रवर्धमान हो।

गंगापुर के लोगों ने कहा—भाईजी महाराज ने हमारे दिन कटवा दिए। मुनिश्री ने फरमाया—ऐसा नहीं, यों कहो—

अमावसी पधरावणो, एकम हुवै विहार।
दोसम्वत् गंगापुरफरस्या, 'चम्पक' जय-जयकार ॥'

भाई ! तुम्हें तो दो वर्ष मिले हैं २०१९ और २०२०। कम कहां है ? कम मत कहो, यों कहो—जय-जयकार कर दिया। दो वर्ष फरसे गए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५८

ईमानदारी की बात कोई मानेगा ?

२६ मार्च १९६३, चैत्र शुक्ला ४-५, वि० सं० २०१९ का दिन था। मध्याह्नोत्तर ३-३० सिरदारगढ़लावा से विहार कर हम आगरिया पहुंचे। सायंकालीन गुरु-वन्दना के बाद भाईजी महाराज प्रतिक्रमण कर रहे थे। एक भाई आया और कान में कुछ कह गया। कोई खास बात है। चेहरे की खिन्न रेखाएं बता रही थीं। एक के बाद दूसरा, तीसरा, चौथा यों प्रतिक्रमण के बीच कुछ लोगों का आना-जाना, घुस-पुस करना, स्पष्ट किसी रहस्य का संकेत था। सभी लोग मनोमन अटकलें लगा रहे थे। कोई अपना अनुमान बता रहा था तो कोई किसी को पूछने के प्रयत्न में था।

प्रतिक्रमण पूरा होते ही भाईजी महाराज ने दो क्षण आचार्यश्री के कान में कुछ कहा और बिना किसी विचार-विमर्श के पुनः अपने आसन पर विराज गये। इधर-उधर देखकर मुझे नजदीक आने का संकेत किया। मैं ज्यों ही मुनिश्री के निकट पहुंचा कि बिना कोई भूमिका बांधे, कड़े रुख से आपने पूछा—साफ-साफ बताओ। वह कहां है ? घस-पस की जरूरत नहीं है।

मैं भौंचक्का रह गया। धक्-धक् कलेजा धड़कने लगा। हाथों-पांवों में कम्पन शुरू हो गया। चेहरे की हवा उड़ गयी। मैं दिग्-मूढ़ था। यह कैसा प्रश्न ? यह कैसी कड़ाई ?

भाईजी महाराज ने आगे फरमाया—घबराओ मत ? डरने की आवश्यकता नहीं है, जो होना था हो गया। यथार्थ को बिना छुपाए यह बताओ वह है कहां ? जहां सन्तों ने सोने का स्थान निर्णय किया था, वह वहां नहीं है। यहां भी नहीं है ? वहां भी नहीं है। केवल उसकी नेश्राय का ओघा उस ठिकाने के दरवाजे-पोली में पड़ा है। तुम दोनों घनिष्ठ साथी हो। तुम्हारे बीच आंतरिक सलाह-सूत भी होती है। जो कुछ भी है। साफ-साफ बता दो, ताकि ढूंढ़ने वालों को नाहक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परेशानी न हो।

मैं अब तक मौन, नीचा सिर झुकाए, जमीन कुरेद रहा था। मुझे अनबोल देख, भाईजी महाराज ने मेरी पीठ पर हाथ रखा। प्रेम से सहलाते हुए फरमाया—यह कोई तुम्हारे पर आरोप थोड़ा ही है। तुम डर क्यों गए? जो होना होता है उसे कोई रोक नहीं सकता। तुम्हें जो पता हो वह बता दो। लगता है, उसके पैर उखड़ गए हैं। वह संघ छोड़कर भाग गया है, कायर···कहीं का···।

मैं इस घटना से सर्वथा अनभिज्ञ था। रात-दिन साथ रहने वाले साथी के विषय में यह कल्पना भी नहीं की जा सकती। मैंने कांपते स्वरों में कहा—सच-सच तो यह है कि मुझे कोई पता नहीं है, पर मेरी इस ईमानदारी की बात को कोई मानेगा? मैं बोलकर क्या करूं?'

भाईजी महाराज ने मुझे आश्वस्त करते हुए फरमाया—देख, औरों को विश्वास हो न हो, पर मुझे तो प्रतीत है। मेरे सामने तूने कभी गलत बात नहीं की। मैं मानता हूं तेरी चलती बात का लहजा ही कुछ और होता है। पर, यह हुआ कैसे? अकल्पनीय, अचिन्त्य···कहते-कहते मुनिश्री गंभीर हो गए।

दीक्षित होकर प्रारम्भ से ही पुष्पराज जी भाईजी महाराज के पास ही रहे थे। उनका सारा संस्कार-निर्माण मुनिश्री के हाथों से हुआ था। अपने हाथ से पाले-पोसे पौधों को यों अप्रत्याशित जड़ें छोड़ते देख, मन में आना स्वाभाविक था। उसमें भी भाईजी महाराज जैसे वात्सल्य प्रधान, दयार्द्र-हृदयी के लिए और भी दुसह्य था।

बीस साल का हमारा अपना सान्निध्य, अन्तरंग एकत्व, आज अनबोले ही टूट गया था। टूट गया था या जान-बूझकर तोड़ दिया गया था। पर खेद तो इस बात का हो रहा था कि बिना किसी पूर्व सूचना, सन्देह के एक तूफान आया और सहसा सब कुछ उड़ाकर ले गया। प्रातः से सायंकाल तक एक साथ रहने, बैठने, बोलने और कार्य करने वालों को इतना-सा भी सुराख न लगे, यह अवश्य सन्देहास्पद था, पर जो यथार्थ था, वह सही था। मुझे किसी भी तरह का न तो पता ही था और न सन्देह।

भाईजी महाराज के मन की प्रतिक्रिया एक दोहे के माध्यम से यों निकली—

'ओ कांटो कदस्यूं उग्यो, अरे! फूटरा फूल!
'चम्पक' होकर चतुर क्यूं, गई विधाता भूल?'

मन को खटकती हुई तीव्र वेदना शब्दावली में फूल के मिस उभरी। अक्सर भाईजी महाराज पुष्पराज के स्थान पर फूल का सम्बोधन करते थे। पुष्प और फूल एकार्थक जो हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५९

मन का कांटा

वि० सं० २०१९ वैशाख कृष्णा ४, १३ अप्रैल, १९६३, की बात है। रामसिंहजी के गुड़े से विहार कर हम राणावास जा रहे थे। मार्ग में एक बबूल का कांटा भाईजी महाराज के पैर के तलवे में चुभ गया। कांटा उसी स्थान पर चुभा जहां पहले से आइठाण (ऐठण) था। एक पांव भी आगे चलना कठिन हो गया। कांटा निकालने के लिए भरसक प्रयत्न किए पर वह नहीं निकला सो नहीं ही निकला।

यह प्रदेश कांठा है। यहां के कांटे भी नामी हैं। परसों ही एक कांटा लगा था। पूरी शूल पगथली में घुस गयी थी। बड़ी कठिनता से उसे पूरी ताकत के साथ खींचकर निकाला था। एक झटके में शूल तो निकल गयी पर साथ ही खून की धार भी बह निकाली। पैर में अच्छा-खासा दर्द हो गया। सेक आदि करने पर वह कुछ हलका पड़ ही रहा था कि आज उसी के पास दूसरा कांटा और लग गया। लंगड़ाते नीठ-नीठ राणावास लिया। कई सन्तों ने जो कांटा मास्टर थे, कोशिशें कीं पर वह भी तो पूरा जिद्दी ठहरा, निकालने वाले सारे हार गए। अन्त में झुंझलाकर भाईजी महाराज ने फरमाया—'छोड़ो अब मुझे दो' और देखते-ही-देखते शूल का एक गहरा सान्ता दिया और कांटे को ऊपर उठा लिया। अब क्या था कोई एक इंच लम्बा कांटा सपाक बाहर निकल आया। कांटे को देखकर मुनिश्री बोले—

> 'कांटो पग रो काढ़ दैं, 'चम्पक' चतुर चकोर।
> (पर) मन रो कांटो मायलो, कहो कुण काढै कोर ?॥'

सभी ने सन्तों को—जो वहां उपस्थित थे—भाईजी महाराज की इस मार्मिक पंक्ति ने गंभीर बना दिया। हम सभी बाह्य परिवेश को छोड़ भीतर को झांकने लगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६०

मजदूर पेट भर सकता है, धन नहीं जोड़ सकता

१० अप्रैल, १९६३ जोजावर (मारवाड़) के बाहर एक नयी बस्ती बसी है। उसमें सांसी लोग रहते हैं। वहां उन्हें कंजर कहते हैं। पक्के मकान। अच्छे कपड़े, थोड़ा-सा ठाठिया। भाईजी महाराज ने पैर थामकर देखा और पूछा यह बस्ती किसकी है? इतने में एक लड़की आती दिखाई दी। हम दो मिनट रुके। मुनिश्री ने उससे पूछा—बाई! तुम कौन लोग हो? वह हिन्दी बोल सकती थी। उसने हाथ जोड़कर उत्तर दिया—महाराज! हम तो कंजर लोग हैं।

उसकी सभ्यता, पहनाव, बोली-चाली और नम्रता कंजरों जैसी नहीं थी। उसने बताया—हम लोग भी अब शहरी सभ्यता सीख रहे हैं। जैसा देश वैसा वेश। हमारी जाति के कुछ नयी पीढ़ी के बच्चे पढ़ने भी लगे हैं। जब उससे कामकाज के विषय में पूछा तो वह जरा ठिठक गयी। उसने ससंकोच सीधा-सादा उत्तर दिया—गांव में इधर-उधर का काम ही करते हैं, महाराज!

हम आगे बढ़े। हमारे साथ कुछ ग्वालों के बच्चे हो गए थे। वे भेड़-बकरी चराने जा रहे थे। उन्होंने हमारी बातें सुनी थीं। वह लड़की काफी दूर निकल गयी। हम भी कंजर बस्ती पार कर गये। गड़रिये भी हमारे साथ-साथ थे। वे फूल-फूलकर गुब्बारा हुए जा रहे थे। कुछ कहना चाहते थे। पर कहने की हिम्मत नहीं हो रही थी। एक कहता था—'तू कह' और दूसरा कहता था 'इतनी बलत है तो कह दे तू ही।' भाईजी महाराज ने फरमाया—क्यों भाई! क्या कहना चाहते हो? लो मैं पूछता हूं, तुम दोनों ही बता दो।

उनमें से एक ने कहा—सन्तो! आप जिससे बात कर रहे थे—वह कंजरों की छोरी थी। ये कंजर बड़े छाकटे होते हैं। आपने जब उससे पूछा—तुम क्या काम करते हो, तो वह बोली क्यों नहीं? बोलती कैसे महाराज! पानी मरता है, पानी। ये लोग चोर हैं, चोरी करते हैं। बिना चोरी के कभी पैसे इकट्ठे होते हैं? ये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पक्के मकान, बढ़िया-बढ़िया कपड़े और रहीसी ठाठ-बाट, सभी मजदूरी से थोड़ा ही होता है? मजदूर पेट तो भर सकता है, पर धन नहीं जोड़ सकता। धन का ढेर तो चोरी से ही होता है, सन्तों!

अनपढ़ भेड़-बकरी चराने वाले, बच्चों की बात भाईजी महाराज के खटोखट जंच गयी। बात सोलह आना सही थी और थी बिना किसी नमक-मिरच के। सीधे-सादे शब्दों में मन की खुली बात भाईजी महाराज को खूब पसन्द थी। आज दिन में बहुत बार मुनिश्री ने उसी बात को दुहराया—'माठा! छोरा भारी ज्ञान की बात कही।'

प्रातःकालीन व्याख्यान में भाईजी महाराज ने वही प्रसंग छेड़ा और कहा—

'एक जग्यां दरड़ों पड़ै, (जद) ढ़िगलो दूजो ठोर।
'चम्पक' धन चोरी बिना, भेलो हुवै न भोर॥'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६१

जानवर का क्या ?

१० अप्रैल, १९६३ को वैसाख कृष्णा दूसरी प्रतिपदा थी। हम जोजावर के गढ़ में ठहरे थे। जोजावर ठाकुर साहब बड़े साहसी और सेवा-परायण हैं। उन्होंने भाईजी महाराज से निवेदन किया—जरा आप पिछबाड़े पधारो तो आपको एक शेर का बच्चा दिखाऊं। भाईजी महाराज ने श्लेषालंकार में फरमाया—ठाकरां! शेर का बच्चा क्या, हम तो शेर को ही देख रहे हैं।

सेवाभावी मुनिश्री जी के साथ जोजावर ठिकाने का घनिष्ठ सम्बन्ध है। ठाकरों का भक्ति-भाव और मुनिश्री का वात्सल्य दोनो ही बेजोड़ हैं। भाईजी महाराज ने हंसकर कहा—ठाकरां! खुल्ला शेर देखने की तो मनसा रहती है, पर आपके शेर का बच्चा तो पिंजड़े में होगा? बन्द शेर को क्या देखें? ठाकुर बोले, हुक्म! वही दिखाऊंगा जो आपकी मनसा है, जरा पधारो तो सही। मुनिश्री बाड़े में पधारे। ठाकुर-सा दौड़कर आगे चले गए।

हमने देखा ठाकरों के साथ कुत्ते की तरह जंजीर से बंधा एक शेर का बच्चा आ रहा है। उन्होंने उसे संकेतों के आधार पर लिटाया, उठाया और मुंह में अंगुली दी। वह शेर होकर भी पालतू जानवर बन गया था। भाईजी महाराज बड़े निर्भीक और साहसी थे। उनका राजपूती मानस अनोखा था। मुनिश्री जरा आगे बढ़े और शेर को ज्यों ही हाथ से छुआ कि वह गुर्राया। ठाकर ने बताया—भाईजी महाराज! अभी तक इसके मुंह पर खून नहीं लगा है। यह नहीं जानता खून का स्वाद कैसा होता है? मैं इसे पास में बिठाकर सोता हूं। यह पल्यंक के चारों ओर चक्कर लगाता घूमता रहता है।

भाईजी महाराज जरा गम्भीर हो गए—ठाकरां! ओ आसंगो आछो कोनी?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओ जिनावर है, आज तो मिनखां रोइ विश्वास कोनी रह्यो, इं जिनावर को के ?'

ठीक नहीं है ठाकरां !, बेजां ओ विश्वास।
अन्त जिनावर जात रो, चम्पक के इकलास ॥
चम्पक के इकलास, क आछो नहि आसंगो।
बिना अरथ कोई वगत, अचानक बधै अड़ंगो ॥
खतरनाक खुंखार नें, रखणो घणो नजीक।
नीपोतां री प्रीत आ, नहीं ठाकरां ! ठीक ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६२

मुंह कैसे निकलेगा ?

बीकानेर, हमालों की बारी के बाहर, गंगाशहर-मार्ग की बात है। नाहटों की बगीची के पास हम आचार्यप्रवर के आगमन की राह देख रहे थे। भाईजी महाराज का ध्यान एक ओर पड़े घडे (मंगलै) पर गया। एक कुत्ता बार-बार उसमें मुंह डालने का यत्न कर रहा था। अपना-अपना अन्दाजा है। प्रायः देखा गया है भाईजी महाराज का अन्दाजा शतप्रतिशत सही उतरता है। कुत्ते को देख मुनिश्री ने फरमाया—लगता है, इस घड़े में कोई न कोई खाने की चीज है। कुत्ता खाने के लोभ में प्रयत्न तो कर रहा है—किसी तरह मुंह भीतर तक पहुंच जाए। और जोर लगाने पर मुंह भीतर चला भी जाएगा पर यह अज्ञानी इतना नहीं समझता, फंसा हुआ मुंह फिर निकलेगा कैसे ?

हम बात कर ही रहे थे कि वही हुआ, जो भाईजी महाराज का अन्दाजा था। कुत्ते ने जोर लगाया और मुंह घड़े में फंस गया। अब तो लेने के देने पड़ गये। कुत्ता घबरा गया। वह अंधेरे में भटके प्राणी की भांति दिग्मूढ़ हो गया। उसे कुछ दीख नहीं रहा था। वह पड़ोस के ढ़िस्से की ओर ऊपर चढ़ने लगा। वह चढ़ता है फिर लुढ़कता है, नीचे तक आ गिरता है। फिर चढ़ता है फिर गिरता है।

इतने में आचार्यश्री पधार गए। भाईजी महाराज ने संकेत करते हुए फरमाया, "खमा ! अन्दाता ! दिखाओ ! अज्ञानी कुत्ते की दशा। ओ लोभ ही मरावै है इं मिनख नै।"

आचार्यप्रवर ने कदम रोके और पूछा—अब यह कैसे निकलेगा ?

पास खड़े एक गृहस्थ ने कहा—निकल जाएगा यों ही।

भाईजी महाराज ने अर्ज की—नहीं-नहीं, अन्दाता ! यों निकलने वाला नहीं है। यह गलवा इस कदर इसके गले में फंसा है कि घड़ा फूट जाने के बाद भी यह गलावड़ा तो संभवतः इसके गले में कई दिन रहेगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देखते-देखते वह कुत्ता एक बार फिर चढाई में काफी ऊपर तक चढ़ा और फिर लुढ़क गया। जब तक चैं-चैं करता नीचे आया, आचार्यश्री के साथ रहने वाले कासीद हणूताराम जाट ने घड़े पर एक लकड़ी मारी। फटाक घड़ा फूटा। घड़ा तो फूट गया, पर उसका गला कुत्ते के गले में ही रह गया। कुत्ता मुक्त होते ही इस कदर भागा मानो पिंजरे से पंछी छूटा हो। हमने कई दिनों तक देखा वह कुत्ता उस गलवे को अपने गले में लिये फिरता रहा। जब भी वह हमें दिखता भाईजी महाराज फरमाते वह रहा 'केदार कंगण।'

"लाग्यो 'चम्पक' 'लोभ मैं, कुक्कर बिना विचार।
कई दिनां तक खटकसी, ओ कंगण केदार॥"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६३

जेट की जेट कच्ची

मुनि वसन्तलालजी (पेटलावद) श्री भाईजी महाराज के पास १७ वर्षों से थे। वैसे उनका स्वभाव भोला था। सेवा का गुण और प्रकृति मिलनसार थी। वे बालोतरा मर्यादा महोत्सव शताब्दी पर मुनिश्री के पास आये और रोने लगे। भाईजी महाराज ने पूछा—क्या बात है? वे कुछ बोल नहीं पाये। इतने में उनके संसार पक्षीय पिता मुनि जड़ावचन्द जी पहुंचे। वे कहने लगे—भाईजी महाराज! आपकी बड़ी कृपा रही है। आप बड़े हैं। आपके हाथ लम्बे हैं। मेरा निभाव किसी तरह हो जाए, आपको कृपा करानी पड़ेगी। बुढ़ापे में सहयोग के बिना कैसे पार पड़े?

भाईजी महाराज ने फरमाया—जड़ावजी! निश्चित रहो। संघ में सब का निभाव होगा। तुम्हारे निभाव के लिए ही तो गुरुदेव ने दया कर तुम्हारा सिंघाड़ा किया है। जबकि हम सब जानते हैं, सिंघाड़े की योग्यता तुम्हारे और मेरे में कितनी है? निभाव सन्तों के सहयोग से होगा। संत निभाओ। प्रकृति को बस में करो।

वे बोले—निभाव के लिए ही तो आपसे अर्ज करता हूं।

भाईजी महाराज ने फरमाया—निभाव तो गुरु देव करवायेंगे। रास्ते-रास्ते चलो, निभाव सबका हो रहा है, होगा।

वे बोले—वसन्तीलाल जी स्वामी को मेरे साथ भेजने की कृपा कराओ। इनके बिना मेरा निभाव नहीं होता। गुरुदेव ने फरमाया है—पहले चम्पालाल जी स्वामी से पूछो।

भाईजी महाराज ने कहा—यह तो आचार्य देव की कृपा है। वसन्तलाल मेरा नहीं है, गुरुदेव का है। उन्होंने मुझे दिया, मेरे पास है। तुम्हें दिलायें, तुम्हारे साथ हो जाएगा। पर इससे पूछा है? इसका क्या मन है?

वसन्तलालजी बोले—मेरा मन जाने का है। आखिर मेरे पिता हैं। ये कहते हैं—साथ चलो, वरना मेरा निभाव नहीं होगा। इनका मन कमजोर हो गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाराज ! मेरी गलती माफ करें, मैंने आपसे पूछे बिना ही गुरुदेव को अर्ज कर दी है।

मुनिश्री ने फरमाया—पूछे बिना अर्ज तो कर दी, पर यह सलाह किसने दी तेरे को। देख, बुरा तो तेरे को भी लगेगा और इनको भी लगेगा, पर ये लक्षण बाप के नहीं पाप के हैं। कहीं तुझे न डुबो दे, ध्यान रखना।

अरे ! बाप रो मोह ओ, आछो नहिं है अन्त।
'चम्पक' फोड़ा पड़ेला, सुणाले सन्त वसन्त ॥

वे जड़ावचन्दजी के साथ गए और वही हुआ जो मुनिश्री की धारणा थी। बाप तो गया सो गया, बेटे को भी ले गया। जब ये समाचार सुने तो अफसोस के साथ भाईजी महाराज ने फरमाया—

'मालव री काची रही, ठेट जेट की जेट।
गा, गलावड़ो ले गयी, खेलो मटियामेट ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६४

पेट्रोल भभक जाय तो

दिल्ली फंवारा रोड की परली नुक्कड़ पर एक पेट्रोल पम्प था। गाड़ी में तेल भर देने के बाद ड्राइवर एक कनस्तर में तेल भर रहा था। हमने देखा एक सज्जन वहीं पास खड़े सिगरेट पी रहे थे। भाईजी महाराज का ध्यान गया। मुनिश्री ने फरमाया, आदमी तो पढ़ा-लिखा सभ्य-सा लगता है पर संयम की कमी है। सिगरेट कहां पीना, कहां न पीना इसे इतना ही ध्यान नहीं है। पेट्रोल भभक जाए तो?

हम अभी कम्पनी बाग का फाटक पार ही नहीं कर पाये थे कि अचानक आग भभक गयी। वे सज्जन, जो सिगरेट पी रहे थे, चपेट में आ गये। उनके पांव में तथा हाथ में दो चार फफोले फूटे। आग शीघ्र ही शान्त हो गई। खास नुकसान नहीं हुआ।

भाईजी महाराज स्वयं पुनः वहां पधारे। उस भाई को दर्शन दिए और पूछा—क्यों घबराहट तो नहीं है? तुम्हारा भाग्य तेज था, देखो, थोड़े में ही सर गया। भाई! शूली की सजा कांटे में ही टल गयी। अभी-अभी मेरे मन में आया ही था—आदमी तो सभ्य और सज्जन लगते हैं, पढ़े-लिखे होकर भी संयम की कमी है। सिगरेट कहां पीना, कहां न पीना, जानते हुए भी प्रमाद कर रहे हैं। भाई! सिगरेट काम की नहीं है। देखो, अभी कितना अनर्थ हो जाता?

'छोटी-सी गलती बणैं, 'चम्पक' भारी भूल।
सारहीन सिगरेट नैं, मानो अनरथ मूल॥'

भाईजी महाराज के साफ हृदय की सच्ची बात चोट कर गयी। उस भाई के मन में ग्लानि हुई और उसने मुनिश्री के चरण छूकर सदा-सदा के लिए सिगरेट छोड़ दी।

भाईजी महाराज ने आशीर्वाद के रूप में मांगलिक फरमायी और उसे प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहने का उपदेश दिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६५

नाभि हमारी जड़ है

बीदासर की बात है। दडीवे का एक ग्रामीण आया। कुंभार-प्रजापति। बूढ़ा आदमी। पर था रसीला-रंगीला। पहुंचा हुआ। बात ही बात में उसने पूछा—सन्तो! पेड़-पौधे, घास-फूस सबके जड़ होती है। जड़ के बिना कोई नहीं पनपता। बताओ देखें, इस शरीर की जड़ क्या है, कहां है?

बड़ा विचित्र प्रश्न था। मैं हैरान था। शरीर की जड़ कहां बताऊं? पैर? नहीं-नहीं—पेट? बूढ़े ने उलझा दिया। वह गांव का अनपढ़। ऊंची धोती, फटा अंगरखा, पुरानी-सी पगड़ी। मैंने सहज उत्तर दिया—बाबा, समझ में नहीं आया, भला शरीर के भी कोई जड़ होती है? हां, शरीर स्वयं जड़ है, यह तो ठीक है?

मेरा उत्तर सुन भाईजी महाराज को झुंझलाहट आयी। उन्होंने फरमाया—

गई अकल गावन्तरे, सागरिया! कीं सोच,
नाभि जड़ नर-देह री कहदै निःसंकोच॥"

कहां उलझ गया! क्या नाभि हमारे शरीर की जड़ नहीं है? जब हमारे शरीर के अवयव भी नहीं फूटे थे, क्या हम नाभि से शक्ति नहीं पा रहे थे? मां के पेट में नाल ही हमारे पोषक तत्त्वों का स्रोत था। उनका सहज सात्विक उत्तर मेरे लिए प्रकाश बन गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६६

कामचोर

भाईजी महाराज सहज योगी थे। वे हर वस्तु को द्रष्टाभाव से देखा करते। कभी कभी सहजता में निकली बात सूत्र बन जाती है। उसका भाष्य फिर बौद्धिक लोग करते हैं। एक दिन भाईजी महाराज विराजे थे। मैं पास ही बैठा था। वहीं एक चींटियों का बिल था। राजस्थानी भाषा में उसे कीड़ी-नगरा कहते हैं। नगर और नगरा में केवल एक आ की मात्रा का ही तो अन्तर है। था आखिर नगर का नगर। हमने देखा चींटियां भागी जा रही थीं। सैकड़ों की संख्या में अनवरत आवागमन चालू था। चींटियां मिट्टी की ढुलाई कर रही थीं। कुछ आ रही थीं, कुछ जा रही थीं। एक तांता-सा लगा हुआ था। इतने में मैंने देखा एक चींटी को दस-बारह चींटियां घसीटकर ला रही थीं। चारों ओर घेरा बना हुआ था। मैंने पूछा—भाईजी महाराज! और-और चींटियां तो मिट्टी ढो रही हैं और ये, बेचारी इस जिन्दा चींटी की टांगें खींचे ला रही हैं। क्या बात है?

भाईजी महाराज मुस्कराये और बोले—तुम नहीं समझे? चींटियों के नगर में भी एक व्यवस्था होती है। सबको बराबर श्रम देना होता है। ये लोग संज्ञा प्रधान जीव हैं, इन्हें भी अपने कर्त्तव्यों और दायित्वों का बोध है। लगता है—इस चींटी ने श्रम से जी चुराकर काम करना बंद कर दिया होगा। इनके यहां कामचोर, आलसी को स्थान नहीं है। ये सब इसीलिए टांगें पकड़कर इसे बाहर छोड़ने आई हैं। इन्होंने इसे अपने संघ से बहिष्कृत कर दिया है। बहिष्कृत को—जो संघीय नियमों का उल्लंघन करता है—यों ही हटाया जाता है। जो बराबर सम-विभागीय श्रम नहीं करता, उसे मंडल में कौन रखेगा? जो समूह में रहकर मिल-जुलकर काम नहीं करता, सुख-दुख में सहयोगी नहीं बनता, उसे कौन बरदास्त करेगा?

'कीड्यां भी कोनी करैं, निःकरमा स्यूं नेह।
पकड़ टांगड़ी फेंक दैं, परली कानी पेह।।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६७

तब का हमारा साथ है

सुजानगढ़ में भाईजी महाराज के तकलीफ हुई। डाक्टर व्यासजी का इलाज चला। डॉक्टरों को हार्ट पर दबाव का बहम था। इ० सी० जी० भी इसी बहम की पुष्टि करता था। हंस महल में विश्राम किया गया। सरदारशहर के लोग दर्शन करने आये। उन्होंने भाइजी महाराज को सरदार शहर पधारने की प्रार्थना की। विशेषकर वाणिंदा-वास वालों का जोर इसलिए था क्योंकि उनके वहां एक संथारा चल रहा था। सूरजमल जी दुगड़ की बहू धर्म-परायण महिला थीं। उनका जीवन ही धर्म-ध्यान, सामायिक संवर साधु-सन्तों की सेवा और स्वाध्याय-चिंतन में सफल हुआ। उनकी वंदना करने की विधि भी निराली थी। लाखों-लाखों श्रावकों में उनकी वन्दना नहीं मिलती। वे जमे-जमाये मुंह लगे पाठ। कृतज्ञता और लोमहर्षक उल्लास। भाईजी महाराज उन्हें 'मद्दू का बड़ियाजी' कहकर जीकारा देते। उन्होंने आचार्यप्रवर के श्रीमुख से अनशन पचखा। उनकी आखिरी अभिलाषा थी—भाईजी महाराज के चरणों में मेरा अनशन पूरा हो (संथारा-सीझे) हनुमानमल जी दुगड़ आये, अर्ज की और भाईजी महाराज ने सरदारशहर पधारने की स्वीकृति दे दी। डॉक्टर अभी विश्राम देना चाहते थे। इच्छा कम-कम होते हुए भी डॉक्टर व्यासजी ने विहार की हां भरी। डॉक्टर व्यासजी भाईजी महाराज के परम भक्त हैं। समर्पित डॉक्टर मुनिश्री का वचन टाल नहीं सकते थे। अनचाहे हां भरनी पड़ी। सुजानगढ़ से विहार हुआ।

सरदारशहर की सहल-समिति ने दोनों ओर की (लाने और पहुंचाने की) सेवा की। इधर वे भर गरमी के दिन, उधर सहल-समिति के अमीर सदस्य। किसी तरह मेल नहीं था। ऐसे दिनों में कोई भी घर से बाहर निकलना नहीं चाहता, वहां वे अमीरजादे छोटे-छोटे गावड़ियों के झूंपों में दिन काटते, भाईजी महाराज के लिए। सहल-समिति का नामकरण भी भाईजी महाराज का अपना किया हुआ था। यों तो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिदिन सैकड़ों लोग आते-जाते पर सहल-समिति ने स्थायी डेरा जमाया। छोटे बड़े सभी समिति के सदस्य एक सरीखे, हंसते-खिलते, रलते-मिलते और रंगीले-रसीले थे। घंटों-घंटों भाईजी महाराज के पास बैठते। कभी ज्ञान-चर्चा करते तो कभी अनुभवों का आदान-प्रदान। जिज्ञासाएं चलतीं। कभी-कभी बीच मीठा-मीठा विनोद भी होता। एक-सी उम्र के संगी-साथी। भाईजी महाराज का मन बढ़ता गया। सहल-समिति थोड़े ही दिनों में भाईजी महाराज के मुंहलगी समिति बन गयी। बीच-बीच में कुछ लोग यह भी कहने लगे—भाईजी महाराज ने इस सबको इतार दिया है। कुल मिलाकर उन समिति के युवकों ने भाईजी महाराज का मन लगा दिया।

भंवरलाल जी बरडिया जरा कोमल प्रकृति के हैं। कष्ट में कमजोर और जल्दी ही घबरा जाने वाले। साथ-साथ शरीर भी श्रम को कम बर्दास्त करता है। आज वे विहार में पैदल साथ हो गये। रास्ता ज्यादा लंबा तो नहीं था, पर गरमी से वे आते (आतंकित) हो गये। उनका लाल सुरख मुंह देख, भाईजी महाराज ने चाल धीमी की। बार-बार पूछते चले—'क्यूं भंवरू। के सल्ला ? और धीरे चालूं ?'

मैंने पूछा—'महाराज। आपके भंवरू से इतना क्या है ?'

भाईजी महाराज ने फरमाया—रिश्ता तो कुछ नहीं है पर भंवरू के पिता जयचन्दलालजी मेरे साथी हैं। ओलंभे के भी और शाबासी के भी।

मालवा यात्रा में इन्दौर-उज्जैन के बीच एक 'तिराणा' नाम का गांव आया। उन दिनों वहां आठ घर थे। सात गुसाइयों के और एक राजपूतों का। आचार्य कालूगणी महाराज राजपूतों की कोटड़ी में विराजे। हम कुछ सन्तों ने गुसाइयों की तिबारी में जगह धारी। यात्री लोग अगले गांव चले गये। सेठ गणेशदासजी गधैया यात्रा में साथ थे। जयचन्दलालजी (बरडिया) ने गधैयाजी से पूछा—आप कहे तो आज रात को यहीं सेवा करने की मनस्या है। वे रह गये। हमने दिन में ही सलाह-सूत कर ली थी—यदि आज रहो तो रात में रागे (देशियां) चितारेंगे। प्रतिक्रमण के बाद हमारी गोष्ठी जमी। हम सोच रहे थे आज एकान्त है। गुरुदेव से बहुत दूर हैं। खुलकर गायेंगे। निःसंकोच भाव से हम गाने में तल्लीन हो गये। वह ठंडी रात। वह उमर, गले में जोर, मन में जोश, छोटा गांव, भिन्न-भिन्न राग-रागनियों का प्रत्यावर्तन, प्रहर रात गये तक हमारी गोष्ठी चली। गाने वालों में चार-पांच मुनि थे और श्रावक जयचन्दलाल बरडिया थे। गांव के दस-पांच लोग आ गये। हमारा मजमा खूब जमा। उस रात हमने—'चन्द-चरित्र' तथा राजस्थानी लोकगीतों की धुनें दुहराईं।

प्रातःकाल विहार कर 'सामेर' पहुंचे। गुरुदेव एक बड़े हाल में विराजे। उसी में लकड़ी की पैड़ियां चढ़कर ऊपर कमरे में हम संत बैठे थे। तुलसी मुनि ने जयचन्दलाल जी को सेवा करने को कहा। वे वहां बैठे थे। अकस्मात् गुरुदेव ने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूछा—रात को कौन-कौन सन्त गा रहे थे। बुलाओ उन्हें। पूछने का ढंग जरा कड़ा था। तपस्वी सुखलालजी स्वामी पता लगाने आये। हम संत सहम गये। मुनि सुखलालजी ने संतों के साथ-साथ जयचन्दलाल जी से भी कहा—जयचन्द ! इय कियां सुनों-सुनों बैठ्यों है? गुरुदेव याद फरमावै है नी ? हम सब गुरुदेव के श्रीचरणों में उपस्थित हुए। आचार्यदेव ने जरा आंख तेज कर फरमाया—रात को वह कौन-कौन थे ?

अब बोले कौन ? हम सबके कलेजे हाथ में आ रहे थे। गधैया गणेशदासजी ने बात साहरी, 'गुरुदेव ! आप कृपा कराओ। आप बिना टांबरां री गलत्यां कुण निकाले।"

हम सबको तो पसीना छूट रहा था। कालूगणीराज जब कड़ाई करवाते उनका वह सिंह रूप देखते ही थर्रे कांपने लगते। जयचन्दलाल जी ने हिम्मत कर कहा—चम्पालाल जी स्वामी थे, अब मैं कहां छुपता ? मैंने साहस बटोरा और कहा—हम थे गुरुदेव ! अमुक-अमुक-अमुक।

कृपालु कालूगणीजी जरा मुस्कराये और फरमाया—ऐसे गाया करते हैं ?

बस, अब क्या था। हम सबके जी के जी आ गया। पुनः अमृत झरती गुरुदेव की आंखों ने हमें अभय दे दिया। सबके चेहरों पर खुशहाली दौड़ आयी। पासा पलट गया। वातावरण में नया रंग आया। अब लगे गुरुदेव एक-एक कर रात को गायी गयी रागों को पूछने। कई रागों में अन्तर था, वह फर्क निकाला। कहीं तोड़ ठीक नहीं थे, उन्हें सुधारने को फरमाया। सब गायकों में मेरी देशी पास रही। आचार्य देव ने मुझसे—जल्लो, करवो, करेलो, कुरज्यां और कील्यों सुनी। ये रागें एक तो कड़ी बहुत हैं, दूसरे गुरुदेव के सामने अच्छे-अच्छे गायक भी घबरा जाते हैं, उनका अतिशय ही ऐसा होता है। जयचन्दलालजी ने जैसे उपालम्भ में सहयोग दिया, वैसे ही शाबाशी में भी साथ निभाया। जब-जब गाते-गाते मेरा गला भर जाता, या मैं आगे की पंक्ति भूल जाता तो जयचंदलालजी ने उस जोड़-तोड़ में टेरिये की भूमिका निभाई।

श्री भाईजी महाराज ने अपना संस्मरण समेटते हुए कहा—भाई तब से जयचन्दलालजी का हमारा साथ है। भला, भंवरू की रखूं इसमें क्या बड़ी बात है ?

ये फूल से टाबर, इस गरमी में सेवा जो कर रहे हैं, कौन निकले इस लाय में ? सोने का टक्का देने पर भी ये आने वाले नहीं हैं। इन सहल-समिति के युवकों की लगन और भक्ति-भाव है, अतः मेरे लिए इन्होंने इतना कष्ट उठाया है। मैं तो उस सिद्धान्त का आदमी हूं।

'मतलब स्यूं 'चम्पक' मिल ज्याणो, बता ! बड़ो के बात?
एकर साथ निभावै बीं रो, सदा निभाणो साथ।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६८

इतने में ही टल गया

अणुव्रत-विहार (दिल्ली) के फाटक पर भाईजी महाराज खड़े मेरे आने का इन्तजार कर रहे थे। पास में कुछ लोग थे। मन्नालालजी बरड़िया (सरदार-शहर) भी वहीं थे। एक अवस्था प्राप्त सज्जन स्कूटर पर निकले। पीछे बैठी थी उनकी श्रीमतीजी। स्कूटर जरूरत से अधिक तेज था। उन्हें देख, भाईजी महाराज ने कहा—'मिन्नू ! देख, बुढ़ापो भड़कावै है। ओ कठेई भुवाली खायला भलो।'

धड़ाम आवाज आई। देखा अगली मोड़ पर मुड़ते हुए वृद्ध दम्पति का स्कूटर फिसल गया। श्रीमतीजी दो-तीन गुलेटी खा, एक ओर जा गिरीं। स्कूटर एक ओर था और श्रीमानजी एक ओर। लोग भाग कर गये। उन्हें उठाया। बहुत थोड़े में सर गया था।

हमने बहुत बार देखा ऐसे अवसर पर भाईजी महाराज चूकते नहीं थे। मुनिश्री घटना-स्थल पर पधारे। उनसे पूछा—चोट ज्यादा तो नहीं लगी ? भाई साहब ! स्कूटर चलाने में भी संयम की अपेक्षा है। दो मिनट के लोभ का परिणाम जीवन को खतरा होता है। पर, किसे कहें ? किसी को भी फुरसत नहीं है। समय की जितनी तंगी आज के लोगों को है, शायद पहले वालों को नहीं थी।

'संयम सुध-बुध विसर कर, भाजड़-भाजी जाय।
'चम्पक' चेतो बापरै, (जद) फल प्रमाद रा पाय॥'

और वे सज्जन हाथ जोड़े कह रहे थे—'सत्य वचन' सन्तों के दर्शन भले हुए, इतने में ही टल गया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६६

प्रेम की एक कड़ी

पराये का अनादर सह लेना आसान है, पर अपने वाले का जरा-सा भी अनुचित व्यवहार पहाड़ बन जाता है। २५वीं भगवान महावीर-निर्वाण-शताब्दी का अवसर था। आचार्यप्रवर दिल्ली पधारे। व्यवस्था समिति के सदस्य व्यवस्था में जुटे। एक दिन अर्थ-संग्रह करते कुछ वरिष्ठ सदस्य एक दुकान पर पहुंचे। वह भाई पहले ही उफणा हुआ था। समाज के सदस्यों को देख भड़क उठा। आदर-सत्कार तो गया कहीं। वह उलटा-पुलटा बोल पड़ा। चले जाओ यहां से, भिखारी···। जो शब्द नहीं बोलने चाहिए थे, बोल गया। बोला ही नहीं उन्हें दुकान से उतार दिया।

खिन्न होकर आये सदस्यों ने जब भाईजी महाराज के दर्शन किए तो उन्हें उदास-उदास देख मुनिश्री ने पूछा—आज ऐसे कैसे ?

एक भाई ने बीती बात बताते हुए कहा—मत पूछो मुनिश्री ! ऐसा अपमान तो शायद एक विरोधी-शत्रु भी अपने घर आए का न करे, वैसा किया आपके भगत ने। उन्होंने सारी घटना बतायी। सुनकर भाईजी महाराज के मन पर प्रतिक्रिया हुई। सामने वाला आदमी समझदार था। कट्टर तेरापंथी, आज का नहीं पीढ़ियों का। वह भी मुखिया परिवार का। रोज आने वाला, लगनशील। इतना ही नहीं, कहना तो यों चाहिए, खुद व्यवस्था करने वाला। फिर भी यह सब क्यों हुआ ? बात जची नहीं।

वह भाई आया। मुनिश्री को तो पूछना ही पूछना था। वहां तो नगद व्यापार था, उधार का क्या काम ? बेचारा बोले भी तो क्या ?

भाईजी महाराज ने फरमाया—भोले ! समाज के भाई का तिरस्कार ? अनादर ? अपशब्द ? कल कौन आएगा तेरे घर ? समाज के बिना सामाजिक प्राणी का काम चलता है ? भूल का प्रायश्चित्त केवल अनुताप से नहीं होता। व्यवहार परिष्कार मांगता है। तुमने यह गलती की तो कैसे की ? सुन !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो देणै जोगो हुवै, उणनै ही बतलावै।
'चम्पक' मांगण नै भलां ! कुण किणरै घर जावै ॥'

समय की चोट लगी। सुनते ही उसकी आंखें नम हो गयीं। वह नीचे गया। कार्यालय में जा माफी के साथ पुनः तशरीफ लाने का आमंत्रण दिया। लोग जाना नहीं चाहते थे। भाईजी महाराज ने द्वेष-रोस को प्रेम में बदलने का सुझाव दिया। लोग गए। उसने जो आतिथ्य किया, जाने वाले कल की बात भूल गए। चेक-बुक सामने धर दिया—जो मरजी हो लिख लो। जो प्रेम उभरा। बात लेने-देने की नहीं होती। प्रेम के सामने लेन-देन छोटा पड़ता है। पुनः भाई-भाई जुड़ गए। तोड़ना आसान है पर जोड़ने में तप चाहिए, प्रभाव चाहिए। श्री भाईजी महाराज को टूटते हुए दिलों को जोड़ना आता था। वे समाज में प्रेम की एक सशक्त कड़ी थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७०

मूर्ख से मौन

आचार्यप्रवर का वि० सं० २०३१ में बहुत लम्बा दिल्ली-प्रवास हुआ। एक दिन अणुव्रत-विहार की दूसरी मंजिल पर मैं एक भाई से बातें कर रहा था। वह नामधारी तेरापंथी हमारे संघ और संघपति के विपरीत कुछ अंट-संट शिकायतें लाया था।

मैं उसे वस्तुस्थिति समझा रहा था। हमारी चर्चा लंबी होती गयी। हम दोनों डटकर तर्क प्रस्तुत करते रहे। चलते-चलते वह गंदी, भद्दी और अश्लील बातों पर उतर आया। मैं उसे किसी भी एक बात को सप्रमाण सिद्ध करने को कह रहा था। मैं भी अड़ गया, वह भी अड़ गया। वह कह रहा था—आप मुझे घुमाफिरा कर भूल-भुलैया में डालना चाहते हैं और मैं कह रहा था—तुम्हारी इन गंवारू और बाजारू बातों का जनता पर कोई असर होने वाला नहीं है। यदि इनमें से एक भी सत्य है तो प्रमाणित करो।

वह उत्तेजित होकर किसी एक बात को सिद्ध करने के बदले दसों और-और अंट-संट बातें उछालने लगा।

यह सब श्रीभाईजी महाराज को कब पसन्द पड़ने वाला था। उन्होंने मुझे एक बार खंखारकर संकेत किया, पर मैं नहीं समझा। समझा तो क्या नहीं, पर यों ही कहना चाहिए ध्यान नहीं दिया। हमारी चर्चा बादा-बादी चलती रही। दूसरी बार फिर पास पड़े लकड़ी के तख्ते को हिलाने के बहाने संकेत आया। फिर भी मैं नहीं उठा।

इतने में वह हिसार चातुर्मास का हवाला देते हुए एक अधमतम घटना कह गया, जो सर्वथा अश्राव्य थी। श्रीभाईजी महाराज का जी तिलमिला उठा। उन्होंने मुझे टोकते हुए फरमाया—सागरिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कालै[1] स्यूं कयानै करै, मूरख ! माथाकूट
कुओ कबूतर नै दिसै, झूठै नै सो झूठ'

वह बेचारा देखता ही रह गया। हमारे दोनों के होंठ चिपक गये। वह बिना कुछ आगे बोले सपाक चलता बना। मैं सोच रहा था—आज भड़ाके उड़ेंगे। पर मुनिश्री ने मुझे एक बात के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं कहा। केवल एक प्रश्न पूछा—सागर ! मूरख से काम पड़े तो क्या करना चाहिए? मैंने नीची नजर टिकाये कहा-- मौन। श्रीभाईजी महाराज प्रसन्नचित्त से जरा मुस्कराए और मैं निश्चिन्त भाव से अपने काम में लग गया।

१. बे-समझ, कलुषित, मन के मैले या कुमाणस को राजस्थानी भाषा में 'काला' कहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७१

बोलो मत, काम बढ़ेगा

श्री डूंगरगढ़ मर्यादा-महोत्सव पर श्री भाईजी महाराज दीपचंदजी सेठिया के मकान में विराज रहे थे। धनराजजी पुगलिया आए। उन्होंने वीडीओ कैसेट दिखाने की योजना बनायी। आचार्यप्रवर के कुछ कार्यक्रम तथा लन्दन की कुछ स्मृतियां—जहां वे रहते हैं—दिखाना चाहते थे। कुछ भाई-बहनों के साथ हम भी वहां थे। हमारा वैसे बैठने का स्थान भी वही हाल था। धनराजजी कैसेट-चित्र दर्शन के साथ-साथ लन्दन के स्थान विशेष के परिचय बता रहे थे। बीच में कुछ राजस्थानी वैवाहिक रीति-रिवाज के चित्र भी आए।

किसी कारणवश कोई भाई बाहर गया। रास्ता खुला कि धक्का मारकर चन्दनमल चंडालिया (सरदारशहर) भीतर घुस आया। बिना इजाजत भीतर आना सबको अखरा। वह पूछकर भी आ सकता था। वह निरवद्य आग्रही संघ का सदस्य है। आग्रही भी नाम के अनुरूप ही है। वह आया, इसमें न हमने एतराज किया, न किसी भाई ने। थोड़ी देर बाद वह अंट-संट बोलने लगा—'क्या यही है साधु की संयम-साधना? कल्पता है सिनेमा देखना? चौमासिक प्रायश्चित्त आता है। तेरापंथ और आचार्य भिक्षु के नाम पर बट्टा लगा दिया आप लोगों ने। ये श्रावक साधुओं को डुबोने वाले हैं! महापाप! महापाप।'

कुछ लोग उबल पड़े। वह चिल्लाकर कहे जा रहा था—'अभी कालूगणी होते तो?'

दुतरफी उत्तेजना बढ़ती देख भाईजी महाराज ने फरमाया—चनणू! उत्तेजना तो पाप है ही। अब ज्यादा बोलने से काम बढ़ेगा। जात जताने से फायदा? (उसकी जात चंडालिया है। चंडाल-क्रोध) मसाला प्रचार करने को तेरे हाथ लग गया है, अब क्यों बोलता है?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'चम्पक' काम बढ़ैला चनणूं, जग मैं जता न जात।
लवै अबै क्यूं लागगी, खरची थारै हाथ॥'

उसकी बोलती बंद हो गयी। हम सब हंस पड़े।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७२

सामाजिक एकता का रूप

सालासर—जयपुर मूल सड़क से तीन किलोमीटर भीतर जूटवाड़ा कोल्ड स्टोरेज है। सुजानगढ़ का सेठिया परिवार, सर्व-सम्पन्नता के साथ शालीन, सामाजिक भावनाओं से ओत-प्रोत, आस्थाशील और धर्मानुरागी रहा है। सेठिया रूपचंदजी तो अपनी कोटि के एक ही श्रावक थे। उनका त्याग, वैराग्य, विनय, विवेक और व्यवहार जीवित आदर्श था। उनके परिवार में धार्मिक लगन कोई आश्चर्य जैसा नहीं है। विमलजी की मां (धर्मपत्नी तनसुखलालजी सेठिया), कोठारी जुगराजजी चूरू तथा श्री सायर कोठारी का अत्यन्त आग्रह था। आचार्यप्रवर का एक दिवसीय प्रवास उनके यहां हो। श्री भाईजी महाराज उनकी ओर से वकालत कर रहे थे। भला, जिस काम को भाईजी महाराज हाथ में ले लें उसे तो पूरा होना ही था।

ससंघ आचार्यप्रवर झूठवाड़ा पधारे। संघ के आगमनपर हर्ष-विभोर सेठिया परिवार फूला नहीं समा रहा था। आचार्यश्री के दर्शनार्थ आए बिरादरी के भाईयों की आव-भगत चित-चाव से हुई। भोजन-व्यवस्था के साथ-साथ तीनों समय नाश्ता-चाय और यथेच्छ ठंडा पेय भी दिया।

यों तो झूठबाड़ा जयपुर का ही एक उपनगर है। पर जहां हम कोल्ड स्टोरेज में ठहरे हैं यह बस्ती के अंतिम छोर पर है। स्थान बहुत सुरम्य है। यहां से आगे केवल खुला मैदान है। कल फिर हमें सालासर सड़क चौराहे तक पुनः जाना पड़ेगा। सड़क बहुत खराब है। कहना तो यों चाहिए सड़क केवल नाम मात्र के लिए है। केवल कंकरीट, वह भी ऊबड़-खाबड़।

आने वाले जयपुर के नागरिकों तथा आगुन्तक यात्रियों के मनों में आज की आवभगत का बड़ा असर रहा। अब तक जो संघीय भाईचारे का अभाव अखरता रहा। दर्शनार्थी भाई-बहनों ने बार-बार यही चर्चा चलायी, भ्रातृत्व भाव का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विकास अपेक्षित है। आज हमें एक दिशा-दर्शन मिला है। मुनिश्री ने फरमाया—

'भाई भाई रै घरै, आवै मोटे भाग।
'चम्पक' भगती-भाव स्यूं, बधै धर्म-अनुराग ।।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७३

जैन एकता का एक नमूना

मोती डूंगरी पर शौचादि कार्य से निवृत्त हो हम पुनः राजस्थान होटल पहुंचे। बिहार की तैयारियां हैं। आज नगर-प्रवेश है। शोभायात्रा और नागरिक अभिनन्दन में लोग बड़े चाव से लगे हुए हैं। स्थान-स्थान पर तोरण-द्वार सजे हैं। व्यक्तिगत द्वारों पर व्यक्तिशः अभिनन्दन पट्ट लगे हैं। संस्थागत तोरणों पर संस्थाओं के पट्ट अंकित हैं। अनेक स्थानों पर प्रतिष्ठानों के द्वारा अभिनन्दन लिखित पट्ट हैं।

शोभा-यात्रा में भजन मंडलियां बड़ी तन्मयता से स्वागत गीत गा रही हैं। छात्र-छात्राएं, कन्या-मंडल, किशोर-मंडल, महिला-मंडल और युवक-मंडल अपने-अपने गणवेश में पंक्तिबद्ध चल रहे हैं।

त्रिपोलिया होकर ज्यों ही हम बड़ी चोपड़ पर पहुंचे। देखा, जोहरी बाजार का भव्य दृश्य सामने था। ऐसा लगता था जन-जनार्दन उमड़ पड़ा है। भीड़ में केवल आदमी ही आदमी नजर आ रहे थे। जौहरी बाजार के छज्जे, छत्तों और गोखे-झरोखे दर्शनोत्सुक महिलाएं और बच्चों से झुके जा रहे हैं। जीया बैंड अपनी छत पर पूरी मंडली के साथ स्वागत-धुन प्रस्तुत कर रहा है। पूरा बाजार जुलूसमय बन गया है। हजारों-हजारों जैन बन्धु आज साम्प्रदायिक भेदभाव भूलकर एक जैनाचार्य का अभिनन्दन करने एकरस हो रहे हैं।

बापू-बाजार तो हद ले गया। वे लाल-सुरख स्वागत पट्ट (बैनर्स) बाजार भर में लहरा रहे हैं। सभी का मिला-जुला उत्साह जयपुर के पूरे वातावरण को प्रभावित कर रहा है। शोभा-यात्रा रामलीला मैदान के पंडाल में जनसभा बन गयी। मंच पर आचार्यप्रवर आसीन हुए। एक ओर श्रमण-श्रमणी परिवार विराजमान है। जननेताओं और राजनेताओं के साथ-साथ जयपुर नगर की ओर से भूतपूर्व नरेश करनल सवाई भवानीसिंह स्वयं उपस्थित हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री भाईजी महाराज को इन सामूहिक कार्यक्रमों में बड़ा रस है। वे जैन समाज को यों एक मंच पर खड़ा देख फूले नहीं समाए। उन्होंने एक पद्य के माध्यम से अपने समर्थन को व्यक्त किया—

'चम्पक' जैन समाज को, गूंजे गौरव गान।
पड्यो सामने प्रेम रो, फल चौड़े चौगान॥'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७४

क्या दुःखता है ?

आचार्यप्रवर का प्रवास सौराष्ट्र-गलीचे वालों की हवेली (मोती सिंह भोमिये का रास्ता) में हुआ है। गोलछा परिवार जयपुर का मान्य घराना है। हमारे संघ के साथ इस परिवार का अच्छा-खासा सम्बन्ध है। अवश्य ये तेरापंथी नहीं हैं, पर बहनों, बेटियों और सगे-संबंधियों के सम्पर्क ने एक-दूसरे को इतना नजदीक ला दिया है, पता नहीं चलता। कुछ संत हवेली के ऊपरी कक्षों में बैठे हैं। हम दरवाजे के दाहिने हाल में और आचार्यप्रवर बांये हाथ के कमरों में विराजते हैं। पंडाल दरवाजे की ऊपर वाली छत पर है। आचार्यप्रवर का रात्रिकालीन विश्राम भी पंडाल में ऊपर ही रहा। मौसम एकदम बदल गया है, यों तो अभी चैत्र का महीना है पर गरमी जेठ जैसी है।

कल का अवशिष्ट स्वागत कार्यक्रम आज पुनः वहीं रामलीला मैदान में रख दिया है। भाईजी महाराज वहां नहीं पधार सके। मोतीडूंगरी तक घूमकर आने के बाद थकान आ गयी है। शरीर में दर्द काफी है। कुछ देर उदास-से किसी चिन्तन की गहराई में विराजे रहे। सोने की इच्छा हुई। मुझे (श्रमण सागर को) आवाज दी। मैं तकिया लेकर गया। बिछौना लगाकर मैंने सहजभाव से पूछा—क्यों भाईजी महाराज ! क्या दुःखता है ?

मुझे क्या पता दुःखन कहां से कहां पहुंच जायेगी। श्री भाईजी महाराज ने फरमाया—'दुःखता क्या है ? क्या बताऊं ? यह दिल दुःखता है। यह दिन दुःखता है। अफसोस है, सैकड़ों मील साथ-साथ चलकर आया और पंडाल तक भी नहीं जा सका। बस, यही कमजोरी दुःखती है।'

'ताकत राखी काल तक, थांभण नभ भुज-थंभ।
पड़ूं पड़ूं चम्पक पड्यो (ओ) दुखे देहरो दंभ।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५७

पक्षीय उफाण

महावीर जयन्ती समारोह में सम्मिलित होने वाले यात्रियों का आगमन प्रारम्भ हो गया है। निवास आदि के लिए स्थान जयपुर शहर देखते हुए तो ठीक ही है पर मच्छर और गंदगी से भी अधिक परेशानी है संकीर्णता की। अभी से यात्रीगण उकता गये हैं। यहां की आवास व्यवस्था समिति ने प्रति व्यक्ति एक रुपया रोज किराया लगाया है। एक-एक कमरे में पचास-पचास आदमी ठहरे हैं। आखिर शहर है। स्थान की दिक्कतें तो हैं ही। शहरों में स्थान खाली मिलते कहां है ?

आने वाला हर यात्री भाईजी महाराज के पास पहुंचता है। सुख-दुःख की शिकायत का महकमा भी तो यही है। हम सुन रहे हैं, श्री भाईजी महाराज यात्रियों को आश्वासन देते हैं। शहरी कठिनाइयां बताते हैं। संयम से काम लेने को कहते हैं, और समझाते हैं—भाई ! हमारा तो मार्ग ही संकडाई का है।

आज कुछ लोग सबरे-सबरे आये और कहने लगे—गरीबनवाज ! आपके राज में जयपुर वालों ने लूट मचा रखी है। व्यवस्था के नाम पर व्यापार खोल लिया है। वे कमरे, जहां हमें उतारा गया है, तीन-तीन रुपया रोज पर किराये लिए गये हैं और हमसे पचास-पचास, चालीस-चालीस और किसी-किसी से तीस-तीस लिये जा रहे हैं। यह तो सरासर अन्याय है। यदि इतनी ही क्षमता नहीं थी तो ये क्यों लाये आचार्यश्री को ? भाईजी महाराज ! ऊपर से ये लोग हमें शहरी धौंस और दिखाते हैं और कहते हैं—क्यों आये आप ? किसने पीले चावल दिये थे। दुःख भरे शब्दों में, जो आया, वे बोलते गये।

श्री भाईजी महाराज ने फरमाया—भाई ! यात्रा की खिन्नता के बाद यहां आते ही परेशानी हो तो मन में आये बिना नहीं रहती। वे भी तुम्हारे ही भाई हैं। व्यवस्था करने वाले विचार कर रहे हैं। जरा तुम भी धीरज से काम लो। धीरे-धीरे जमते-जमते सब व्यवस्थाएं जमा करती हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक व्यवस्था कार्यकर्ता से बात कर मुनिश्री ने उन्हें धीरज तथा सहानुभूति से काम लेने को कहा। उसने उसे उलटा माना। वे महाशय उबल पड़े। बोलते-बोलते यहां तक कह गये—आप लोगों का हस्तक्षेप ही तो सारा काम बिगाड़ता है। यात्रियों को आप सिर चढ़ा रहे हो। मैं जानता हूं, आप अमुक-अमुक व्यक्तियों का पक्ष ले रहे हैं। वे हमारी सारी व्यवस्था बिगाड़ने पर तुले हुए हैं।

यात्रीगण कह रहे थे—भाईजी महाराज! आप पधारकर मुलायजा फरमाओ। ८-१० फीट के कमरे में हम ५० आदमियों का सामान भी नहीं रखा जाता। हम सारे बाहर पड़े हैं। नापसन्द स्थान, इतना भारी किराया और ऊपर से इतनी हुकूमत। संतोष कर तो लें, पर हो कैसे? कहीं हद भी तो होती है। ये जब आपसे यों बोलते हैं, हमारी तो चिकारी ही क्या है? मेवाड़ी भाई की आंखें गीली हो गयीं।

भाईजी महाराज के मन पर थोड़ा-सा असर आया। असर आना सहज था। वह कार्यकर्ता अविवेक से बोले ही जा रहा था। मुनिश्री ने कहा—मैं तो तुम्हारी बदनामी न हो, इसलिए कहता हूं, तुम भले मुझे सुराणाजी का मानो या दूगड़जी का, मैं तो सबका हूं। ये आने वाले यात्री गांव-गांव में तुम्हारी व्यवस्था भांडेंगे। तुम अपनी धारणा बदल दो। मैं किसी पक्ष से नहीं, हित की दृष्टि से तुम्हें कह रहा हूं। यदि तुम्हारी यही इच्छा है कि मैं न बोलूं तो कोई बात नहीं, आइन्दा नहीं कहूंगा, पर आने वाले लोग बात बताते कैसे रुकेंगे। ये अपना दुःख-दर्द सन्तों से नहीं कहेंगे तो और कहां कहेंगे? सुनने वाले तो तुम्हारे जैसे होंगे? पर एक बात कह दूं—तुम्हारा कुछ नहीं बिगड़ेगा इस पारस्परिक मनमुटाव में, बेचारे यात्रियों का खर्च गाल है—

'पख रो 'चंपक' पादरो, उफणै इयां उफांण।
(थां) मोटोडां रे झोड़ में, (आं) नान्हा रो नुकसाण॥

२२ अप्रैल १९७५ जयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७६

कहां वे ? कहां हम ?

जयपुर नगर में आज महावीर जयन्ती की धूम-धाम है। प्रभात जागरिका गली-गली में घूम-घूमकर जयन्ती का उद्घोष कर रही है। भगवान महावीर का सन्देश स्थान-स्थान पर दुहराया जा रहा है। सामूहिक कार्यक्रम रामलीला मैदान में है।

जैन समाज ने जयन्ती-यात्रा का आयोजन किया है। विविध वाद्यों, साजों—हाथी-घोड़ों-रथों के साथ-साथ नानां झाकियां सजाई गयी हैं जिनमें भगवान महावीर के जीवन-वृत्त प्रदर्शित किये हैं। इस मील भर लम्बे भव्य जयन्ती-जुलूस में हजारों-हजारों जैन श्रावक सम्मिलित हुए हैं। सभी साम्प्रदायिक मतभेदों को भुलाकर लोग कंधे से कंधा मिलाकर एक जुट हो गये हैं। स्थान-स्थान पर स्वागत के विभिन्न आयोजन हैं। ठंडे पेय पदार्थों से आवभगत कर भाई-चारे को मूर्तरूप दिया जा रहा है। आचार्यश्री ठीक समय पर पंडाल में पधारे। अभी जयन्ती-जुलूस जवेरी बाजार में है। पूरे बापू बाजार को भगवान महावीर के संदेश-पट्टों से छा दिया है। घर-घर दुकान-दुकान पर पंचरंगे जैन-ध्वज लहरा रहे हैं।

कार्यक्रम पंडाल में प्रारम्भ हो गया है। अभी शोभा-यात्रा का पिछला छोर जवेरी बाजार में है। पंडाल खचा-खच भर गया है। बैठने को स्थान नहीं है। चारों ओर की कनातें खोल दी गईं। फिर भी जनता धूप में खड़ी है। श्रमण भगवान महावीर को सभी भावभीनी श्रद्धा अर्पित करने के लिए उत्सुक हैं। राजस्थान प्रांतीय महावीर २५वीं निर्वाण शताब्दी समिति की ओर से आज का आयोजन है। संयोजन संपतजी गधैया ने किया। कार्यक्रम खूब लम्बा हो गया है। १२ बजने को हैं। जब हम पंडाल से बाहर आये तब जमीन पैरों को सेकने लगी। सन्त धूप से बच-बचकर चल रहे थे और भाईजी महाराज ने फरमाया—कहां वे ? कहां हम ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तपी तपस्या तीव्रतम, महामना महावीर।
तपग्यो 'चम्पक' तावड़ो, ओ मन बण्यां अधीर।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७७

पोथी क्या पढ़ूं

१०-११ बज गये हैं। कमरा नं० ११० हमें साफ सफाई के बाद मिल गया है। धर्मचन्द सुराणा (चूरू) सुबह से हमारे यहां बैठे हैं। वे पूरी व्यवस्थाएं बिठाकर ही जाना चाहते हैं। भाईजी महाराज का बिस्तर लगा दिया है। डॉक्टरों ने पुनः शारीरिक जांच की। रक्तचाप, नाड़ी का दबाव, गरमी और फेफड़ों का परीक्षण किया। शल्यक्रिया पसलियों पर पसवाड़े में होनी है, अतः सीने और बगल के बाल निकाल कर सफाई करने को कहा है।

धर्मचन्द सुराणा की उपस्थिति में हमने सारा काम किया। अब मुझे (श्रमण) आहार करने मार्बल-भवन जाना है। भाईजी महाराज अकेले ही यहां बिराजेंगे। मैंने एक पुस्तक और चश्मा निवेदन किया और कहा—आप पुस्तक पढ़ें इतने में मैं वहां जाकर आ रहा हूं। मैं चला गया। लौटकर आया तो देखा, भाईजी महाराज गुमसुम किसी चिन्तन में बैठे हैं। मैंने सोचा मन नहीं लगा होगा। क्योंकि सदा चलह-पहल में रहने वाले को एकान्त अटपटा-सा लगता है। मैंने पूछा—क्यों, पुस्तक नहीं पढ़ी आपने ?

भाईजी महाराज ने फरमाया—

पोथी सागर ! के पढ़ूं।
समझ लियो मैं सार॥
प्रेम भाव रा पाधरा,
'चम्पक' अक्खर च्यार॥

२८ अप्रैल, १९७५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७८

अर्थ अपने-अपने

जयपुर का चातुर्मास सम्पन्न कर पूज्य गुरुदेव फतहपुर पधारे। भाईजी महाराज के जन्मदिन पर आचार्यप्रवर ने सबसे पहली बार बधाई दी। कौन जानता था कि यह भाईजी से मिलने वाली अंतिम बधाई होगी। न जाने क्यों आचार्यवर ने फरमा दिया 'यशोविलाश का पुनरावलोकन पूरा हो गया है, अब 'लाडांजी' का जीवन चरित्र लिखकर 'माजी' का व्याख्यान बनाना है। फिर आपकी भी तो तैयारी करनी हो होगी।' यह कौन जानता था, सहज निकला शब्द यों चरितार्थ हो जाएगा।

श्री भाईजी महाराज ने कृतज्ञता ज्ञापन के बाद कहा—आज विहार तो करना है पर शनिवार है, करूं कि न करूं? दुविधा है।

आचार्यप्रवर ने फरमाया—आप भी बहमी हो गये। सुखे-सुखे विहार करो, हम भी आ रहे हैं पीछे के पीछे!

ज्योंही हमने विहार किया, शकुन ठीक नहीं हुए। भाईजी महाराज पुनः आजाद भवन में पधार गये। दुबारा प्रस्थान किया पर शकुन इनकार कर रहे थे। इतने में गुरुदेव पधारे। चलो ,हम भी आपको पहुंचाने चल रहे हैं। हम रवाना हुए। बहुत सारे संत और संस्था की बहनें तो कोई दो किलोमीटर तक साथ आईं। रामपुरा के पास संतों को सीख दी। उस दिन वीरमपुर रुककर हम दूसरे दिन सायंकल धानणी पहुंचे। रात को लाडनूं के कार्यकर्ता आए। व्यवस्था सम्बन्धी चर्चा भाईजी महाराज ने बाहर बरामदे में बैठकर की।

शयन से पहले मुनि मोहन लालजी (आमेट) ने लाडनूं-व्यवस्था पर तीखी टिप्पणी की। भाईजी महाराज को वह असुहावनी लगी। सुबह प्रतिलेखन के समय मोहन मुनि आये और खमत-खामणा करते हुए माफी मांगी।

अनायास ही भाईजी महाराज ने फरमाया—सागर! आज का मेरा सपना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्य है। उसका एक प्रामाणिक फलित है, मोहन के खमत खामणा।

हम सालासर के लिए चले। रास्ते में हर मील के पत्थर पर बैठ-बैठकर विश्राम लिया। एक आध जगह उजले धोरे पर भी बैठे। हर बार आज कुछ न कुछ नया निर्देश आता रहा। कुछ पुराने संस्मरण और कुछ करणीय कार्यों की हिदायतें दीं। एक बार मुझे वचनबद्ध कर शिक्षा फरमाई।

इस अवधि में मैंने स्वप्न को जानने का प्रयत्न किया। पर एक ही जमा-जमाया उत्तर रहा, तुम्हें नहीं, आचार्यश्री से मिलने पर अर्ज करूंगा।

मृगसर शुक्ला द्वादशी सोमवार को हम सालासर रहे। भाईजी महाराज ने दाढ़ी का लुंचन करवाया। दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए कहा—'सालासर के बाबा! तेरी संकलाई सही, अब लोच नहीं आयेगा।' उन दिनों नाक पर एक फुंसी थी—भाईजी महाराज ने मूंछ का बाल खींचते हुए कहा—लगता है यह फूंसी मुझे लेकर ही जायेगी! हम सबको लोच करा लेने का आदेश हुआ। सबके लुंचन हुए, केवल शान्ति मुनि बाकी रहे। मैंने कहा—हाथ दुःखने लग गये हैं, इनका लोच भी बड़ा है, कल कर लें तो कैसा रहे? मुनिश्री ने फरमाया—थोड़ा समझो! कल तुम्हें फुर्सत नहीं मिलेगी। पर हम नहीं समझे यह सब क्यों चेताया जा रहा था। शान्ति मुनि का लुंचन हुआ, वन्दना की। भाईजी महाराज जरा मुलक कर बोले—अच्छा किया, देखो! तुम्हें मेहनत तो पड़ी पर कल समय नहीं मिलेगा, मैं ठीक कहता हूं।

रात को रक्तचाप बढ़ा। तबीयत खराब हुई। सन्तों ने सालासर ही रुकने का निवेदन किया। भाईजी महाराज बोले—नहीं, मुझे आचार्यश्री से पहले लाडनूं पहुंचना है। चलना ही होगा।

लाडनूं के स्वयंसेवक आये। पूरी धर्मशाला का स्थान निरीक्षण किया। व्यवस्था समझाई। सन्त यहां रुक सकेंगे। आचार्यप्रवर का विराजना यहां ठीक जमेगा। जनता के बैठने का स्थान यहां उपयुक्त बैठेगा। स्वयंसेवकों से बात करते-करते भाईजी महाराज धर्मशाला के दरवाजे के बाहर पधार गये और आवाज दी—सन्तों! मैं तो चलता हूं। तुम उपकरण लेकर आ जाना।

हमने विहार किया। अभी सालासर पानी की टंकी तक ही नहीं पहुंचे थे कि सांस फूल गया। दुकान की बेंच पर बैठे, फिर चले। पर चला नहीं जा रहा था। समुद्र के किनारे तक धरती नापने वाले पांव आज पांच मील का रास्ता काटते जवाब दे गये। कलकत्ता से बम्बई और पंजाब से मद्रास तक चलने वाले कदम आज क्यों थके, पता नहीं। जो साहस दंडकारण्य और विंध्य की घाटियां पार करते नहीं टूटा, वह आज विश्वास छोड़ने लगा। ऊटी जैसे आठ हजार फीट की ऊंचाई चढ़ते तो दम नहीं फूला, वह आज अपनी जन्मभूमि की कांकड में आकर फूलने लगा। भाईजी महाराज दस-बीस कदम चलते-बैठते फिर चलते फिर बैठते। बार-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बार सड़क पर चलते, रुकते, सोते, बैठते, रास्ता काट रहे थे।

मंगलवार हनुमान बाबे का दिन। आचार्यप्रवर का सालासर पधारना। सैकड़ो-सैकड़ों लोगों का आवागमन। कारों, बसों और मोटरों के यात्री उतर-उतर कर दर्शन करते। स्थिति पूछते। परामर्श देते। सालासर जाते और आचार्यश्री से निवेदन करते।

हमने पांच मील का रास्ता पांच घण्टे में पार कर प्याऊ में विश्राम लिया। वहीं रुकने का आदेश आया। आचार्यश्री ने मिलने का निर्णय लिया। भाईजी महाराज ने पुनः निवेदन करवाया—आप अपना कार्यक्रम यथावत् ही रखायें। मैं यहां से डेढ किलो मीटर धां गांव सायंकाल जाना चाहता हूं, कल लाडनूं पहुंचना आसान रहेगा।

आज दिन में सैकड़ों आते-जाते यात्रियों ने दर्शन किये। सेवा कराई। बातचीत की। विश्राम लेकर उठते ही मुझसे कहा गया—एक कागज-कलम देना तो। मैंने कहा—क्यों भाईजी महाराज ? उन्होंने फरमाया—तू दे तो सही। मैंने एक कागज की स्लीप और डॉट पेन निवेदन किया। उन्होंने कुछ लिखा, कागज समेट, मोड़कर अपने चादर के पल्ले बांध लिया।

विहार किया। वह एक मील का रास्ता सो कोस बन गया। एक ओर मणि मुनि और दूसरी ओर मैं दोनों के कंधों का सहारा लिये 'धां' पहुंचे। चबूतरे पर विराजे। अब कुछ नहीं था। सर्व सामान्य। रोजमर्रा की तरह बातें हो रही थीं। थानमलजी बाफणा (सुजानगढ़) पास बैठे चर्चा कर रहे थे। डॉ० व्यास ने जब सुना, भाईजी महाराज के आज असाता है, वे सुजानगढ़ से आये। पूरी चेकिंग की सब कुछ सामान्य था।

भाईजी महाराज ने डॉ० व्यास का हाथ पकड़कर कहा—डॉक्टर ! जैसे-तैसे मुझे लाडनूं पहुंचा दो।

डॉक्टर व्यासजी हैरान थे। आज यह वज्र-सा मनोबल ढीला क्यों पड़ा ? उन्होंने कहा—भाईजी महाराज ! आज यह कमजोरी की बात आपके मुंह से कैसे ? विश्वास कीजिये, मैं लाडनूं पहुंचा दूंगा। पर एक इन्जेक्शन ले लीजिये।

भाईजी महाराज ने कहा—डॉक्टर ! अभी तो सूर्यास्त का समय हो गया है, मैं इन्जेक्शन नहीं ले सकता।

बात कल सुबह पर रही। रात को साढ़े आठ बजे डॉक्टर गुहिराला लाडनूं से आये। सब कुछ ठीक-ठीक था। केवल कलेजे पर जलन महसूस हो रही थी। शायद एसिडिटी बढ़ी हो।

शयन के समय फतहपुर वाले सोहन लालजी रायजादा अचानक झुंझलाकर बड़बड़ाते हुए उठे—'हे देवी-देवताओ ! आज के हो गयो थांरै ? आके सूझे है ?' हमने पूछा क्या बात है ? वे यह कहते हुए बाहर चले गये—नहीं, नहीं, महाराज !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आप तो सुखे-सुखे पोढ़ो।

और सुबह ९-१० बजते-बजते श्री भाईजी महाराज का हार्ट बन्द हो गया। पौ फट गई। सुबह होते-होते अंधेरा छा गया। जिसने भी सुना, विश्वास नहीं हुआ। राजस्थान रेडियो ने बार-बार प्रसारण किया। दिल्ली ऑल इंडिया रेडियो ने समाचारों के बीच सूचना दी—'भाईजी महाराज नहीं रहे।'

दाह-संस्कार उनकी जन्मभूमि लाडनूं में करना तय हुआ। जिसने भी सुना, जिसे जो साधन मिला, रात भर में हजारों लोग कलकत्ता, बम्बई, अहमदाबाद, पंजाब और मद्रास व बैंगलोर दूर-दूर से पहुंचे। लाडनूं की भीड़ भरी हर गली और हर जबान सूनी-सूनी थी। प्रत्येक मिलने वाला भीगी आंखों से बात करता था। बाजार बन्द हो गये। संस्थाओं ने स्मृति-सभा के बाद अवकाश घोषित किया। झंडे झुका दिये गये। ठेले वालों ने ठेले नहीं लगाये। सब्जी वालों ने सब्जी नहीं बेची। यहां तक उस दिन मुसलमान भाइयों ने (सिलावटों ने) पत्थर पर छैनी-हथौड़ी नहीं चलाई।

श्री भाईजी महाराज का पार्थिव शरीर लाडनूं पहुंचा। पूज्य गुरुदेव सुजानगढ़ रुककर दूसरे दिन मध्याह्न लाडनूं पधारे। सैकड़ों-सैकड़ों बहिर-विहारी साधु-साध्वियों के परिवार में स्मृति सभा के बाद जैन विश्व भारती के प्रांगण में दाह-संस्कार सम्पन्न हुआ।

उनके वस्त्रों को बदलते समय श्री सागर मलजी कोठारी (भाईजी महाराज के मामा के लड़के-भाई) को वह चिट्ठ चद्दर के पल्ले बंधी मिली। उसमें लिखा था—

'चम्पक' चवदस च्यानणी, याद रहेला रोज।
सालासर की साखस्यूं, जा सागर! कर मोज॥'

अर्थ अपने-अपने हैं। यह उस सागर से कहा गया या इस सागर से? हम दोनों एक ही परिवार से जो हैं।

□□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org